THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL LIBRARY

OU_176542

UNIVERSAL LIBRARY

सत्यं

अनुरागसागर ।

(कबीरदर्शन ग्रन्थमालाकी द्वितीय मणिका)

कबीराश्रमाचार्य स्वामी श्रीयुगलानन्द विहारीद्वारा संपादित ।

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,

मालिक-" लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर " स्टीम् प्रेस,

कल्याण-बंबई.

संवत् १९९२, शके [redacted]८५७.

1936.

मुद्रक और प्रकाशक-
गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
मालिक-"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस, कल्याण--बम्बई.

सन् १८६७ के आक्ट २५ के मुजब रजिष्टरी सब हक
प्रकाशकने अपने आधीन रक्खा है.

सत्यं

प्रस्तावना ।

अनुरागसागर आजतक लखनऊ, पटना, काशी-नरसिंहपुर और बम्बईमें भिन्न भिन्न रूपसे छपचुके हैं । जिनमेंसे अन्तिम बार बम्बईमें जो ग्रन्थ छपा है वह मेरे नामसे छापा गया है । क्योंकि, वह ग्रन्थ मैंनेही 'श्रीवेंकटेश्वर' प्रेसाध्यक्षको दिया था । यद्यपि इसके मुद्रणके आरम्भमें मेरे पास इस ग्रन्थकी १३ हस्तलिखित प्रतियां उपस्थित थीं, तथापि प्रेसवालोंकी शीघ्रताके कारण उसे पूर्णरूपसे सब प्रतियोंद्वारा शुद्ध करनेका अवसर नहीं मिलसका, इसलिये विशेष स्थानोंपर अन्य ग्रन्थोंके साथ मिलाकर छपनेको देदिया था । यही कारण है कि, उसकी प्रस्तावना भी लिखी न जा सकी ।

किन्तु उस समय भी उपर्युक्त १३ प्रतियोंको देखनेका अवसर मिलनेसे मुझे ज्ञान होगया कि, उन तेरहों प्रतियोंमें परस्पर बहुतही विभिन्नता है । इससे किसी शुद्ध और पुरानीसे पुरानी प्रतिकी खोजमें मैं लगगया । जिसका परिणाम यह हुआ कि, छपी और हस्तलिखित सब मिलाकर इस समय ४६ प्रतियां मेरे पास उपस्थित हैं, जिनका ब्योरा इस प्रकार है--

१ प्रति-जो सबसे पुरानी है, प्रमोध गुरु बाला पीरसाहबके समयकी लिखी हुई जान पडती है. क्योंकि, वंशावली लिखते हुए लिखनेवालेने वहींतक वंशोंका नाम लिखा है और वह समय भी उन्हींका था ।

२ प्रतियाँ-कमलनाम साहबके समयकी लिखी हैं, इसके अतिरिक्त
८ प्रतियाँ और भी सं. १८६० से लेकर १९३० तककी लिखी हुई मुझे अपने पिता श्रीजीके पुस्तकालयसे प्राप्त हुई थीं ।

१ प्रति–अमोलनाम साहबके समयकी लिखी है, जो गया जिलेके किसी सन्तकी लिखी हुई है।

१ प्रति–सुरतसनेही नाम साहबके समयकी लिखी है, जो खास सिघौंडीमें बैठकर लिखी गयी है, जो मुकाम सहराँव पो० कांथा जि० उन्नावके कबीरपंथी सेवक आसादीन तम्बोलीसे मिली थी, जिसके वंशमें कई पीढीतक महन्ती चली आयी थी।

५ प्रतियाँ–पाकनाम साहबके समयकी लिखी हुई हैं।

८ प्रतियाँ–प्रगटनाम साहबके समयकी लिखी हैं, जिसमें १ तो धीरजनाम साहबकी प्रधान धर्मपत्नी श्रीरानीसूरजकुवर साहबाके हाथकी लिखी हुई है।

९ प्रतियाँ–प्रगटनाम साहबके पश्चात्‌की लिखी हैं जिनमेंसे ४ प्रतियोंमें वंशावली धीरजनाम साहबतक और शेष ५ में पं० श्रीउग्रनाम साहबतक लिखी हैं, इसीमें १ प्रति वह भी है जो कबीरधर्म नगरके कबीरधर्मप्रकाशमें छपनेके लिये लिखायी गयी थी किन्तु छप नहीं सकी।

१ प्रति–बांधोगढ सिलौंडी स्थानके वंशगुरु गोसाईं मधुकर नाम साहबके पुत्र श्रीगोपालदासजीके हाथकी लिखी है, जो मुकाम कसबा जि० पूर्नियाके महन्त श्रीहरिचरणदासजी साहबने कृपा करके ग्रन्थ छपते समय भेज दिया था।

२ प्रतियाँ–छपरा जिलेके बांधोगढके अनुयायी महन्तोंकी लिखी हैं।

२ प्रतियां–जागूसाहबके घरानेवालोंकी लिखी हुई हैं और

१ प्रति काशीके अनुयायी किसी साधुने महन्त रंगूदासजीके समय लिखी थी वह है। शेष–

५ प्रतियाँ–पांच स्थानोंकी छपी हुई प्रतियाँ हैं।

इस प्रकार इस ग्रन्थके संशोधन समय ४६ प्रतियाँ मेरे पास उपस्थित थीं। यदि इन प्रतियोंकी परस्पर विभिन्नताके विषयमें जो कुछ मैंने नोट कर रखा है उसे यहां लिखने लगजाऊँ तो एक अच्छी पुस्तक तैयार हो जायगी इसलिये मैंने विचार किया है कि "अनुरागसागरकी भूमिका" नामकी एक पुस्तक अलगही लिखकर पाठकोंकी भेंट करूँगा।

तथापि इतना तो अवश्य कहे विना नहीं रहा जाता कि, इन-४६ प्रतियोंकी परस्पर विभिन्नताके कारण, एकएक विषयको देखनेके लिये कभी तो कुल ४६ प्रतियोंको उलटना पडता था, कभी एक विषयको जाननेके लिये समूचे ग्रन्थको ही पढ जाना पडता था और भिन्नभिन्न शाखा (पन्थ) वालोंने अपनी बडाई जतानेके लिये एक दूसरेकी निंदा और खण्डन मण्डन लिखे हुए हैं ऐसे स्थानोंपर कई कई दिनोंतक विचार करना पडता था। जिसका विशेष वृत्तान्त जाननेके लिये उपर्युक्त भूमिकाको अवश्य देखना चाहिये, इस प्रकारसे कई महीनोंके कठिन परिश्रमसे सब ग्रन्थोंको मिलाकर मैंने यह ग्रंथ ठीक किया है।

यद्यपि मेरे परिश्रमका फलस्वरूप यह ग्रन्थ ऐसा सुन्दर और इतना बडा हुआ है कि, आजतक किसी भी मठ मकान और स्थानके साधु, संत, महन्त और आचार्यके पास इसके जोडका ग्रन्थ मिलना असम्भव है, तथापि जिन ग्रंथोंके द्वारा शुद्ध और मिलान करके यह ग्रन्थ छपाया गया है, उन ग्रंथोंकी परस्पर विरोधताको देखकर मेरा मन परस्परके ऐसे स्वार्थसाधक खण्डन मण्डनवाले ग्रन्थोंसे घबरा उठा है और मैं इस बातकी खोजमें हूँ कि इन प्रतियोंसे भी पुरानी प्रति मिले तो उससे फिर इसे शुद्ध करूं।

कबीरधर्मनगर दामार खेडा
१८-४-१९१४
वैशाखवदि ८ सं० १९७१ वि.

भवदीय-
कबीराश्रमाचार्य स्वामी-
श्रीयुगलानन्द विहारी.

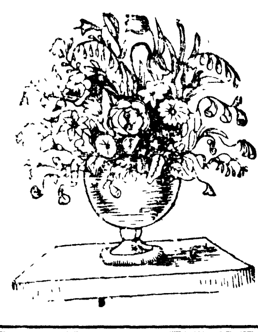

सत्यनाम.

अनुरागसागरकी विषयानुक्रमणिका।

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
सद्गुरुस्तुति	१	श्रवणवशीकरण	८
सद्गुरुस्तुति पञ्चश्लोक	२	नासिकावशीकरण	,,
ग्रन्थारम्भ मंगलाचरण	३	जिह्वावशीकरण	,,
गुरुदेव पूर्ण है	,,	शिश्नवशीकरण	९
अधिकारी कौन है ?	,,	कामवशीकरण	,,
बिना अनुराग वस्तुको पा नहीं सकते	४	कामदेव लुटेरा है	,,
अनुरागीके लक्षण विषय प्रश्न	,,	काम लुटेरेसे बचनेका उपाय	,,
अनुरागीके दृष्टान्त	,,	अनलपक्षीका दृष्टांत	,,
मृगाका दृष्टान्त	,,	साधु अनलपक्षी समान कब होता है ?	१०
पतंगका दृष्टान्त	,,	ऐसे साधुको गुरु क्या देते हैं?	,,
सतीका दृष्टांत	,,	अविचलधामकी प्राप्ति किससे होती है?	,,
तत्वानुरागीके लक्षण	५	नामध्यानमाहात्म्य	,,
कालसे कौन छुड़ा सकता है ?	,,	नाम पानेवालेको क्या मिलता है ?	,,
सद्गुरु क्या करता है ?	,,	सारशब्द क्या है ?	११
अविचल देशको कौन पहुँच सकता है ?	६	सारशब्द (नाम) जपनेकी विधि गुरुगमभेद	,,
अधिकारीकी दुर्लभता	,,	धर्मदासका आनन्दोद्गार	,,
मृतक किसे कहते हैं ?	,,	धर्मदासकी अधीनता	१२
मृतकके दृष्टांत	,,	सृष्टि उत्पत्तिविषयप्रश्न	,,
भृङ्गीका दृष्टांत	,,	सृष्टिके आदिमें क्या था ?	१३
भृङ्गीभावकी प्राप्ति कैसे होती है ?	७	सृष्टिकी उत्पत्ति सत्पुरुषकी रचना	१४
हंस कौन है	,,	सोलह सुतका प्रगट होना	,,
मृतकके और दृष्टांत	,,	निरञ्जनकी तपस्या और मानससरोवर तथा शून्यकी प्राप्ति	१५
पृथ्वीका दृष्टांत	,,	सहजका निरञ्जनके पास जाना	१६
ऊखका दृष्टांत	,,	निरञ्जनको सृष्टि रचनाका साज मिलनेका वृत्तान्त	१७
मृतकभाव कौन धारण कर सकता है?	८	सहजका लोकको जाना	,,
मृतक ही साधु होता है	,,	पुरुषकी आज्ञा सहजसे	,,
साधु किसे कहते हैं ?	,,		
चक्षुवशीकरण	,,		

विषय.	पृष्ठ.
सहजका धर्मरायके निकट जाकर पुरुषकी आज्ञा सुनाना	१८
निरञ्जनका कूर्मके पास साज लेनेके लिये जाना	,,
बहुरि पुरुषका सहजको निरञ्जनके निकट भेजना	१९
सहजका निरञ्जनके निकट पहुचना	२०
अद्याकी उत्पत्ति	,,
सत्यपुरुषका अद्याको मूलबीज देना	२१
पुनि सहजका निरञ्जनके ढिग जाना	,,
निरञ्जनका अद्याको निगल जाना	,,
और सत्पुरुषका उसे शाप देना	२२
सतपुरुषका जोगजीतजीको निरञ्जनके पास उसे मानसरोवरसे निकाल देनेकी आज्ञा देकर भेजना	२३
अद्या और निरञ्जनका परस्पर संभोग करना निरञ्जन वचन अद्याप्रति	,,
भवसागरकी रचना (प्रारंभ)	२५
तीन सुतको उत्पन्न कर निरञ्जनका गुप्त हो जाना। कबीर वचन धर्मदास, प्रति	२६
सिन्धुमथन और चौदह रत्न उत्पत्तिकी कथा (प्रारम्भ)	२७
प्रथमवार सिंधुमथन	२८
द्वितीयवार सिंधुमथन	,,
तृतीयवार सिंधुमथन	२९
पांच खानिकी उत्पत्ति	,,
ब्रह्माका वद पढ़कर निराकारका पता पाना	,,
अद्या और ब्रह्माका वार्तालाप	,,
ब्रह्माका हठ देखकर पितादर्शनके लिये अद्याका उसे ऊपरकी ओर और विष्णुको नीचेकी ओर भेजना	,,
विष्णुका पिताके खोजसे लौटकर पिताके चरणतक न पहुँचनेका वृत्तांत मातासे कहना और माताका प्रसन्न होना	३२
पिताकी खोजमें गयेहुए ब्रह्माकी कथा	,,
ब्रह्माके लिये अद्याकी चिन्ता	३३
गायत्री उत्पत्ति	,,
गायत्रीका ब्रह्माकी खोजमें जाना	,,
ब्रह्माको (ध्यानसे) जगानेके लिये अद्याका गायत्रीको युक्ति बताना	३४
ब्रह्माका जागकर गायत्रीपर क्रोध करना	,,
ब्रह्माका गायत्रीको झूठी साक्षी देनेके लिये कहना और गायत्रीका ब्रह्मासे रति करनेकी बात कहना	,,
सावित्री उत्पत्तिकी कथा	३५
ब्रह्माका गायत्री और सावित्रीके साथ माताके पास पहुँचना और सबका शाप पाना	३६
अद्याका ब्रह्माको शाप देना	३७
अद्याका गायत्रीको शाप देना	३८
अद्याका सावित्रीको शाप देना	,,
शाप देनेपर अद्याका पश्चात्ताप और निरञ्जनके डरसे डरना और शाप पाना, निडर होना	३९
विष्णुका गोरेसे श्याम होनेका कारण	,,
अद्याका विष्णुको ज्योतिका दर्शन करना	४०
ज्योति दर्शन रहस्य	४१
मायाका विष्णुको सर्वप्रधान बनाना	४२
अद्याका महेशको वरदान देना	४३
शाप पानेके कारण दुःखित होकर ब्रह्माका विष्णुके पास जाकर अपना दुःख कहना और विष्णुका उसे आश्वासन देना	,,
कालप्रपंच	४४

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
गायत्रीका ब्रह्माको शाप देना	४५	कबीर साहबका सत्यलोकसे चलकर निरञ्जनसे वार्तालाप करके पृथ्वीपर आनेका वृत्तांत आरम्भ	६०
जगत्की रचनाका विशेष वृत्तांत	,,	योगजीत और धर्मरायका युद्ध	६१
चार खानिकी गिनता	,,	निरञ्जनका अपने जालका वर्णन करना	६२
चौरासी लाख योनिकी गिनती	४६	निरञ्जनके जाल काटनेका हथियार	६३
मनुष्य खानि सबसे अधिक क्यों है ?	,,	हारजानेपर निरञ्जनका कबीरसाहबसे विनती करना	,,
किन किन खानिमें कौन कौन तत्त्व है	,,	कबीरसाहबका निरञ्जनसे तीन युग हारकर चौथे युगमें पंथ चलानेकी प्रतिज्ञा करना और ४२ वंशकी बात कहना	६४
सब मनुष्योंका ज्ञान एक समान क्या नहीं है ?	४७	कालका अपने बारह पंथकी बात कहना	,,
योनिप्रभाव मेटनेका उपाय	४८	कालका जगन्नाथ स्थापना करानेका वरदान पाना	६५
चार खानिके लक्षणोंकी पारख	,,	धर्मरायका कबीर साहबको धोखा देकर उनसे गुप्त भेद पूछना	६६
अण्डजखानिसे मनुष्यदेहमें आये हुए जीवकी पारख	,,	कालका कबीर साहबके जीवोंको नही छोडनेकी प्रतिज्ञा करना	,,
ऊष्मज खानिसे मनुष्यदेहमें आये हुए जीवकी पारख	४९	कबीरसाहबकी ब्रह्मासे भेट	६७
स्थावर खानिसे मनुष्यशरीरमें आये हुए जीवकी पारख	५०	कबीरसाहबका विष्णुके पास पहुचना	,,
पिण्डज खानिसे मनुष्यशरीरमें आये हुए जीवकी पारख	५१	कबीरसाहबका नागलोकमें जाना और शेषनागसे वार्तालाप	६८
मनुष्यशरीरसे मनुष्यदेहमें आनेवाले जीवकी पारख	५२	त्रिदेवके ध्यान करनेपर रामनामका प्रगट होना	,,
आयु रहते भी मृत्यु होती है	,,	सत्ययुगमें सत्सुकृत(कबीरसाहब)के पृथ्वीपर आनेकी कथा	६९
चौरासी धार क्यों बनी?	५३	धोंधलराजाका वृत्तांत	,,
मनुष्यके लिये ही चौरासी बनी है	,,	खेमसराकी वृत्तांत	,,
जीवोंके लिये कालका फन्दा रचना	५४	खेमसरीको लोकका दर्शन कराना	७०
तप्तशिलापर कष्ट पाकर जीवोंका गुहार करना और कबीर साहबका सत्पुरुषकी आज्ञासे उन्हें छुडाना	५६		
जीवोंकी स्तुति करना	,,		
जहां आशा तहां वासा	५७		
गुरुमहिमा	५८		
शुकदेवकी कथा	५९		

विषय.	पृष्ठ
टीकापूर्णेपरही लोककी प्राप्ति होती है	,,
जीवोंको उपदेश करनेका फल	७०
खेमसरीका सकल परिवार सहित परवाना लेना और उपदेश पाना	,,
त्रेतायुगमें मुनींद्र (कबीरसाहब) के पृथ्वीपर आनेकी कथा	७३
कबीरसाहबका जीवोंको उपदेश करना	७४
विचित्र भाटकी कथा लंकामें	,,
मन्दोदरीका वृत्तांत	७५
विचित्र वधूका वृत्तान्त	,,
मुनीन्द्रका रावणके पास जाना	,,
मधुकरकी कथा	७७
द्वापरयुगमें करुणामय(कबीर साहब) के पृथ्वीपर आनेकी कथा	७९
ज्ञानी और निरञ्जनका वार्तालाप	८०
रानी इन्द्रमतीकी कथा	८१
सुपच सुदर्शनकी कथा	९५
कलियुगमें कबीरसाहबके पृथ्वीपर आनेका वृत्तांत	९६
धर्मरायका बाट रोकना और कबीरसाहबका उसे परास्तकर आगे बढना	१००
निरञ्जनका कबीरसाहबसे नाम-भेद पूछना	१०१
कालका कबीरसाहबका भेद न पानेके कारण अपना पन्थ चलानेकी बात कहना	,,
जगन्नाथपुरीकी स्थापनाका वृत्तांत	,,
चार गुरुकी स्थापनाका वृत्तांत	१०४
राय बंकेजी १	,,
सहतेजी २	,,
चतुर्भुज ३	१०५
धर्मदास ४	,,
धर्मदासके पिछले जन्मोंकी कथा	१०५
कुलपति और महेश्वरी ब्राह्मणकी कथा	१०६
चन्दनसाहुकी कथा	१०७
नीमा नीरूका वृत्तांत	१०८
रतनाकी कथा	१०९
सुकृत अंशको पृथ्वीपर भेजनेका वृत्तांत	११०
धर्मदास (सुकृत अंश) का कालफन्दमें पडना	,,
सुकृतअंश (धर्मदास) को चितानेक लिये कबीर साहबका पृथ्वीपर आना	,,
कबीरसाहबका चौका करके धर्मदासजीको परवाना दना आरती विधि	११३
चौकाका साज	,,
कबीरसाहबका धर्मदासजीको उपदेश देना	११४
नारायणदासजीका कबीरसाहबकी अवज्ञा करना	११५
धर्मदासजीको नारायणदासजीके अवज्ञाका कारण कबीरसाहबसे पूछना और कबीरसाहबका गुप्त कथा कहना	,,
द्वादश पन्थका वणन	१२०
मृत्यु अन्धा दूतका पंथ १	,,
तिमिरदूतका पथ २	,,
अंध अचेत दूतका पंथ ३	,,
मनभङ्ग दूतका पंथ ४	१२१
ज्ञानभङ्ग दूतका पंथ ५	,,
मनमकरन्द दूतका पंथ ६	,,
चितभंग दूतका पंथ ७	,,
अकिलभंग दूतका पंथ ८	१२२

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
विश्वम्भर दूतका पंथ ९	१२२	नारायणदासजीके वंशोंके तरनेका उपाय	१४२
नकटा नैन दूतका पंथ १०	,,	विश्वास (श्रद्धा) का माहात्म्य	१४६
दुगदानी दूतका पंथ ११	१२३	गुरुमहिमा	,,
हंसमुनि दूतका पंथ १२	,,	विश्वासकी दृढताके लिये दृष्टांत कथन	१४७
धर्मदास साहबको नौतम अंशका दर्शन होना	१२४	अविश्वाससे हानि	,,
चूरामाणिकी उत्पत्तिकी कथा	१२५	गुरु शिष्यकी रहनी	१४८
व्यालिस वंशके राज्यकी स्थापना	१२६	गुरुभक्तिका फल	१४९
चूरामणिको कबीरसाहबका उपदेश देना	१२७	अधिकारी जीवके लक्षण	१५०
वंशका माहात्म्य	१२८	कायाकमलविचार	,,
भविष्य कथा प्रारम्भ	१२९	पट्चक्रनिरूपण	१५१
निरञ्जनका अपने चार अंशको पंथ चलानेकी आज्ञा देना	१३०	मनका व्यवहारवर्णन	१५२
चार दूतोंके नाम वर्णन	१३२	मनके फेरसे बचनेका उपाय (छंद)	,,
१ रंभ दूतका वर्णन	,,	पापपुण्यका विचार	१५३
२ कुरंभदूतका वर्णन	१३३	निरञ्जन चरित्र	१५४
३ जयदूतका वर्णन	१३५	मुक्तिमार्ग (पंथसहिदानी) वर्णन	१५५
४ विजय दूतका वर्णन	१३७	पंथकी रहनी	१५६
दूतोंसे बचनेका उपाय	१३८	वैरागी (विरक्त) लक्षण	,,
भविष्यकथन आगल व्यवहार (नाद और बिन्दवंशका निर्णय और बडाई वंशके धोखा शाखा दशहजारी इत्यादिका पूरा पूरा वृत्तांत इस आगल व्यवहारमें वर्णित है)	१३९	गृहीलक्षण	१५७
नादवंशकी बड़ाई	१४०	आरतीमाहात्म्य	१५८
गुरुमहिमा	१४१	अधिकारीप्रति आरतीका वर्णन	,,
धर्मदासजीका पुन: नारायणदासजीके उद्धारके लिये विनती करना और कबीरसाहबके उनका समाधान करनेपर उन्हें त्याग देना और कबीरसाहबका शाप	१४१	वैरागी और गृही दोनों रहनीसे तरते हैं (छन्द)	१५९
गुरुशिष्यके व्यवहारवर्णन	,,	असावधानीका फल	,,
		सावधानीका फल	,,
		कोयलका दृष्टांत	१६०
		हंस लक्षण, ज्ञानीका लक्षण	१६१
		परमार्थ वर्णन	१६२
		परम परमार्थी गऊका दृष्टांत	,,
		परमार्थी सन्त लक्षण	,,
		ग्रन्थकी समाप्ति	१६३
		ग्रन्थका सार निचोड	,,

इति विषयानुक्रमणिका समाप्त ।

सत्य नाम । सत्य कबीर ॥

सद्गुरुस्तुतिः ।

श्लोकाः ।

सत्यं ज्ञानस्वरूपं विमलमधिगतं ब्रह्म साक्षान्नृरूपं
शीर्षन्यस्ताच्छरत्नद्युतिसितमुकुटं श्वेतवासोऽभिरामम् ।
भास्वन्मुक्तावलीभिः कृतरुचिहृदयं दिव्यसिंहासनस्थं
भक्तानां पारिजातं विकसितवदनं सद्गुरुं नौम्यहं तम् ॥ १ ॥

अर्थ–सत्य और ज्ञानके स्वरूप, विमल साक्षाद्ब्रह्मको प्राप्त मनुजस्वरूप, मस्तकमें धारण किया हुआ एव हीरा आदि रत्नोंकी कांतिसे धवलित मुकुटसे युक्त, श्वेतवस्त्रोंसे अलंकृत, देदीप्यमान मोतियोंकी मालाओंसे शोभित हृदय, दिव्यसिंहासनपर विराजमान, भक्तलोगोंके लिये कल्पवृक्ष, प्रफुल्लित मुखारविंद है जिसका तिस सद्गुरुको मैं प्रणाम करता हूं ॥ १ ॥

यदङ्घ्र्यनुध्यानविधूतमोहाः सन्तो महत्त्वं शमवाप्य यंति ।
ब्रह्माऽद्वयं निर्गुणमाश्वनूहं तं सत्यनामानमहं नतोऽस्मि ॥ २ ॥

अर्थ–जिसके चरणके ध्यान करनेसे संत लोग मोहपाशसे छूटकर महत्त्व और कल्याणको प्राप्त होते हैं, उस अद्वैत ब्रह्मस्वरूप सत्यनामको मैं नमस्कार करता हूं ॥२॥

यस्याऽमलेन यशसा विशदीकृतेऽस्मिँल्लोके जनोऽज्ञतमसं तरसा विधूय । सन्तं पुमांसमधिगत्य शमेति तस्मिन् श्रीसत्यनामनि परे जगतो रतिः स्यात् ॥ ३ ॥

अर्थ–जिसके स्वच्छ यशसे परिमार्जित इस संसारमें मनुष्य शीघ्रही अज्ञानांधकारको नाश कर, सत्पुरुषको प्राप्त होकर, कल्याणपदपर पहुंचता है उस श्रेष्ठ श्रीसत्यनाममें जगत्की प्रीति होवे ॥ ३ ॥

अनुध्ययया यस्य सदासिनाऽऽशां छित्त्वा स्वगेहादिषु योगिवन्द्याः ।
विन्दंत्यथाऽऽनन्दममंदमेते स सत्यनामा विदधातु भूतिम् ॥ ४ ॥

अर्थ–लोग जिसके ध्यानरूपी खड्गसे स्वगृहादिकोंमें जो आशा है उसे छेदनकर, योगियोंसे वन्दनीय होत हैं और फिर विशेष आनन्दको पाते हैं वह सत्यनाम ऐश्वर्यको बढावे ॥ ४ ॥

अकलितमहिमानं पूर्णकामं कृपालुं धृतमनुजशरीरं भक्तसन्तारणाय ।
सुरमुनिगणवंद्यं दिव्यदेहाभिरामं,हृदयतिमिरभानुं सत्कबीरं स्मरामः॥

अर्थ–अगणितमहिमावाले, पूर्णकाम, दयायुक्त, भक्तलोगोंके उद्धार करनेके लिये मनुष्यशरीर धारण करनेवाले, देवता और मुनिगणोंसे वंदनीय दिव्यदेह करके मनोहर, हृदयान्धकारको नाश करनेके लिये सूर्यकेसमान ऐसे सत्कबीरको हम लोग स्मरणकरतेहैं

सर्वमंगलमांगल्यं सर्वविघ्नविनाशनम् ।
अधमोद्धारणं देवं सद्गुरुं प्रणमाम्यहम् ॥ १ ॥
यं सर्वेश्वरदेवं हि स्तुवन्ति सततं सुराः ।
ध्यायन्ति मुनयश्चापि तं गुरुं प्रणमाम्यहम् ॥ २ ॥
शश्वज्जन्मजरामयाधिनिधनैर्दुःखैः सदा पीडितान्
दृष्ट्वा प्राणभृतः कुशेशयदले स्वैरं च धृत्वा वपुः ।
शास्त्राब्धिं प्रविगाह्य बीजकसुधाज्ञानं च तेभ्यो ददौ
तं वन्दे शिरसा प्रणम्य चरणौ वीरं कबीरं गुरुम् ॥ ३ ॥
नित्यानन्दस्वरूपो यो मायातीतो महोदयः ।
सच्छास्त्रविषयः साक्षात्कबीरं प्रणतोऽस्म्यहम् ॥ ४ ॥
नमः श्रीधर्मदासाद्यमहामुन्यन्तसत्तमान् ।
द्विचत्वारिंशदाचार्य्यान् भूतभव्यभविष्यतः ॥ ५ ॥

सत्यं

अनुरागसागर प्रारम्भ।

सत्यसुकृत, आदिअदली, अजर, अचिन्त, पुरुष, मुनीन्द्र, करुणामयकबीर, सुरतियोगसंतायन, धनीधर्मदास, चूरामणिनाम, सुदर्शन नाम, कुलपति नाम, प्रमोध गुरुबालापीर, केवल नाम, अमोलनाम, सुरतिसनेही नाम, हक्क नाम, पाकनाम, प्रगट नाम, धीरजनाम, उग्र नाम साहबकी दया।

वंशब्यालीसकी दया।

मंगलाचरण। छंद हरिगीतिका।

प्रथमवंदोंसतगुरुचरणजिन, अगमगम्यलखाइया॥
गुरुज्ञान दीपप्रकाशकरिपट, खोलिदरशदिखाइया॥
जिहि कारण सिद्धचापचे सो, गुरु कृपाते पाइया॥
अकह मूरति अमिय सूरति, ताहि जाय समाइया॥

गुरुदेव पूर्ण है।

सोरठा—कृपासिंधु गुरुदेव, दीनदयालु कृपालु है॥
विरले पावहिं भेव, जिन चीन्ह्यापरगटतहाँ॥ १॥

अधिकारी कौन है?। छन्द।

कोइ बूझई जन जौहरी जो, शब्दकी पारख करे॥
चितलायसुनहिंसिखापनो, हितजानके हिरदयधरै॥

तम मोह मो सम ज्ञान रवि, जब प्रगट हो तबसूझई॥
कहतहूं अनुरागसागर, संत कोइ कोइ बूझई ॥ २ ॥

विना अनुराग वस्तुको पा नहीं सकते।

सोरठा–कोइइकसन्तसुजान, जोममशब्दबिचारई॥
पावै पद निर्बान, बसत जासु अनुरागउर ॥ २ ॥

धर्मदास वचन–अनुरागीके लक्षण विषय प्रश्न।

हे सतगुरु बिनवौं कर जोरी। यह संशय मेटो प्रभु मोरी॥
जाके चित अनुराग समाना। ताकर कहो कवन सहिदाना॥
अनुरागी कैसे लखि परई। बिन अनुराग जीव नहिं तरई॥
सो अनुराग प्रभुमोहिं बताऊ। देइ दृष्टान्त भले समझाऊ॥

सतगुरुवचन–अनुरागीके दृष्टान्त।

धर्मदास परखहु चितलाई। अनुरागी लच्छ कहुँ समुझाई॥

मृगाका दृष्टान्त।

जैसे मृगा नाद सुनि धावै। मगन होय व्याधा ढिग आवै॥
चित कछु संक न आवै ताही। देत सीस सो नाहिं डराही॥
सुनि सुनि नाद सीस तिन दीन्हा। ऐसे अनुरागी कहँ चीन्हा॥

पतंगका दृष्टान्त!

औ पतंगको जैसो भाऊ। ऐसे अनुरागी उर आऊ॥

सतीका दृष्टान्त।

और लच्छ सुनियो धर्मदासा। सतगुरु शब्द करो परकाशा॥
जरत नारि ज्यों मृतपति संगा। तनिकौ जरत न मोरत अंगा॥
तजे सुगृह धन धाम सुहेली। पिय विरहिनउठि चलै अकेली॥
सुत लै लोगन आगे कीन्हा। बहुत मोह ता कहँ पुनि दीन्हा॥
बालक दुर्बल तोहि विनुमरिहै। घरभोसुन्न काहि विधि करि है॥
बहु संपति तुमरे घर अहई। पलट चलहु गृह असस्बकहई॥
ताके चित कछु व्यापे नाहीं। पिय अनुराग बसै हिय माहीं॥

छन्द ।

तेहिबहुतकहिसमुझावहिं, नहिं नारि समुझतसोधनी
नहिं काम है धन धाम सो, कछु मोहि तो ऐसीबनी॥
जग जीवना दिन चारिहै, कोइ नाहिं साथी अंतको॥
यह समुझिदेख्यो ऐ सखी, तातेगह्यो पद कंतको३॥

सोरठा–लिये किया करमाह, जाय सरा ऊपरचढी॥
गोद लियो निज नाह, रामनाम कहते जरी३

तत्वानुरागीके लक्षण ।

धर्म ! यह अनुरागी बानी । तुम तत देख कहूँ बिलछानी ॥
ऐसे जो नामहिं लौं लावे । कुलपरिवार सबहि बिसरावे ॥
नारी सुतको मोह न आने । जीवन जनम सपन करि जाने॥
जगमें जीवन थोरै भाई । अंत समय कोइ नाहिं सहाई॥
बहुत पियारि नारि जगमाहीं । मातु पिताहु जाहि सर नाहीं ॥
तेहि कारण नर सीस जु देही । अंत समय सो नाहिं सनेही ॥
निज स्वारथ कहँ रोदन करई । तुरतहि नैहरको चित धरई ॥
सुत परिजन धन सपन सनेही । सत्यनाम गहु निजमति एही ॥
निजतनुसमप्रियऔर न आना । सो तन संग न चलत निदाना॥

कालसे कौन छुडा सकता है ?

ऐसा कोइ न दीखे भाई । अंत समयमें लेइ छुडाई ॥
अहै एक सो कहों बखानी । जेहि अनुराग होय सो मानी ॥
सतगुरु आहि छुडावनहारा । निश्चय मानो कहा हमारा ॥

सद्गुरु क्या करता है ?

कालहिं जीति हंस लै जाहीं । अविचल देश पुरुषजहँ आहीं॥
जहां जाय सुख होय अपारा । बहुरि न आवै यहि संसारा ॥

अविचल देशको कौन पहुंच सकता है ? । छंद ।

बिसवास कर मन बचनको, तब चढे सतकी राहहो ॥
ज्यों सूरमा रनमें धसे, फिर पाछे चितवतनाहहो ॥
सतीशूरा भाव निरखिके, संत सो मग धारिये ॥
मृतक भाव विचार गुरुगम, काल कष्ट निवारिये ॥ ४ ॥

अधिकारिकी दुर्लभता ।

सोरठा—कोइक शूरा जीव, जो ऐसी करनी करै ।
ताहि मिलेगो पीव, कहैं कबीर विचारिकै ॥ ४ ॥

धर्मदास वचन— मृतक किसे कहते हैं ?

मृतक भाव प्रभु कहो बुझाई । जाते मनकी तपनि नसाई ॥
केहिविधिमरतकहोयसजीवन । कहो विलोय नाथ अमृत घन ॥

कवीरवचन—मृतकके दृष्टान्त ।

धर्मदास यह कठिन कहानी । गुरुगम ते कोइ विरले जानी ॥

भृंगीका दृष्टान्त ।

मृतक होयके खोजहिं सन्ता । शब्द विचारि गहैं मगु अंता ॥
जैसे भृंग कीटके पासा । कीटहिं गहि पुरुगम परगासा ॥
शब्द घातकर महितिहि डारे । भृंगी शब्द कीट जो धारे ॥
तब लैगो भृंगी निज गेहा । स्वाती देइ कीन्हों समदेहा ॥
भृंगी शब्द कीट जो माना । वरण फेर आपन कर जाना ॥
बिरला कीट जो होय सुखदाई । प्रथम अवाज गहे चितलाई ॥
कोई दूजे कोइ ताज मानै । तनमन रहित शब्दहित जौन ॥
भृंगी शब्द कीट ना गहई । तो पुनि कीट असारे रहई ॥
धर्मदास यह कीट को भेवा । यहि मति शिष्य गहे गुरुदेवा ॥

भृंगी भावकी प्राप्ति कैसे होती है ? । छन्द ।

भृंगि मति दिढ कै गहेतो, करौ निजसमओहिहो॥
दुतियाभाव न चित्त ब्यापे, सो लहे जिव मोहिहो ॥
गुरु शब्द निश्चय सत्यमाने, भृंगि मत तब पावई ॥
तजि सकलआसा शब्द वासा, काग हंस कहावई ॥

हंस कौन है ?

सोरठा—तजै कागकी चाल,सत्य शब्द गहिं हंसहो।
मुकता चुगे रसाल, पुरुष पच्छ गुरु मग गवन॥९

मृतकके और दृष्टान्त ।

सुनहु संत यह मृतक सुभाऊ। विरला जीव पीव मग धाऊ॥
औरै सुनहु मृतकका भेवा। मृतक होय सतगुरु पद सेवा॥
मृतक छोह निभाव उरधारे। छोह निभावहि जीव उबारे॥

पृथ्वीका दृष्टांत।

जस पृथ्वीके गंजन होई। चित अनुमान गहे गुण सोई॥
कोई चंदन कोइ विष्ठा डारे। कोइ कोई किरषी अनुसारे॥
गुण औगुण तिनसमकरजाना। महाविरोध अधिक सुखमाना॥

ऊखका दृष्टान्त ।

और मृतक भाव सुनि लेहू। निरखि परखि गुरुमगुपगुदेहू॥
जैसे ऊख किसान बनावे। रती रती कर देह कटावे॥
कोल्हू महँ पुनि आप पिरावे। पुनि कडाहमें आप उँटावे॥
निज तनु दाहे गुड़ तब होई। बहुरि ताव दे खांड बिलोई॥
ताहू माहिं ताव पुनि दीन्हा। चीनी तबै कहावन लीन्हा॥
चीनी होय बहुरि तन जारा। ताते मिसरी है अनुसारा॥
मिसरीते जब कंद कहावा। कहे कबीर सबके मन भावा॥
याही विधिते जो शिष सहई। गुरू कृपा सहजे भव तरई॥

मृतकभाव कौन धारण कर सकता है ? । छंद ।

मिरतक भाव है कठिन धमनि, लहे बिरला शूर हो॥
कादर सुनत तेहि तनमन दहै, पाछेन चितवतकूरहो
ऐसेहि शिष्य आप सम्हारे, ताव सही गुरुज्ञानको॥
लहै भेदी भेद निश्चय, जाय दीप अमानको ॥६॥

मृतकही साधु होता है ।

सोरठा-मृतक होय सोसाधु, सो सतगुरुको पावई ।
मेटे सकल उपाध, तासु देव आसाकरैं॥६॥

साधु किसे कहते हैं ? ।

साधू मार्ग कठिन धर्मदासा । रहनी रहे सो साधु सुवासा ॥
पांचों इन्द्री सम करि राखे । नाम अमीरस निशिदिन चाखे ॥

चक्षुर्वशीकरण ।

प्रथमहिं चक्षु इन्द्री कहँ साधे । गुरु गम पंथ नाम अवराधे ॥
सुन्दर रूप चक्षुकी पूजा । रूप कुरूप न भावे दूजा ॥
रूप कुरूपहिं सम कर जाने । दरस विदेहि सदा सुख माने ॥

श्रवणवशीकरण ।

इन्द्री श्रवण वचन शुभ चाहै । उत्कट वचन सुनत चित दाहै॥
बोल कुबोल दोउ सम लेखै । हृदय शुद्ध गुरुज्ञान विशेखै ॥

नासिकावशीकरण ।

नासिका इन्द्री बास अधीना । यहि सम राखै संत प्रवीना ॥

जिह्वावशीकरण ।

जिभ्या इन्द्री चाहै स्वादा । खट्टा मीठा मधुर सवादा ॥
सहज भावमें जो कछु आवै । रूखा फीका नाहिं बिलगावै ॥
जो कोइ पंचामृत लै आवै । ताहि देखि नाहिं हरष बढावै ॥
तजे न रूखा साग अलूना । अधिक प्रेमसों पावै दूना ॥

शिश्नवशीकरण ।

इन्द्री दुष्ट महा अपराधी । कुटिल काम कोइ विरलेसाधी ॥
कामिनि रूप कालकी खानी । तजहु तासु सँग हो गुरुज्ञानी ॥

कामवशीकरण ।

जबही काम उमँग तन आवे । ताहि समय जो आप जु गावे ॥
शब्द विदेह सुरत लै राखे । गहि मन मौन नाम रस चाखे ॥
जब निहतत्त्वमें जाय समाई । तबही काम रहै मुरझाई ॥

कामदेव लुटेरा है । छंद ।

काम परबल अति भयंकर, महा दारुण काल हो ॥
सुर देव मुनिगणयक्षगंध्रव,सबहिकीन्हबिलास हो ॥
सबहि लूटे विरल छूटे, ज्ञान गुण जिन दृढ गहे ॥
गुरु ज्ञान दीप समीपसतगुरु, भेदमारग तिनलहो ।७।

कामलुटेरेसे बचनेका उपाय ।

सोरठा–दीपक ज्ञान प्रकास, भवन उजेराकरिरहो॥
सतगुरु शब्द विलास, भाजै चोर अँजोर जब ७

अनलपक्षिका दृष्टांत ।

गुरू कृपासों साधु कहावे । अनलपच्छ ह्वै लोक सिधावे ॥
धर्मदास यह परखो बानी । अनलपच्छ गम कहों बखानी ॥
अनलपच्छ जो रहे अकाशा । निशिदिन रहै पवनकी आशा ॥
दृष्टिभाव तिनरति विधिठानी । यहिविधिगरभ रहे तिहिजानी ॥
अंडप्रकाश कीन्ह पुनि तहँवा । निराधार आलंबहिं जहँवा ॥
मारग माहिं पुष्ट भो अंडा । मारग माहिं बिहर नौ खंडा ॥
मारग माहिं चक्षु तिन पावा । मारग माहिं पंख परभावा ॥
महिढिग आवा सुधि भइताहीं । इहां मोर आश्रम नहिं आही ॥
सुरति सम्हारचले पुनि तहँवा । मात पिताको आश्रम जहँवा ॥

अनलपच्छ तेहि लेन न आवैं । उलटचीन्हनिजघरहि सिधावैं ॥
बहु पंछी जग माहिं कहावें । अनलपच्छ सम नाहिं कहावें ॥
अनलपच्छ जसपच्छिन माहीं । अस विरले जिव नाम समाहीं ॥
यहि विधि जो जिव चेते भाई । मेटि काल सतलोक सिधाई ॥

साधु अनलपक्षि समान कब होता है ?। छंद।

निरालंब अलंब सतगुरु, एक आसा नामकी ॥
गुरुचरणलीनअधीननिशिदिन, चाहनहिंधनधामकी
सुतनारि सकल विसारिविषया, चरणगुरुदृढकैगहे ॥

ऐसे साधुको गुरु क्या देते हैं ?

सतगुरुकृपादुखदुसहनाशै, धाम अविचल सो लहे॥

अविचल धामकी प्राप्ति किससे होती है ?

सोरठा-मनवचक्रमगुरु ध्यान, गुरु आज्ञा निरखत चले॥
देहि मुक्ति गुरु दान, नाम विदेह लखायकै॥८॥

नामध्यानमाहात्म्य ।

जबलग ध्यान विदेह न आवे । तबलग जिव भव भटकाखावे ॥
ध्यान विदेह औ नाम विदेहा । दोइ लख पावे मिटै संदेहा ॥
छन इक ध्यान विदेह समाई । ताकी महिमा वरणि न जाई ॥
काया नाम सबै गोहरावे । नाम विदेह विरले कोइ पावे ॥
जो युग चार रहे कोइ कासी । सार शब्द विन यमपुरवासी ॥
नीमषार बद्री परधाना । गया द्वारिका प्राग अस्नाना ॥
अडसठ तीरथ भूपारिकरमा । सार शब्द विन मिटे न भरमा॥
कहँलग कहों नाम परभाऊ । जा सुमिरे जम त्रास नसाऊ ॥

नामपानेवालेको क्या मिलता है ?

सार नाम सतगुरुसों पावे । नाम डोर गहि लोक सिधावे ॥
धर्मराय ताकों सिर नावे । जो हंसा निःतत्त्व समावे ॥

सार शब्द क्या है ? ।

सार शब्द सु विदेह स्वरूपा । निःअच्छर वहि रूप अनूपा ॥
तत्त्व प्रकृतिप्रभाव सब देहा । सार शब्द निःतत्त्व विदेहा ॥
कहन सुननको शब्द चौधारा । सार शब्दसों जीव उबारा ॥
पुरुष सु नाम सार परवाना । सुमिरण पुरुष सार सहिदाना ॥
बिन रसनाके जाप समाई । तासों काल रहे मुरझाई ॥
सूच्छम सहज पंथ है पूरा । तापर चढो रहे जनसूरा ॥
नाहिं वहँ शब्द न सुमरन जापा । पूरन वस्तु काल दिख दापा ॥
हंस भार तुम्हरे शिर दीना । तुमको कहों शब्दको चीन्हा ॥
पदम अनंत पँखुरी जाने । अजपा जाप डोर सो ताने ॥
सुच्छम द्वार तहां तब परसे । अगम अगोचर सत्पथ परसे ॥
अंतरशून्य महि होय प्रकासा । तहँवाँ आदि पुरुषको बासा ॥
ताहिं चीन्ह हंस तहँ जाई । आदि सुरत तहँ लै पहुँचाई ॥
आदि सुरत पुरुषको आही । जीव सोहंगम बोलिये ताही ॥
धर्मदास तुम संत सुजाना । परखो सारशब्द निरबाना ॥

सारशब्द (नाम) जमनेकी विधि गुरुगमभेद । छंद ।

जाप अजपा हो सहजधुन, परखि गुरुगम डारिये॥
मन पवनथिरकर शब्दनिरखे, कर्ममनमथमारिये ॥
होत धनु रसना विना, कर माल विन निरवारिये ॥
शब्दसार विदेह निरखत, अमरलोकसिधारिये ॥९॥
सोरठा–शोभाअगम अपार, कोटि भानुशशिरोम इक॥
षोडश रवि छिटकार, एकहंसउजियार तनु॥९॥

धर्मदासका आनन्दोद्गार ।

हे प्रभु तव चरणन बलिहारी । किये सुखी सब कष्ट निवारी ॥
चक्षुहीन जिमि पावे नैना । तिमि मोहि हरषसुनत तव बैना॥

कबीरवचन ।

धर्मदास तुम अंश अंकूरी । मोहिं मिलेउ कीन्हें दुख दूरी ॥
जस तुम कीन्हें मोसन नेहा । तजि धनधाम रु सुत पितु गेहा ॥
आगे शिष्यजोअसविधिकरिहैं । गुरुचरणन मन निश्चल धरिहैं ॥
गुरुके चरण प्रीति चित धारै । तन मन धन सतगुरु पर वारै ॥
सो जिव मोहिं अधिक प्रियहोई । ताकहँ रोकि सकै नहिं कोई ॥
शिष्य होय सरबस नहिं वारे । हृदय कपट मुख प्रीतिउचारे ॥
सो जिव कैसे लोक सिधाई । बिन गुरु मिले मोहिं नहिं पाई ॥

धर्मदासकी अधीनता ।

यह सबतोप्रभु आपहि कीन्हा । नहिं तो हतो मैं परम मलीना ॥
करके दयाप्रभु आपहिं आये । पकडि बांह प्रभुकाल छुडाये ॥

सृष्टिउत्पत्तिविषयप्रश्न ।

अब साहब मोहिं देहु बतायी । अमरलोक सो कहां रहाई ॥
लोकदीप मोहिं बरनि सुनावहु । तृषावन्तको अमी पियावहु ॥
कौने द्वीप हंसको बासा । कौने द्वीप पुरुष रहिवासा ॥
भोजन कौन हंस तहँ करई । औ बानी कहुँ पुनि उच्चरई ॥
कैसे पुरुष लोक रचि रागा । द्वीपहिकर कैसे अभिलाखा ॥
तीन लोक उत्पत्ती भाखो । वर्णहु सकल गोय जनि राखो ॥
कालनिरंजन केहि विधिभयऊ । कैसे षोडश सुत निर्मयऊ ॥
कैसे चार खानि बिस्तारी । कैसे जीव काल वश डारी ॥
कैसे कूर्म शेष उपराजा । कैसे मीन बराहहिं साजा ॥
त्रय देवा कौने विधि भयऊ । कैसे महि अकाश निरमयऊ ॥
चन्द्र सूर्य कहु कैसे भयऊ । कैसे तारागन सब ठयऊ ॥
किहिविधिभइशरीरकी रचना । भाषो साहब उत्पति बचना ॥
जाते संशय हो उच्छेदा । पाद भेद मन होय अखेदा ॥

छंद।

आदि उत्पतिकहोसतगुरु, कृपाकरि निजदासको॥
बचन सुधा सु प्रकाश कीजै, नाश हो यमत्रासको॥
एक एक बिलोयबर्णहु, दास मोहि निज जानिकै॥
सत्य वक्ता सदगुरु तुम, लेब निश्चय मैं मानिकै १०
सोरठा–निश्चयबचनतुम्हार, मोहि अधिक प्रियताहिते।
लीला अगम अपार, धन्य भागदर्शन दिये॥ १०॥

कबीरवचन।

धरमदास अधिकारी पाया। ताते मैं कहि भेद सुनाया॥
अब तुम सुनहु आदिकी बानी। भाषो उत्पति प्रलय निसानी॥

सृष्टिके आदिमें क्या था?

तबकी बात सुनहु धर्मदासा। जब नाहिं महि पाताल अकासा
जब नाहिं कूर्मबराह औ शेषा। जब नाहिं शारद गौरि गणेशा॥
जब नाहिं हते निरंजन राया। जिन जीवन कहबांधिझुलाया॥
तेतिस कोटि देवता नाहीं। और अनेक बताऊ काहीं॥
ब्रह्मा विष्णु महेश न तहिया। शास्त्र वेद पुरान न कहिया॥
तब सब रहे पुरुषके माहीं। ज्यों बटवृक्ष मध्य रह छाहीं॥

छंद।

आदि उत्पति सुनहु धर्मनि, कोइ न जानतताहिहो॥
सबहि भो बिस्तार पाछे, खास देऊँ मैं काहि हो॥
वेद चारो नाहिं जानत, सत्य पुरुष कहानियां॥
वेदको तब मूल नाहीं, अकथकथा बखानियां ११॥
सोरठा–निराकारतै बेद, आदिभेदजाने नहीं॥
पंडित करत उछेद, मते वेदके जग चले॥ ११॥

सृष्टिकी उत्पत्ति सतपुरुषकी रचना ।

सत्य पुरुष जब गुपत रहाये । कारण करण नहीं निरमाये ॥
समपुट कमल रह गुप्त सनेहा । पुहुपमाहिं रह पुरुष विदेहा ॥
इच्छा कीन्ह अंश उपजाये । हंसन देखि हरष बहुपाये ॥
प्रथमहिं पुरुषशब्द परकाशा । दीपलोकरचि कीन्ह निवासा ॥
चारि कर सिंहासन कीन्हा । तापर पुहुप दीप करु चीन्हा ॥
पुरुष कला धरि बैठे जहिया । प्रगटी अगर वासना तहिया ॥
सहस अठासी दीप रचि राखा । पुरुष इच्छातें सब अभिलाखा ॥
सबै द्वीप रह अगर समायी । अगरवासना बहुत सुहायी ॥

सोलह सुतका प्रकट होना ।

दूजे शब्द जु पुरुष परकाशा । निकसे कूर्म चरणगहि आशा ॥
तीजे शब्द सु पुरुष उच्चारा । ज्ञान नाम सुत उपजे सारा ॥
टेकी चरण सम्मुख ह्वै रहेऊ । आज्ञा पुरुषद्वीप तिन्ह दएऊ ॥
चौथे शब्द भये पुनि जबहीं । विवेकनाम सुत उपजे तबहीं ॥
आप पुरुष कियद्वीपनिवासा । पंचम शब्दसो तेज परकाशा ॥
पांचवें शब्द जब पुरुषउच्चारा । काल निरंजन भो औतारा ॥
तेज अंगते काल ह्वै आवा । ताते जीवन कह संतावा ॥
जीवरा अंस पुरुषका आहीं । आदि अंत कोइ जानत नाहीं ॥
छठे शब्द पूरुष मुख भाषा । प्रगटे सहज नाम अभिलाषा ॥
सतयें शब्द भयो संतोषा । दीन्हो द्वीप पुरुष परितोषा ॥
अठयें शब्द पूरुष उचारा । सुरति सुभाव द्वीप बैठारा ॥
नवमें शब्द अनन्द अपारा । दशयें शब्द क्षमा अनुसारा ॥
ग्यारहें शब्द नाम निष्कामा । बारहें शब्द जलरंगी नामा ॥
तेरहें शब्द अचिंत सुत जानो । चौदहें शब्द सुत प्रेम बखानो ॥
पन्द्रहें शब्द सुत दीनदयाला । सोलहें शब्द भै धीर्य रसाला ॥

सत्रहवें शब्द सुतयोगसंतायन । एक नाल षोडश सुत पायन ॥
शब्दहितें भयो सुतनअकारा । शब्दते लोक द्वीप विस्तारा ॥
अग्र अमी दिय अंशअहारा । द्वीप द्वीप अंशन बैठारा ॥
अंशन शोभा कला कनंता । होत तहां सुख सदा वसन्ता ॥
अंशन सोभा अगम अपारा । कला अनन्त को वरणै पारा ॥
सब सुत करें पुरुषको ध्याना । अमी अहार सदा सुख माना ॥
याही बिधि सोलह सुत भेऊ । धर्मदास तुम चित धरि लेऊ ॥

छंद ।

द्वीप करी को अनंत शोभा, नाहिं बरणतसो बने॥
अमित कल अपार अद्भुत, सुतन शोभा को गन॥
पुरुषके उजियारसे सुन, सबै द्वीप अजो रहो ॥
सत पुरुषरोम प्रकाश एकहि, चन्द्र सूर्य करो रहो॥
सोरठा-सतपुरआनँदधाम, शोगमोहदुखतहँ नहीं ॥
हंसनको विश्राम, पुरुष दरश अँचवन सुधा।१२

निरञ्जनकी तपस्या और मानसरोवर तथा शून्यकी प्राप्ति ।

यहिविधिबहुतदिवस गये बीती । ता पीछे ऐसी भइ रीती ॥
धरमराय अस कीन्ह तमासा । सो चरित्र बूझहु धर्मदासा ॥
युग सत्तर सेवा तिन कीन्हा । इकपग ठाढ पुरुप चितदीन्हा॥
सेवाकठिन भांति तिन कीन्हा । आदिपुरुषहर्षित होय चीन्हा ॥

पुरुषवचन निरञ्जनप्रति ।

पुरुष अवाज उठी तब वानी । कहा जानि तुम सेवा ठानी ॥

निरञ्जनवचन ।

कहै धरम तब सीस नवायी । देहु ठौर जहाँ बैठों जायी ॥
आज्ञा किये जाहु सुत तहवाँ । मानसरोवर द्वीप है जहवाँ ॥

चल्यो धरम तब मानसरोवर । बहुत हरष चित करत कलोहर
मानसरोवर आये जहिया । भये आनन्दधरमपुनि तहिया ॥
बहुरि ध्यान पुरुषको कीन्हा । सत्तर जुग सेवा चित दीन्हा ॥
यक पगु ठाढे सेवा लायी । पुरुष दयालु दया उर आयी ॥

पुरुषवचन सहजप्रति ।

विकस्योपुहुपउठयो जबबानी । बोलत वचन उठयो अधरानी ॥
जाहु सहज तुम धरमके पासा । अब कस ध्यानकीन्हपरकासा ॥
सेवा बहु कीन्हा धर्मराऊ । दियो ठौर वहि जहां रहाऊ ॥
तीनलोक तब पलमें दीन्हा । लखिसेवकाइ दया अस कीन्हा ॥
तीन लोक कर पायो राजू । भयो आनन्द धरममन गाजू ॥
अब का चाहे पूछो जाई । जो कछु कहै सो देउ सुनाई ॥

सहजका निरञ्जनके पास जाना ।

चले सहज तब सीस नवाई । धरमराय पहँ पहुँचे जाई ॥
कहे सहज सुनु भ्राता मोरा । सेवा पुरुष मान लइ तोरा ॥
अब का मांगहु सो कह मोही । पुरुष अवाज दीन्ह यह तोही ॥

निरञ्जन वचन सहजप्रति ।

अहो सहज तुम जेठे भाई । करो पुरुष सो विन्ती जाई ॥
इतना ठाव न मोहि सुहाई । अब मोहि बकसि देहु ठकराई ॥
मोरे चित अस भौ अनुरागा । देउ देश मोहि करहु सभागा ॥
कै मोहि देहु लोक अधिकारा । कै मोहि देहु देस यक न्यारा ॥

सहजवचन सत्पुरुषप्रति ।

चले सहज सुनि धर्मकी बाता । जाय पुरुषसो कहे विख्याता ॥
जो कछु धर्मराय अभिलाषी । तैसे सहज सुनाये भाषी ॥

पुरुषवचन सहजप्रति । छन्द ।

सुन्यो सहजके वचन, जबहीं पुरुष बैन उच्चारेऊ ॥
धरमसे सनतुष्ट हैं हम, वचन मम हिय धारेऊ ॥

लोक तीनों ताहि दीन्हो, शून्य देश बसावहू ॥
करहुरचनाजाय तहँवा, सहज वचन सुनावहू॥ १३॥
सोरठा-जाहुसहजतुम वेग, असकहिआवोधर्मसो॥
दियो शून्यकर थेग, रचना रचहु बनाइके॥ १३॥

निरञ्जनको सृष्टिरचनाका साज मिलनेका वृत्तान्त।

सहज वचन निरञ्जनप्रति।

आये सहज तब बचन सुनावा। सत्यपुरुष जस कहि समुझावा॥

कबीरवचन धर्मदास प्रति।

सुनतहि बचन धर्म हरषाना। कछुक हर्ष कछु बिस्मयआना॥

निरञ्जनवचन सहजप्रति।

कहे धर्म सुनु सहज पियारा। कैसे रचौं करौं विस्तारा॥
पुरुष दयाल दीन्ह मोहि राजू। जानु न भेद करों किमि काजू॥
गम्य अगम मोहे नहिं आयी। करो दया सो युक्ति बतायी॥
विन्ती करो पुरुषसों मोरी। अहो भ्रात बलिहारी तोरी॥
किहि विधि रचूं नौखंड बनाई। हे भ्राता सो आज्ञा पाई॥
मो कहँ देहु साज प्रभु सोई। जाते रचना जगतकी होई॥

सहजका लोकको जाना।

तबही सहज लोक पगधारा। कीन्ह दंडवत बारम्बारा॥

पुरुषवचन सहजप्रति।

अहो सहज कस इहँवा आई। सो हमसों तुम शब्द सुनाई॥

कवीर बचन धर्मदास प्रति।

कहो सहज तव धर्मकी बाता। जो कछु धर्म कही विख्याता॥
धर्मराज जस विन्ती लायी। तैसे सहज सुनायउ जायी॥

पुरुषकी आज्ञा सहजसे।

आज्ञा पुरुष दीन्ह तेहि वारा। सुनौ सहज तुम वचन हमारा॥

कूर्मके उदर आदि सब साजा । सो ले धर्म करे निजकाजा ॥
विनति करे कूर्म सो जायी । मांगि लेहि तेहि माथ नवायी ॥

सहजका धर्मरायके निकट जाकर पुरुषकी आज्ञा सुनाना ।

गये सहज पुनि धर्मके पासा । आज्ञापुरुष कीन्ह परकासा ॥
विनती करो कूर्मसो जाई । मांगि लेहु तेहु सीस नवाई ॥
जाय कूर्म ढिग सीस नवावहु । करिहैं कृपा बहुत तब पावहु ॥

निरञ्जनका कूर्मके पास साज लेनेको जाना ।

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

चलिभो धरम हरष तब बाढो । मनहिंकीन जु मान अतिगाढो ॥
जाय कूर्मके सन्मुख भयऊ । दंड परनामएक नहिं कियऊ ॥
अमी स्वरूप कूर्म सुखदाई । तपत न तनिकोअतिशितलाई ॥
करि गुमान देख्यो जबकाला । कूर्म धीर अति है बलवाला ॥
बारह पालँग कूर्म शरीरा । छे पालंग धरम बलवीरा ॥
धावे चहुँ दिश रहे रिसाई । किहिविधि लीजे उत्पति भाई ॥
कीन्हो रोष कोपि धर्म धीरा । जाय कूर्मसे सन्मुख भीरा ॥
कीन्हों काल सीस नख घाता । उदरते निकसे पवन अघाता ॥
तीन सीसके तीनहु अंशा । ब्रह्मा विष्णु महेश्वर वंशा ॥
पांच तत्व धरती आकाशा । चंद्र सूर्य उडगन रहिवासा ॥
निसरचो नीर अग्नि शशि सूरा । निसरचो नभ ढाकनमहि थूरा ॥
मीन शेष बराह महि थम्भन । पुनि पृथ्वीको भयो अरम्भन ॥
छीना सीस कूर्मको जबही । चले प्रसेव ठांव पुनि तबही ॥
जबही प्रसेव बुंद जल दीन्हा । उंचास कोट पृथ्वीको चीन्हा ॥
क्षीर ताय जस परत मलाई । अस जलपर पृथ्वी ठहराई ॥
बारह दंत रहु महिकर मूला । पवन प्रचंड मही अस्थूला ॥
अण्ड स्वरूप अकाशको जानो । ताके बीच पृथ्वी अनुमानो ॥

कूर्म उदर सुत कूर्म उत्पानो । तापर शेष बराहको थानो ॥
शेष सीस या पृथ्वी जानो । ताके हेठ कूर्म बिरयानो ॥
किरतम कूर्म अण्डके मांही । कूर्म अंश सो भिन्न रहाही ॥
आदि कूर्म रह लोक मँझारा । तिन पुनि पुरुषध्यानअनुसारा॥

कूर्मवचन सत्पुरुषप्रति ।

निरंकार कीन्हो बरियाया । काल कलाधरि मो पहँ आया॥
उदर बिदार कीन्ह उन मोरा । आज्ञा जानि कीन्ह नहिं थोरा॥

पुरुषवचन कूर्मप्रति ।

पुरुष अवाज कीन्ह तेहिवारा । छोट बन्धु वह आहि तुम्हारा ॥
आही यही बडनकी रीती । औगुन ठावँ करहिं वह प्रीती ॥

कबीरवचन धर्मप्रति ।

पुरुषवचन सुनि कूर्म अनन्दा । अमी सरूप सो आनन्द कन्दा॥
पुरुष ध्यान पुनिकीन्हनिरञ्जन । जुग अनेक किय सेवा संजन ॥
स्वार्थ जानि सेवा तिन लाई । करि रचना बैठे पछताई ॥
धर्मराय तब कीन्ह विचारा । कहवालो त्रयपुर विस्तारा ॥
स्वर्ग मृत्यु कीन्हों पाताला । विना बीज किमि कीजै ख्याला॥
कौन भांति कस करब उपाई । किहि विधि रचों शरीर बनाई॥
कर सेवा मांगो पुनि सोई । तिहुँ पुर जीवित मेरो होई ॥
करि विचार अस हठ तिनधारा । लाग्यो करने पुरुष विचारा ॥
एक पांव तब सेवा कियऊ । चौंसठ युगलों ठाढे रहेऊ ॥

बहुरि पुरुषका सहजको निरञ्जनके निकट भेजना । छन्द ।

दयानिधि सतपुरुष साहिब, बस सुसेवाके भये ॥
बहुरि भाष्यो सहज सेती, कहा अब याचत नये ॥
जाहु सहज निरंजनापहँ, देउ जो कुछ मांगई ॥
करहि रचना पुरुष बचना, छल मता सब त्यागई १४

सहजका निरंजनके निकट पहुँचना ।

सोरठा-सहजचले सिरनाय, जबहिं पुरुष आज्ञा कियो
तहँवां पहुँचे जाय, जहां निरंजन ठाढरह १४

देखत सहज धर्म हरषाना । सेवा बस पुरुष तब जाना ॥

सहजवचन ।

कहै सहज सुनु धर्मराया । केहि कारण अब सेवा लाया ॥

निरञ्जनवचन ।

धर्म कहे तब सीस नवायी । देहु ठौर जहँ बैठौं जायी ॥

सहजवचन ।

तब सहज अस भाषे लीन्हा । सुनहु धर्म तोहिपुरुषसबदीन्हा॥
कूर्म उदर सो जो कछु आवा । सो तोहि देन पुरुष फरमावा ॥
तीनों लोक राज तोहि दीन्हा । रचना रचहु होहु जनि भीना ॥

निरञ्जनवचन ।

तबै निरंजन विनती लायी । कैसे रचना रचूँ बनायी ॥
पुरुषहिं कहौ जोरि युग पानी । मैं सेवक दुतिया नहिं जानी ॥
पुरुष सो विनति करो हमारा । दीजै खेत बीज निज सारा ॥
मैं सेवक दुतिया नहिं जानू । ध्यानपुरुषको निशिदिनआनू॥
पुरुषहिं कहो जाइ यह बानी । देहु बीज अम्मर सहिदानी ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

सहज कह्यो पुनिपुरुषहि जाई । जस कछु कह्यो निरंजनराई ॥
गयो सहजनिज दीपसुखासन । जबहिं पुरुष दीन्हे अनुशासन॥
सेवा वश सतपुरुष दयाला । गुण औगुणनहिंचितकिरपाला॥

अद्याकी उत्पत्ति ।

इच्छा कीन पुरुष तेहि बारा । अष्टंगी कन्या उपचारा ॥
अष्ट बाहु कन्या होय आई । बायें अंग सो ठाढ रहाई ॥

अद्यावचन ।

माथ नाइ पुरुष सो कहई । अहो पुरुष आज्ञा कस अहई ॥

पुरुषवचन अष्टाप्रति । सत्यपुरुषका
अष्टाको मूलबीज देना ।

तबहीं पुरुष वचन परगासा । पुत्री जाहु धरमके पासा ॥
देहुँ वस्तु सो लेहु सम्हारी । रचहु धर्म मिलि उतपतिवारी ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

दीन्हो बीज जीव पुनि सोई । नाम सुहंग जीव कर होई ॥
जीव सोहंगम दूसर नाहीं । जीवसो अंश पुरुषको आही ॥
शक्ति पुनि तीन पुरुषउत्पाना । चेतनि उलंघनि अभयाजाना॥

छंद ।

पुरुष सेवावश भये तब, अष्टंगहि दीन्ह हो ॥
मानसरोवर जाहु कहिया, देहु धर्महि चीन्ह हो ॥
अष्टंगी कन्या हती जेहि, रूप शोभा अति बनी ॥
जाहु कन्या मानसरवर, करहु रचना अति घनी ॥
सोरठा–चौरासी लखजीव, मूलबीजतेहि संग दे ॥
रचना रचहुसजीव, कन्या चलि सिरनायके१५

यह सब दीन्हो आदि कुमारी । मानसरोवर चलि भइ नारी ॥
ततछिन पुरुष सहज टेरावा । धावत सहजपुरुष यहिं आवा ॥

पुरुषवचन सहजप्रति ।

जाही सहज धरम यह कहेहू । दीन्ही वस्तु जस तुम चहेहू ॥
मूल बीज तुम पहँ पठवावा । करहु सृष्टि जस तुव मनभावा॥
मानसरोवर जाहि रहाहू । ताते होइ हैं सृष्टि उराहू ॥

पुनि सहजका निरञ्जनके ढिग जाना ।

चले सहज तहवाँ तब आये । धर्म धीर जहँ ठाढ रहाये ॥
कहेउ सु वचन पुरुषकोजबहीं । धर्मराय सिर नायो तबहीं ॥

निरञ्जनका मानसरोवरमें अष्टाको पाकर मोहवश हो उसे निगल जाना
और सत्पुरुषका शाप पाना ।

पुरुष वचन सुन तबही गाजा । मानसरोवर आन विराजा ॥
आवत कामिनि देख्यो जबही । धर्मराय मन हरष्यो तबही ॥
कहा देखि अष्टंगी केरी । धर्मराय इतरान्यो हेरी ॥
कहा अनन्त अंत कछु नाहीं । काल मगन ह्वै निरखत ताहीं ॥
निरखत धर्म सुभयो अधीरा । अंग अंग सब निरख शरीरा ॥
धर्मराय कन्या कह ग्रासा । काल स्वभाव सुनो धर्मदासा ॥
कीन्ही ग्रास काल अन्याई । तब कन्या चित विस्मय लाई ॥
ततछण कन्या कीन्ह पुकारा । काल निरञ्जन कीन्ह अहारा ॥
तबही धर्म सहज लग आई । सहज शून्य तब लीन्ह छुडाई ॥
पुरुष ध्यान कूर्म अनुसारा । मोसनकाल कीन्ह अधिकारा ॥
तीन शीशममभच्छणकीन्ह्यो । होसतपुरुष दया भल चीन्ह्यो ॥
यही चरित्र पुरुष भल जानी । दीन्ह शापसो कहों बखानी ॥

पुरुषका शाप निरंजनप्रति ।

लच्छ जीव नित ग्रासन करहू । सवा लच्छ नितप्रति बिस्तरहू ॥

छंद ।

पुनि कीन्हपुरुषतिवानतिहि, किमि मटि डारो काल हो ।
कठिन काल कराल जीवन, बहुत करइ बिहालहो ॥
यहि मेटत अब ना बनमुहिं, नालइकसुत षोडसा ॥
एकमेटत सबै मिटि हैं, वचनडोलअडोलसा ॥ १६ ॥

सोरठा–डोलै वचन हमार, जो अब मेटा धरमका ।
वचन करो प्रतिपाल, देश मोर अब ना लहैं १६

सत्पुरुषका जोगजीतजीका निरंजनके पास उसे मानसरोवरसे निकाल देनेकी आज्ञा देकर भेजना ।

जोगजीत कह पुरुष बुलावा । धर्म चरित सबकहि समुझावा ॥

सत्पुरुष वचन जोगजीत प्रति ।

जोगजीत तुम बेगि सिधारो । धर्मरायको मारि निकारो ॥
मानसरोवर रहन न पावै । अब यहि देश कालनहिं आवै ॥
धर्मके उदर माहिं है नारी । तासो कहो निज शब्दसम्हारी ॥
जाकर रहो धर्म वहि देशा । स्वर्ग मृत्यु पाताल नरेशा ॥
उदर फारिके बाहर आवे । धर्म विदारि उदार फल पावे ॥
धर्मरायसों कहो विलोई । वहै नारि अब तुम्हरी होई ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

जोगजीत चल भे सिर नाई । मानसरोवर पहुँचे जाई ॥
जोगजीत कहँ देखा जबहीं । अति भो काल भयंकर तबहीं ॥

निरञ्जनवचन जोगजीतप्रति ।

पूछा काल कौन तुम आई । कौन काज तुम यहाँ सिधाई ॥

जोगजीतवचन निरंजनप्रति ।

जोगजीत अस कहे पुकारी । अहो धर्म तुम ग्रासेहु नारी ॥
आज्ञा पुरुष दीन्ह यह मोही । इहिंते बेगि निकारो तोही ॥

जोगजीतवचन अद्याप्रति ।

जोगजीत कन्या सो कहिया । नारी कहे उदरमहँ रहिया ॥
उदर फारि अब आवहु बाहर । पुरुष तेज सुमिरो तेहि ठाहर ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

सुनिके धर्म क्रोध उर जरेऊ । जोगजीत सो सन्मुख भिरेऊ ॥
जोगजीत तब कीन्हे ध्याना । पुरुष प्रताप तेज उर आना ॥
पुरुष आज्ञा भई तेहि काला । मारहु माझ लिलार कराला ॥
जोगजीत पुनि तैसो कीन्हा । जस आज्ञा पुरुष तेहि दीन्हा ॥

छंद ।

गहि भुजा फटकार दीन्हों, परेउ लोकत न्यार हो॥
भयो त्रासित पुरुष डरते, बहुरि उठेउ सम्हार हो॥
निकासि कन्या उदरत पुनि, देख धर्महि अति डरी॥
अब नाहिं देखों देसवह, कहों कौनविधि कहवां परी१७
सो०-कामिनिरहीसकाय, त्रासितकालक डर अधिक॥
रही सो सीस नवाय, आसपासचितवत खडी१७

निरञ्जनवचन अद्याप्रति ।

कहे धर्म सुनु आदि कुमारी। अब जनि डरपो त्रासहमारी॥
पुरुष रचा तोहि हमरे काजा। इकमति होय करहु उपराजा॥
हम हैं पुरुष तुमहि हो नारी। अब जनि डरपो त्रास हमारी॥

अद्यावचन निरञ्जनप्रति ।

कहे कन्या कैसे बोलहु बानी। भ्राता जेठ प्रथम हम जानी॥
कन्या कहै सुनो हो ताता। ऐसी विधि जनि बोलहु बाता॥
अब मैं पुत्री भई तुम्हारी। ताते उदर मांझ लियो डारी॥
जेठ बंधु प्रथमहिके नाता। अब तो अहो हमारे ताता॥
निरमल दृष्टि अबचितवहुमोही। नहिंतो पाप होय अब तोही॥
मंददृष्टि जनि चितवहु मोही। नातो पाप होय अब तोही॥

निरञ्जनवचन अद्याप्रति ।

कहे निरंजन सुनो भवानी। यह मैं तोहि कहों सहिदानी॥
पाप पुन्य डर हम नहिं डरता। पाप पुन्यके हमहीं करता॥
पाप पुन्य हमहींसे होई। लेखा मोर न लेहै कोई॥
पाप पुन्य हम करब पसारा। जो बाझे सो होय हमारा॥
ताते तोहिं कहों समुझाई। सिख हमार लो सीस चढाई॥
पुरुषदीन तोहिं हम कहँजानी। मानहु कहा हमार भवानी॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति।

विहँसी कन्या सुन अस बाता। इक मति होय दोइ रंगराता॥
रहस वचन बोली मृदु वानी। नारिनीचबुधिरति विधिठानी॥
रहस वचन सुनि धरमहरषाना। भोग करनको मनमें आना॥

छन्द।

भग नहिं कन्या कहती, असचरितकीन्ह निरंजना॥
[नंखघातकिये भगद्वारतताछिण, घाट उत्पती गंजना॥
नख रेषशोनितचल्या, तिहुँको सब खास आरंभनी॥]
आदिउत्पतिसुनहु धर्मनि, कोउ नहिं जानत जम मनी॥
त्रियवार कीन्ही रति तबै, भयेब्रह्मा विष्णुमहेशहो॥
जेठे विधि विष्णु लघु तिहि, तीज शम्भू शेषहो १८

सोरठा–उत्पतिआदिप्रकाश, यहि विधितेहिप्रसंगभो॥
कीन्हो भोगविलास, इकमनि कन्या काल है॥ १८॥

भवसागरकी रचना।

तोहि पीछे ऐसा भो लेखा। धर्मदास तुम करौ विवेका॥

निरंजनवचन अद्याप्रति।

अग्निपवन जलमहि आकाशा। कूर्म उदरते भयो प्रकाशा॥
पांचो अंस ताहि सन लीन्हा। गुण तीनों सीसनसों कीन्हा॥
यहि विधि भये तत्वगुणतीनों। धर्मराज तब रचना कीनो॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति।

गुणततसम कर देविहि दीन्हा। आपन अंश उत्पने कीन्हा॥
बुन्द तीन कन्या भग डारा। तासँग तीनों अंस सुधारा॥

---

१ यह तो पुरानी प्रतियोंमें ऐसाही है किन्तु नवीन प्रतियोंमें उपर्युक्त दोनों पंक्ति नहीं है जो विचार पूर्वक प्रसंगोंके पढनेसे ठीक नहीं जान पडता॥

पांच तत्त्व गुण तीनों दीन्हा । यहि विधिजगकीरचना कीन्हा ॥
प्रथम बुन्दते ब्रह्मा भयऊ । रज गुण पंच तत्त्वतेहि दयऊ ॥
दूजो बुन्द विष्णु जो भयऊ । सतगुण पंच तत्त्व तिन पयऊ ॥
तीजे बुन्द रुद्र उत्पाने । तमगुण पंच तत्त्व तेहि साने ॥
पंच तत्त्व गुण तीन खमीरा । तीनों जनको रच्यो शरीरा ॥
ताते फिरि फिरि परलय होई । आदि भेद जाने नहिं कोई ॥
कहै धर्म कामिनि सुन बानी । जो मैं कहूँ लेहु सो मानी ॥
जीव बीज आहै तुव पासा । सो ले रचना करहु प्रकाशा ॥
कहै निरंजन पुनि सुनु रानी । अब अस करहू आदि भवानी ॥
त्रय सुत सौंपतोहि कहँ दीन्हा । अब हमपुरुषसेवचित लीन्हा ॥
राज करहु तुम लै तिहुँवारा । भेद न कहियो काहु हमारा ॥
मोर दरश त्रय सुत नहिं पैहैं । जो मुहि खोजत जन्म सिरैहैं ॥
ऐसो मता दिढैहो जानी । पुरुष भेद नहिं पावै प्रानी ॥
त्रयसुत जबहिंहोहिं बुधिवाना । सिंधु मथन दे पटहु निदाना ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति । छन्द ।

कहेहु बहुत बुझाय देविहि, गुप्त भये तब आहिहो ॥
शून्य गुफहि निवास कीन्हों, भेद लह को ताहिहो ॥
वह गुप्त भा पुनि संग सबके, मन निरंजनजानिये ॥
मन पुरुष भेद उच्छेद देवे, आपु परगट आनिये ॥
सोरठा-जीवभयेमतिहीन, परिसिअगम सो कालको ॥
जनम जनम भयेखीन, मुरुचा कर्म अकर्मको १९
जीव सतावे काल, नाना कर्म लगायके ।
आप चलावे चाल, कष्टदेय पुनि जीवको ॥ २० ॥

सिन्धुमथन और चौदह रत्न उत्पत्तिकी कथा।

त्रय बालक जब भये सयाने। पठये जननी सिंधु मथाने॥
बालक मातै खेल खिलारी। सिंधुमथन नहिं गये उखरारी॥
तेहि अंतर इक भयो तमासा। सो चरित्र बूझो धर्मदासा॥
धार्यो योग निरंजन राई। पवन अरंभ कीन्ह बहुताई॥
त्यागो पवनरहित पुनि जबही। निकसेउ वेद स्वास संगतबही॥
स्वास संग आयेउ सो वेदा। बिरलाजन कोइ जाने भेदा॥
अस्तुति कीन्ह वेदपुनि ताहां। आज्ञा का मोहि निर्गुणनाहां॥
कह्यो जाय करु सिंधुनिवासा। जेहि भेटे जैहौ तिहि पासा॥
उठि आवाज रूप नहिं देखा। जोति अगम दिखलावत भेषा॥
जलेउ वेद पुनि तेज अपाने। तेज अन्न पुनि विष संधाने॥
चले वेद तहँवा कहँ जाई। जहँवा सिंधु रचा धर्मराई॥
पहुँचे वेद तब सिंधु मँझारा। धर्मराय तब युक्ति विचारा॥
गुप्त ध्यान देविहि समुझावा। सिंधुमथन कहँ कसविलमावा॥
पठवहु बेगि सिंधु त्रय वारा। दृढकै सोचहु वचन हमारा॥
बहुरि आप पुनि सिंधुसमाना। देवी कीन्ह मथन अनुमाना॥
तिहुँ बालक कह कहँसमुझायी। आशिशदे पुनि तहां पठायी॥
पैहो वस्तु सिंधुके माहीं। जाहु बेगि तीनों सुत ताहीं॥
चलिभौ ब्रह्मा मान सिखाही। दोइ लहुरा पुनि पाछे जाई॥

छन्द।

त्रय सुत बालखेलत चले, ज्यों सुभग बालमरालहो॥
एकगहिछोडतमहीपुनि, एककरगहिचलतलटपटचालहो॥
क्षणही धावतक्षणस्थिरखडे, क्षणभुजहिगरलावहीं॥
तेहि समयकी शोभाभली, नहिं वेदताकहँ गावहीं॥

सोरठा–गये सिंधुके पास, भये ठाढ तीनों जने ॥
युक्ति मथनपरकास, एकएकको निरखहीं॥२१॥

प्रथम वार सिन्धुमथन ।

तीनों कीन्ह मथन तब जाई । तीन वस्तु तीनों जन पाई ॥
ब्रह्मा वेद तेज तेहि छोटा । लहुरा तासु मिले विष खोटा ॥
भेटि वस्तु त्रय तीनों भाई । चलिभये हर्ष कहत जहँ माई ॥
मातापहँ आये त्रय बारा । निज निज वस्तु प्रगट अनुसारा
माता आज्ञा कीन्ह प्रकाशा । राखु वस्तु तुम निज निज पासा॥

द्वितीय वार सिन्धुमथन ।

पुनि तुम मथहु सिंधुकहे जाई । जो जिहि मिले लेहु सो भाई ॥
कीन्ह चारितअसआदि भवानी । कन्या तीन कीन्ह उत्पानी ॥
कन्या तीन उत्पान्यो जबहीं । अंस वारिमहँ नायो सबहीं ॥
सब माताको आगे कीन्हा । माता बांटि तिन्हन कहँ दीन्हा॥
पठयो सिंधु माहिं पुनि ताहीं । त्रय सुत मर्मसो जानत नाहीं ॥
पुनि तिन मथनसिंधुको कीन्हा। भेंट्यो कन्या हर्षित ह्वै लीन्हा॥
कन्या तीनहु लीन्हें साथा । आ जननी कहँ नायउ माथा ॥
माता कहे सुनहु सुत मोरा । यह तो काज भये सब तोरा ॥
एक एक बांटि तीनहुको दीन्हा । करहु भोग अस आज्ञा कीन्हा॥
सावित्री ब्रह्मा तुम लेऊ । है लक्ष्मी विष्णु कहँ देऊ ॥
पारवती शंकर कहँ दीन्ही । ऐसी माता आज्ञा कीन्ही ॥
तीनउ जन लीन्ही सिर नाई । दीन्ह अद्या जस भाग लगाई ॥
पाई कामिनि भये अनंदा । जस चकोर पाये निशिचंदा ॥
काम बसी भए तीनों भाई । देव दैत दोनों उपजाई ॥
धर्मदास परखो यह बाता । नारी भयी हती सो माता ॥
माता बहुरि कहे समझायी । अब फिर सिंधुमथो तुम भाई ॥
जो जेहि मिलै लेहुसो जाई । अब जनिकरो विलंब तुम भाई ॥

तृतीय वार सिन्धुमथन ।

त्रय सुत चले तब माथ निवायो । जो कछु कहेउ करब हम जायो ॥
मथ्यो सिंधु कछु विलंब न कीन्हा । मिला वेदसो ब्रह्मै लीन्हा ॥
चौदह रतनकी निकसी खानी । ले माता पहँ पहुँचे आनी ॥
तीनहु बंधु हरषित ह्वै लीन्हा । विष्णु सुधापायउ हरविष दीन्हा

अद्याका तीनों पुत्रोंको सृष्टि रचनेकी आज्ञा देना और सब मिलकर पांच खानकी उत्पत्ति करना ।

पुनि माता अस वचन उचारा । रचहु सृष्टि तुम तीनों वारा ॥
अंडज उत्पाति कीन्हीं माता । पिंडज ब्रह्मा कर उत्पाता ॥
ऊष्मज खानि विष्णु व्यवहारा । शिव अस्थावर कीन्ह पसारा ॥
चौरासी लख योनिन कीन्हा । आधा जल आधा थल दीन्हा ॥
एक तत्त्व अस्थावर जाना । दोय तत्त्व ऊष्मज परवाना ॥
तीन तत्त्व अंडज निरमायी । चार तत्त्व पिंडज उपजायी ॥
पांच तत्त्व मानुष विस्तारा । तीनों गुण तेहि माहिं सवाँरा ॥

ब्रह्मा वेद पढकर निराकारका पता पाना ।

ब्रह्मा वेद पढन तब लागा । पढत वेद तब भा अनुरागा ॥
कहे वेद पुरुष इक आही । हैं निरंकार रूप नहिं ताही ॥
शून्य माहिं वहि जोत दिखावे । चितवन देह दृष्टि नहिं आवे ॥
स्वर्ग सीस पग आहि पतला । तेहि मत ब्रह्मा भौमतवाला ॥
चतुरानन कहे विष्णु बुझावा । आदिपुरुष मोहिं वेद लखावा ॥
पुनि ब्रह्मा शिवसों अस कहई । वेद मथन पुरुष एक अहई ॥

ब्रह्मावचन विष्णुप्रति ।

अहै पुरुष इक वेद बतावा । वेद कहे हम भेद न पावा ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

तब ब्रह्मा माता पहँ आवा । करि प्रणाम तब टेके पांवा ॥

ब्रह्मावचन अद्याप्रति ।

हे माता मोहि वेदलखावा । सिरजनहार और बतलावा ॥

छन्द ।

ब्रह्मा कहे जननी सुनो केहहु, कहा कंत तुम्हार है॥
कीजै कृपा जनि मोहि दुरावो, कहां पिता हमार है॥

अद्यावचन ब्रह्माप्रति ।

कहे जननी सुनहु ब्रह्मा, कोउ नहिं जनक तुम्हारहो॥
हमहिते भई सब उत्पति, हमहि सब कीन सम्हार हो२१

ब्रह्मावचन अद्याप्रति ।

सोरठा–ब्रह्मा कहे पुकार, सुनु जननी तैं चित्त दे ॥
कहत वेद निरुवार, पुरुष एक सो गुप्त है॥२२॥

अद्यावचन ब्रह्मा प्रति ।

कहे अद्या सुनु ब्रह्मकुमारा । मोसे नहिं कोउ स्रष्टा न्यारा ॥
स्वर्ग मृत्यु पाताल बनाई । सात समुन्दर हम निरमाई ॥

ब्रह्मावचन अद्याप्रति ।

मानो वचन तुमहि सब कीन्हा । प्रथम गुप्त तुम कस रख लीन्हा॥
जबै वेद मुहि कहै बुझाई । अलख निरञ्जन पुरुष बताई ॥
अब तुम आप बनो करतारा । प्रथम काहे न किया बिचारा ॥
जो तुम वेद आप कथि राखा । तोकसतुमअलखनिरञ्जनभाखा॥
आपे आप आप निरमाई । काहे न कथन कीन तुम भाई॥
अब मोसन तुम छल जनि करहू । सांचे सांच सब कहि उच्चरहू॥
जब ब्रह्मा यहि विधि हठ ठाना । तब अद्या मन कीन्हति वाना॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

केहि विधि यहि कहूँ समझाई । विधि नहिं मानत मोर बडाई ॥
जो यहि कहौं निरञ्जन बाता । के विधि समझे यह विख्याता ॥
प्रथम कह्यो निरञ्जन राई । मोर दरश काहू नहिं पाई ॥
अबै जो यही अलख लखावों । केहिविधिकहिताकोदिखलाओं ॥

अद्यावचन ब्रह्माप्रति।

असविचारपुत्रब्रह्मैसमझावा। अलखनिरञ्जननहिंदरस दिखावा॥

ब्रह्मावचन अद्याप्रति।

ब्रह्मा कहे मोहिं ठौर बतावो। आगा पीछा जनि तुम लाओ॥
मैं नहिं मानो तुम्हरी बाता। ऐसी बात न मोहि सुहाता॥
प्रथम तुम मुहिदान भुलावा। अब तुम कहो नदरसदिखावा॥
तासु दरस न पैहो पूता। ऐसी बात कहो अजगूता॥

छन्द।

दरस दिखाय तत्कालदीजे, मोहिनभरोस तुम्हारहो।
संशयनिवार यहिकाल दीजे, कीजे न बिलंब लगारहो॥

आद्यवचन ब्रह्मा प्रति।

कहे जननी सुनो ब्रह्मा, कहौं तोसों सत्तही॥
सातस्वर्ग है माथ ताको, चरण पताल सप्तही॥२२॥
सोरठा-लेहु पुष्प तुम हाथ, जो इच्छा तेहि दरशकी
जाय नवाओ माथ, ब्रह्मा चले शिर नाइके२३॥

जननी गुन्यो वचन चितमाहीं। मोरि कही यह मानति नाहीं॥
या कहँ वेद दीन्ह उपदेशा। पै दरस ते नहिं पावे भेशा॥
कह अष्टंगि सुनोरे बारा। अलख निरंजन पिता तुम्हारा॥
तासु दरश नहिं पैहै पूता। यह मैं वचन कहौं निजगूता॥
ब्रह्मा सुनि व्याकुलह्वै धावा। परसन सीस ध्यान हिय लावा॥
ब्रह्मा चले जननि सिर नाई। सीस परासि आवै तोहि ठाई॥
तुरतहि ब्रह्मा दीन्ह रिंगायी। उत्तर दिशा बेगि चलि जाई॥
आज्ञा मांगि विष्णु चले बाला। पिता दरशको चले पताला॥
इत उत चितय महेश न डोला। सेवा करत कछू नहिं बोला॥

तेहिशिवमन अस चिंत अभावा । सेवा करन जननि चितलावा ॥
यहिविधिबहुतदिवसचलिगयऊ । माता सोच पुत्र कह कियऊ ॥

विष्णुका पिताके खोजसे लौटकर पिताके चरणतक
न पहुँचनेका वृतान्त कहना ।

प्रथम विष्णु जननी ढिग आये । अपनी कथा कहि समुझाये ॥
भेंट्यो नाहि मोहि पगु ताता । विषज्वाला स्यामल भौगाता ॥
व्याकुल भयऊ तबै फिरि आवा । पिता पगु दरस मैं नहिं पावा॥
सुनि हरषित भइ आदि कुमारी । लीन्हविष्णुकहँनिकटदुलारी ॥
चूमेउ बदन सीस दियो हाथा । सत्य सत्य बोलेउ सुत बाता ॥

धर्मदासवचन कबीरप्रति ।

कहे धरमनि यह संशय बीती । साहब कहहु ब्रह्माकी रीती ॥
पितासीसी तन परसन कीन्हा । कि होय निरास पीछे पग दीन्हा॥

छन्द ।

गयउ ब्रह्मा सीम परसन, कथा ता दिनकी कही ॥
भयो दिष्ट मेराव कि, नहिं तासु दरसन तिनलही ॥
यह बरनि सब कहो सतगुर, एक एक बिलीयके ॥
निजदास जानि परगास कीजे, धरहुनिजजनि गायके २३

सोरठा–प्रभु हम हैं तुव दास, जन्म कृतारथ मोर करि॥
करहु वचन परगास, तेहि पीछे जो चरितभा २४

पिताके खोजमें गये हुये ब्रह्माकी कथा । कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

धरमदास मुहिंअतिप्रियअहहू । कहो सँदेस परखि दृढ गहहू ॥
चलत ब्रह्म तब वार न लावा । पिता दास कहँ अतिमन भावा॥
तेहि स्थान पहुँचि गे जाई । नाहिं तहँ रवि शशि शून्य रहाई॥
बहुविधि अस्तुति करे बनायी । ज्योति प्रभाव ध्यान तहँ लाई ॥

ऐसे बहु दिन गये बितायी। नहिं पायो ब्रह्मा दरश पितायी॥
शून्य ध्यान युग चार गमावा। पिता दरश अजहूँ नहिं पावा॥

ब्रह्माके लिये अद्याकी चिन्ता।

ब्रह्मा तात दरश नहिं पाई। शून्य ध्यान महँ जुग बहु जाई॥
माता चिंता करत मन माहाँ। जेठ पुत्र ब्रह्मा रहु काहाँ॥
किहिविधि रचना रचहुँ बनाई। ब्रह्मा आवे कौन उपाई॥

गायत्री उत्पत्ति।

उबटि शरीर मैल(न)गहि काढी। पुत्री रूप कीन्ह रचि ठाढी॥
शक्ति अंश निज ताहि मिलावा। नाम गायत्री ताहि धरावा॥
गायत्री मातहि सिर नावा। चरन चूमि निज सीस चढावा॥

गायत्रीवचन अद्याप्रति।

गायत्री विनवै कर जोरी। सुनु जननी तक विनती मोरी॥
कौन काज मो कहँ निरमाई। कहो बचन लेउँ सीस चढाई॥

अद्यावचन गायत्रीप्रति।

कहे अद्या पुत्री सुनु बाता। ब्रह्मा आहि जेठहि तुव भ्राता॥
पिता दरशकहँ गयो अकाशा। आनो ताहि वचन परकाशा॥
दरश तात कर वह नहिं पावे। खोजत खोजत जन्म गमावे॥
जौने विधिते इहँवा आई। करो जाय तुम तौन उपाई॥

गायत्रीका ब्रह्माके खोजमें जाना। कबीरवचन धर्मदासप्रति।

चलि गायत्री मारग आई। जननी वचन प्रीति चितलाई॥
चलत भई मारग सुकुमारी। जननी बचन ध्यान उरधारी॥

छन्द।

जाय देख्यो चतुरमुख, कहँ नाहिं पलक उघारई॥
कछुक दिन सो रही तहँवा, बहुरि युक्ति बिचारई॥
कौन विधि यह जागि है,अब करों कोन उपाय हो॥
मन गुनित सोच बहुतविधि,ध्यान जननी लाय हो॥२४

ब्रह्माको जगानेके लिये अद्याका गायत्रीको युक्ति बताना ।

सोरठा–अद्या आयसुपाइ, गायत्री तब ध्यानमहँ ॥
निज कर परसेहु जाइ, ब्रह्मा तबहीं जागि है॥२५

गायत्री पुनि कीन्ही तैसी । माता युक्ति बतायी जैसी ॥
गायत्री तब चित्त लगाई । चरणकमल कहँ परसेउ जायी ॥

ब्रह्माका जागकर गायत्रीपर क्रोध करना ।

ब्रह्मा जाग ध्यान मन डोला । व्याकुलभयो बचन तब बोला ॥
कवन अहै पापिन अपराधी । कहा छुडायहु मोरि समाधी ॥
शाप देहुँ तो कहँ मैं जानी । पिताध्यानमोहिखंडयो आनी ॥

गायत्री वचन ब्रह्माप्रति ।

कहि गायत्री मोहि न पापा । बूझि लेहु तब देहहु शापा ॥
कहों तोहिसो सांची बाता । तोहि लेन पठयी तुव माता ॥
चलहु वेगि जनि लावहु बारे । तुम बिन रचना को विस्तारे ॥

ब्रह्मावचन गायत्रीप्रति ।

ब्रह्मा कहे कौन विधि जाऊं । पिता दरश अजहूं नहिं पाऊं॥

गायत्रीवचन ।

गायत्री कह दरश न पैहो । बेगि चलहु नहिं तो पछतै हो॥

ब्रह्माका गायत्रीको झूठी साक्षी देनेको कहना और गायत्रीका ब्रह्मासे रति करनेकी बात कहना ।

ब्रह्मा कहै देहु तुम साखी । परस्यो सीस देख मैं आंखी ॥
ऐसे कहो मातु समुझायी । तो तुम्हरे सँग हम चलि जायी॥

गायत्रीवचन ।

कह गायत्री सुन श्रुति धारी । हम नाहिं मिथ्या बचन उचारी॥
जो मम स्वारथ पुरवहु भाई । तो हम मिथ्या कहब बनाई ॥

ब्रह्मावचन ।

कह ब्रह्मा नहिं लखी कहानी । कहौ बुझाय प्रगटकी बानी ॥

गायत्रीवचन।

कह गायत्री देहु रति मोही। तो कह झूठ जिताऊं तोही॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति।

गायत्री कहे है यह स्वारथ। जानि कहौ मैं पुन परमारथ॥
सुनि ब्रह्मा चित करे बिचारा। अब का यत्न करहुँ इहि बारा॥

छन्द।

जो विमुख या कह करों अब तो नहिं बन आवई॥
साखि तो यह देय नाहिं जननि मोहि लजावई॥
यहाँ नाहिं पिता पायो भयो न एको काज हो॥
पाप सोचत नहिं बनै अब करौं रवि विधि साजहो॥२५॥
सो०-कियो भोग रतिरंग, विसरचो सो मन दरशका॥
दोउ कहँ बढ्यो उमंग, छल मति बुद्धि प्रकाशकिये॥२६

सावित्री उत्पत्तिकी कथा।

कह ब्रह्मा चल जननी पासा। तब गायत्री वचन प्रकाशा॥
औरौ करौ युक्ति इक ठानी। दूसरी साखि लेहु उत्पानी॥
ब्रह्मा कहे भली है बाता। करहु सोइ जेहि मानै माता॥
तब गायत्री यतन बिचारा। देह मैल गहि कीन्ह नियारा॥
कन्या रचि निज अंश मिलावा। नाम सावित्री तासु धरावा॥
गायत्री तिहि कह समुझावा। कहियो दरश ब्रह्मा पितु पावा॥
कह सावित्री हम नहिं जानी। झूठ साखि दे आपनी हानी॥
यह सुनि दोउ कहँ चिंता व्यापा। यह तो भयो कठिन संतापा॥
गायत्री बहु विधि समझायी। सावित्रीके मन नहिं आयी॥
पुनि गायत्री कहा बुझाई। तब सावित्री बचन सुनाई॥
ब्रह्मा कर मोसों रति साजा। तो मैं झूठ कहों यहि काजा॥
गायत्री ब्रह्महि समुझावा। दै रति या कहँ काज बनावा॥
ब्रह्मा रति सावित्रिहि दीन्हा। पाप मोट आपन शिर लीन्हा॥

सावित्री कर दूसर नाऊं । कहि पुहुपावति वचन सुनाऊं ॥
तीनों मिलिके चलि भे तहवाँ । कन्या आदि कुमारी जहवाँ ॥

ब्रह्माका गायत्री और सावित्रीके साथ माताके पास पहुँचना और सबका शाप पाना ।

करि प्रणाम सन्मुख रहे जाई । माता सब पूछी कुशलाई ॥

अद्यावचन ब्रह्माप्रति ।

कहु ब्रह्मा पितु दरशन पाये । दूसरि नारि कहांसे लाये ॥

ब्रह्मावचन ।

कह ब्रह्मा दोऊ हैं साखी । परस्यो सीस देव इन आंखी ॥

अद्यावचन गायत्रीप्रति ।

तब माता बूझे अनुसारी । कहु गायत्री वचन विचारी ॥
तुम देखा इन दर्शन पावा । कहा सत्य दर्शन परभावा ॥

गायत्रीवचन ।

तब गायत्री वचन सुनावा । ब्रह्मा दर्श सीस पितु पावा ॥
मैं देखा इन परसेउ शीशा । ब्रह्माहि मिले देव जगदीशा ॥

छंद ।

लेइ पुहुप परसेउ शीशपितु इनदृष्टिमें देखत रही ॥
जल ढार पुहुप चढाय दीन्ह हे जननियह है सही ॥
पुहुपते पुहुपावती भयी प्रगट ताही ठामते ॥
इनहु दर्शन लह्यो पितुको पूछहू इहि वामते ॥२६॥
हे[1] जननी यह है सही तुम पूछि लो पुहुपावती ॥
सबही साँच मैं तोसो कहूँ नाहिं झूठ है एको रती ॥

अद्यावचन पुहुपावती प्रति ।

माता कहै पुहुपावतीसो कहो सत्य हि मो सना ॥
जो चढे सीसहि पिताके तुम बचन बोलहु ततखना ॥

१ यह छन्द पुरानी प्रतियोंमें नहीं है ।

सो०—कहुपुहुपावति मोहि, दरश कथा निरवारके ॥
यह मैं पूछौं तोहि, किमब्रह्मा दरशन किये२७॥

सावित्रीवचन ।

पुहुपावती वचन तब बोली । माता सत्य वचन नहिं डोली ॥
दर्शन सीस लह्यो चतुरानन । चढे सीस यह धर निश्चय मन॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

साख सुनत अद्या अकुलानी । भा अचरज यह मर्म न जानी॥

अद्याकी चिन्ता ।

अलख निरंजनअस प्रणभाखी । मो कहँ कोउ न देखै आंखी ॥
ये तीनहुँ कस कहहिं लबारी । अलख निरंजन कहहु सम्हारी॥
ध्यान कीन्ह अष्टंगी तिहिक्षण । ध्यान माहिं असकह्यो निरंजन॥

निरञ्जनवचन ।

ब्रह्मा मोर दरश नहिं पाया । झूठि साखि इन आन दिवाया ॥
तीनों मिथ्या कहा बनाई । जनि मानहु यह है लबराई ॥

अद्याका ब्रह्माको शाप देना ।

यह सुनि माता कीन्हें दापा । ब्रह्मा कहँ तब दीन्हो शापा ॥
पूजा तोरि करै कोइ नाहीं । जो मिथ्या बोलेउ मम पाहीं ॥
इकमिथ्याअरु अकरमकीन्हा । नरक मोट अपने शिर लीन्हा ॥
आगे है जो शाख तुम्हारी । मिथ्या पाप करहिं बहुभारी ॥
प्रगट करहिं बहु नेम अपारा । अन्तर मैल पाप विस्तारा ॥
विष्णु भक्तसों करहिं हँकारा । ताते परि हैं नरक मँझारा ॥
कथा पुराण औरहिं समुझै हैं । चाल बिहून आपन दुख पैहैं ॥

---

१ पुराने ग्रन्थोंमें यह चौपाई इस प्रकार है—
सावित्री अस वचन उचारी * मानो निश्चय बचन हमारी ।

उनसे और सुनैं जो ज्ञाना । करिसो भक्ति कहों परमाना ॥
और देवको अंश लखै है । औरन निन्दि काल मुख जैहैं ॥
देवन पूजा बहु विधि लैहैं । दछिना कारण गला कटै हैं ॥
जा कहा शिष्य करैंपुनिजायी । परमारथ तिहि नाहिं लखायीं ॥
परमारथके निकट न जैहैं । स्वारथ अर्थ सबै समुझैहैं ॥
आप स्वारथी ज्ञान सुनैहैं । आपनि पूजा जगत दृढै हैं ॥
आपन पूजा जगहि दिढायी । परमारथके निकट न जायी ॥
आप ऊंच औरहि कहँ छोटा । ब्रह्मा तोर सखा होइ खोटा ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

जब माता अस कीन्ह प्रहारा । ब्रह्मा मूर्छि मही कर धारा ॥

अद्याका गायत्रीको शाप देना ।

गायत्री जान्यो तिहि वारा । हुइ हैं तोर पंच भरतारा ॥
गायत्री तोर होइ वृषभ भर्तारा । सात पांच और बहुत पसारा ॥
धर औतार अखज तुम खायी । बहुत झूठ तुम वचन सुनायी॥
निजस्वारथ तुम मिथ्या भाखी । कहा जानि यह दीन्हीं साखी ॥
मानि शाप गायत्री लीन्ही । सावित्रिहि तबचितवनकीन्ही॥

अद्याका सावित्रीको शाप देना ।

पुहुपावति निजधाम धरायेहु । मिथ्याकहनिजजन्मनशायेहु ॥
सुनहुपुष्पावतितुम्हारोविश्वासा । नहिं पूजिहैंतुम्हसे कछुआशा ॥
होय कुगंध ठौर तव बासा । भुगतहु नरककामगहि आसा ॥
जो तोहि सींच लगावे जानी । ताकर होय वंशकी हानी ॥
अब तुम जाय धरो औतारा । क्योडा केतकि नाम तुम्हारा ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति । छंद ।

भये शाप वश तीनोंबिकलमतिहीन छीनकुकर्मते ॥
यह काल कलाप्रचंडकामिनि डस्योसबकहँचर्मते ॥

ब्रह्मादि शिवसनकादिनारद कोउ न बचि भाग हो ॥
सुनु धरमनिविरलबाचे शब्द सतसोलागि हो ॥२८॥
सो०–सत्य शब्द परताप, कालकला व्यापे नहीं ॥
निकट न आवै पाप, मन वच कर्म जो पदगहे२८

शाप दे देनेपर अद्याका पश्चात्ताप और निरञ्जनके डरसे डरना ।

शाप तीनोंको देलियो मनमाहिं तब पछतावई ॥
कसकरहिमोहि निरञ्जनापल छमामोहि न आवई ॥

निरञ्जनका अद्याको शाप देना ।

अकाशबानी तबै भयी यहू कहा कीन भवानिया ॥
उत्पत्तिकारणतोहिपठाई कहाचरितयह ठानिया ॥
सो०--नीचहि उंच सिताय, बदल मोहि सोपावई ॥
द्वापर युग जब आय, तुमहिं पंच भतार हो ॥२९॥

अद्याका निडर होना । कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

शाप ओयलजबसुनेउ भवानी । मनसन गुने कहा नहिं बानी ॥
ओयल प्रभाव शाप हम पाया । अब कहा करब निरंजनराया ॥
तोरे वस परी हम आई । जस चाहो तस करो उपाई ॥

विष्णुका गौरसे श्याम होनेका कारण ।

अद्यावचन विष्णुप्रति ।

पुनि कहि माता विष्णु दुलारा । सुनहू पुत्र इक वचन हमारा ॥
सत्य सत्य तुम कहो बुझाई । पितुपद परसन जब गै भाई ॥
प्रथम हुतो तुव गौर शरीरा । कारण कौन श्याम भए धीरा ॥

विष्णुवचन अद्याप्रति ।

आज्ञा पाय हम तत्काला । पितु पद परसन चले पताला ॥
अक्षत पुहुप लीन्ह करमाहाँ । चले पताल पंथ मग जाहाँ ॥
पहुँचि शेषनाग पहँ गयऊ । विषके तेज हम अलसयऊ ॥

भयो श्याम विषतेज समावा । भइ अवाज असवचन सुनावा ॥
अहो विष्णु माता पहँ जाई । बचन सत्य कहियो समझाई ॥
सतयुग त्रेता जैहे जबही । द्वापर है चौथा पद तबही ॥
तब तुम होहु कृष्ण अवतारा । लैहो ओयलसो कही बिचारा ॥
नाथहु नाग कलिंदी जाई । अब तुम जाहु विलम्ब न लाई ॥
ऊंच होइके नीच सतावे । ताकर ओएल मोहि सो पावे ॥
जो जिव देइ पीर पुनि काहू । हम पुनि ओएल दिवावे ताहू ॥
पहुँचे हम तब ही तुव पासा । कीन्हेउ सत्य वचन परकासा ॥
भेटेउ नाहिं मोहि पद ताता । विष ज्वाला साँवल भो गाता ॥
व्याकुलभयो तबै फिरि आयो । पितु पद दर्शन मैं नहिं पायो ॥

अद्याका विष्णुको ज्योतिका दर्शन कराना ।

इतना सुनि हर्षितभइ माई । लीन्ह विष्णु कहँ गोद उठाई ॥
पुनि अस कहेउ आदिभवानी । अब सुनहु पुत्र प्रिय ममबानी ॥
देख पुत्र तोहिं पिता भिटावों । तोरे मन कर धोख मिटावों ॥
प्रथमहिं ज्ञान दृष्टिसों देखो । मोर वचन निज हृदय परेखो ॥
मनस्वरूप करता कहँ जानो । मनते दूजा और न मानो ॥
स्वर्ग पताल दौर मन केरा । मन अस्थिर मन अहै अनेरा ॥
क्षणमहँ कला अनंत दिखावे । मनकहँ देख कोइ नहिं पावे ॥
निराकार मनहीको कहिये । मनकीआशदिवसनिशिरहिये ॥
देखहु पलटि शून्यमहँ जोती । जहवाँ झिल मिल झालरहोती ॥
फेरहु श्वास गगन कहँ धाओ । मार्ग अकाशहिध्यानलगाओ ॥
जैसे माता कहि समुझावा । तैसे विष्णु ध्यान मन लावा ॥

छंद ।

पैठि गुफा ध्यान कीन्हो श्वास संयम लायके ॥
पवन धूँका दियो जबते गगन गरज्यो आयके ॥

बाजासुनततबमगनभापुनिकीन्हमनकसख्यालहो॥
शून्यस्वेतपीतसब्जलाल दिखायरंगजंगालहो॥३०॥
सो०-ताह पीछधर्मदास, मन पुनि आपदिखायऊ॥
कीन्हज्योति परकास,देखिविष्णुहर्षितभये३०॥
मातहि नायो शीश, बहु अधीनपुनि विष्णु भा॥
मैं देखा जगदीश, हे जननी परसाद तुव॥३१॥

धर्मदासवचन ।

धर्मदास गहि टेके पाया। हे साहिब इक संशय आया॥
कन्या मनको ध्यान बतावा। सो यह सकल जीव भरमावा॥

सद्गुरुवचन ।

धर्मदास यह काल स्वभाऊ। पुरुष भेद विष्णु नहिं पाऊ॥
कामिनीकी यह देखहु बाजी। अमृत गोय दियो विष साजी॥
जात काल दूजा जनि जानहु। निरखि धर्मसत्यहिंपुर आनहु॥
प्रगट सु तोहिं कहों समुझाई। धर्मदास परखहु चितलायी॥
जस परगट तस गुप्त सुभाऊ। जोरह हृदयसा बाहर आऊ॥
जब दीपक बारै नर लोई। देखहु ज्योति सुभावविलोई॥
देखत ज्योति पतंग हुलासा। प्रीति जान आवै तिहिपासा॥
परसत होवे भसम पतंगा। अन जाने जरि मरहि मतंगा॥
ज्योतिस्वरूप कालअसआही। कठिन काल वह छाँडतनाहीं॥
कोटि विष्णु औतारहि खाया। ब्रह्मा रुद्रहि खाय नचाया॥
कौन विपति जीवनकी कहऊं। परखिवचननिजसहजहिरहऊं॥
लाख जीव वह नित्यहि खाई। अस विकराल सो कालकसाई॥

धर्मदास वचन ।

धर्मदास कह सुनहु गुसांई। मोरे चित्त संशय अस आई॥
अष्टंगीहि पुरुष उत्पानी। जिहिविधिउपजी सो मैं जानी॥

पुनि वहि ग्रास लीन्ह धर्मराई । पुरुष प्रताप सु बाहर आई ॥
सो अष्टंगीहिअस छल कीन्हा । गोइसि पुरुष प्रगटयमकीन्हा ॥
पुरुष भेद नाहिं सुनन बतावा । काल निरंजन ध्यान करावा ॥
यह कस चरित कीन्ह अष्टंगी । तजापुरुष भइ कालकि संगी ॥

सदगुरुवचन ।

धर्म सुनहु जन नारि सुभाऊ । अब तुहि प्रगटवरणिसमझाऊ॥
होय पुत्री जेहि घर माहीं । अनेक जतन परितोषै ताही ॥
वस्त्र भक्ष सुख सेजनिवासा । घर बाहर सब तिहि विश्वासा ॥
यज्ञ कराय देय पितु माता । बिदाकीन्ह हितप्रीतिसों ताता॥
गयी सुता जब स्वामी गेहा । रात्या तासु संग गुण नेहा ॥
माता पिता सबै बिसरावा । धर्मदास अस नारिस्वभावा ॥
ताते अद्या भई विगानी । काल अंग ह्वै रही भवानी ॥
ताते पुरुष प्रगटने लायी । काल रूपविष्णुहि दिखलायी ॥

धर्मदासवचन कबीरप्रति ।

हे साहब यह जान्यो भेदा । अब आगेका करहु उछेदा ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

पुनि माता कहि विष्णुदुलारा । मरदचो मान जेठ निजबारा ॥
अहो विष्णु तुम लेहुअशीशा । सब देवनमें तुमहीं ईशा ॥
जो इच्छा तुम चितमें धरिहौं । सो सब तोर काज मैं करिहौं ॥

मायाका विष्णुको सर्वप्रधान बनाना ।

प्रथम पुत्र ब्रह्मा दुरि गयऊ । अकरम झूठ ताहि प्रिय भयऊ॥
देवन श्रेष्ठ तुमहिं कहँ मानहिं । तुम्हरी पूजा सब कोइ ठानहिं॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

कृपा वचन अस मातै भाखा । सबते श्रेष्ठ विष्णु कह राखा ॥
माता गयी रुद्रके पासा । देख रुद्र अति भये हुलासा ॥

अष्टाका महेशको वरदान देना।

पुनि लहुरा कहँ पूछे माता। तुम शिव कहो हृदयकी बाता॥
माँगहु जो तुम्हरे चित भावे। सो तोहि देऊ माता फुरमावे॥
दोइ पुत्रन कहँ मात दृढावा। माँग महेश जोइ मनभावा॥

महेशवचन।

जोरि पानि शिव कहवे लीन्हा। देहु जननि जो आज्ञा कीन्हा॥
कबहिं न विनसे मेरी देही। हे माता माँगों वर एही॥
हे जननी यह कीजे दाया। कबहुँ न विनशै मेरी काया॥

अष्टावचन।

कह अष्टंगी अस नहिं होई। दूसरा अमर भयो नहिं कोई॥
करहु योग तप पवन सनेहा। रहै चार युग तुम्हरी देहा॥
जौलौं पृथिव अकाश सनेही। कबहुं न बिनशै तुम्हरी देही॥

धर्मदासवचन।

धर्मदास विनती चितलाई। ज्ञानी मोहि कहो समुझाई॥
यह तो सकल भेद हम पायी। अब ब्रह्माको कहो उथायी॥
अष्टा शाप ताहि कहँ दीन्हा। तेहि पीछे ब्रह्मा कस कीन्हा॥

कबीरवचन।

विष्णु महेश जबै वर पाये। भये आनन्द अतिहि हरषाये॥
दोनों जने हरख मन कीना। ब्रह्मा भयो मान मद हीना॥
धर्मदास मैं सब कुछ जानों। भिन्न भिन्न कर प्रगट बखानों॥

शाप पानक कारण दुःखित हो ब्रह्माका विष्णुके पास जाकर अपना दुःख कहना और विष्णुका उसे आश्वासन देना।

ब्रह्मा मनमें भयो उदासा। तब चलिगयो विष्णुके पासा॥

ब्रह्मावचन विष्णुप्रति।

जाय विष्णुसे विनती ठाना। तुम हो बंधु देव परधाना॥
तुमपर माता भई दयाला। शाप विवश तुम भये बिहाला॥

निज करनी फल पायेहो भाई । किहि बिधि दोष लगाऊं माई ॥
अब अस जतन करोहो भ्राता । चले परिवार वचन रहे माता ॥

विष्णुवचन ।

कहे विष्णु छोडो मन भंगा । मैं करिहौं सेवकाई संगा ॥
तुम जेठे हम लहुरे भाई । चित संशय सब देहु बहाई ॥
जो कोइ होवे भक्त हमारा । सो सेवै तुम्हरो परिवारा ॥

छन्द ।

जग माहि ऐस दिढाइ हौं फलपुन्यआशाजोयहो ॥
यज्ञ धर्म रु करे पूजा द्विज बिना नहिं होय हो ॥
जो करे सेवा द्विजनकी तेहि महापुन्य प्रभाव हो ॥
सो जीवमोकहँ अधिक प्यारे राखिहौंनिजठावहो॥ ३१ ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

सो०—ब्रह्माभये आनंद, जबहि विष्णुअस भाषेऊ॥
मेटेउ चितकर द्वंद, सखा मोरसब सुखीभौ ३२॥

कालप्रपंच ।

देखहु धर्मनि काल पसारा । इन ठग ठग्यो सकल संसारा ॥
आशा दै जीवन बिलमावै । जन्म जन्म पुनि ताहि सतावै ॥
बलि हरिचंद बेनु बइरोचन । कुंती सुत औरो महिसोचन ॥
ये सब त्यागी दानि नरेशा । इन कहँ ले राखे केहि देशा ॥
जस गंजन इन सबकी कीन्हा । सो जग जाने काल अधीना ॥
जानत है जग होय न शुद्धी । काल अमर बलसबकीहरबुद्धी॥
मन तरंगमें जीव भुलाना । निज घर उलटिन चीन्हअजाना॥

धर्मदासवचन ।

धर्मदास कह सुनो गुसाईं । तबकी कथा मोहि समझाई ॥
तुम प्रसाद जमको छल चीन्हा । निश्चय तुम्हरे पदचित दीन्हा॥

भव बूडत तुमही गहि राखा । शब्द सुधारस मोसन भाखा ॥
अब वह कथा कहो समुझाई । शाप अन्त किय कौन उपाई॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति । गायत्रीके अद्याको शाप देनेका वृत्तान्त ।

धर्मनि तुम सन कहों बखानी । भाषो ज्ञान अगमकी बानी ॥
मातु शाप गायत्री लीन्हा । उलटि शाप पुनिमातहिंदीन्हा॥
हम जो पांच पुरुषकी जोई । पांचोंकी तुम माता होई ॥
बिना पुरुष तू जनि है बारा । सो जानही सकल सनसारा ॥
दुहुन शाप फल पायो भाई । उगरह भयो देह धरि आई ॥

जगत्‌की रचनाका विशेष वृत्तान्त ।

यह सब द्वंद बाद है गयऊ । तब पुनि जगकी रचनाभयऊ ॥
चौरासी लख योनिन भाऊ । चार खानि चारहु निरमाऊ ॥

छन्द ।

प्रथम अंडजरच्यो जननी, चतुरमुख पिंडज कियो ॥
विष्णु उष्मज रच्यो तबही, रुद्र अस्थावर लियो॥
लीन्ह रचि जेहि खानि चारों, जीव बंधन दीन्ह हो॥
होन लागी कृषीकारण, करण कर्ता चीन्ह हो॥ ३२॥
सोरठा–यहिविधिचारोंखानि, चारहुदिशिंविस्तारकिये ॥
धर्मदास चित जानि, वाणी चारिउ चारको॥ ३३॥

धर्मदास वचन कबीरप्रति ।

धर्मनि कहें जोरि युग पानी । तुमसतगुरु यह कह्यो बखानी ॥
चार खानिकी उत्पति भाऊ । भिन्न भिन्न मुहि बरणि सुनाऊ॥
चौरासी लख योनिन धारा । कौन योनि केतिक बिस्तारा॥

चार खानकी गिनती । कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

कह कबीर सुन धर्मनि वानी । योनि भावतोहि कहौं बखानी॥
भिन्न भिन्न सब कहु समझाऊँ । तुमसे अंत न कछू दुराऊँ ॥
तुम जिन शंका मानहु भाई । वचन हमार गहो चितलाई ॥

चौरासी लाख योनिकी गिनती ।

नौ लख जलके जीव बखानी । चौदह लाख पक्षी परवानी ॥
किरम कीट सत्ताइस लाखा । तीस लाख अस्थावर भाखा ॥
चतुर लक्ष मानुष परमाना । मानुष देह परम पद जाना ॥
और योनि परिचय नहिं पावे । कर्म बंध भव भटका खावे ॥

मनुष्य खानि सबसे अधिक क्यों है ? । धर्मदासवचन ।

धर्मदास नायो पद शीशा । यह समुझाय कहो जगदीशा ॥
सकल[1] योनिजिव एकसमाना । किमि कारण नहिं इकसमज्ञाना
सो चरित्र मुहि कहौ बुझाई । जाते चित संशय मिटजाई ॥

सद्गुरुवचन ।

सुनु धर्मनि निज अंशअभूषण । तोहि बुझाय कहो यह दूषण ॥
चार खानि जिव एकै आहीं । तत्त्व विशेष अहै सुन ताहीं ॥
सो अब तुमसों कहों बखानी । तत्त्व एक अस्थावर जानी ॥
ऊष्मज दोय तत्त्व परमाना । अंडज तीन तत्त्व गुणजाना ॥
पिंडज चार तत्त्व गुण कहिये । पांच तत्त्व मानुष तन लहिये॥
तासों होय ज्ञान अधिकारी । नरकी देह भक्ति अनुसारी ॥

किन २ खानिमें कौन २ तत्त्व हैं । धर्मदासवचन कबीरप्रति ।

हे साहिब मुहि कहु समझाई । कौन कौन तत्त्व इन सबपाई ॥
अंडज अरु पिंडजके संगा । ऊष्मज और अस्थावर अंगा ॥
सो साहिब मोहिवरणिसुनाओ । करो दया जनि मोहि दुराओ ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति । छंद ।

सतगुरु कहैं सुन दास, धर्मनितत्त्वखानिनिबेरनो ॥
जाहि खानि जो तत्त्व दीन्हों, कहों तुमसो टेरनो ॥

---

१ इस पदको कई प्रतियोंमें इस प्रकार लिखा है-सकल जीवन जीव एक समाना । नर सम औरनको नहिं ज्ञाना ॥

खानि अंडज तीन तत्त्व हैं, अपवायु अरु तेजहो ॥
अचल खानी एकतत्त्वहि, तत्त्वजलका थेगहो॥३३॥
सोरठा-ऊष्मज तत हैं दोय, वायु तेज समजानिये॥
पिंडज चारहिं सोय, पृथ्वी तेहि अपवायुसम३४
पिंडज नर परधान, पांच तत्त्व तेज संग है ॥
कह कबीर परमान, धरमदास लेहु परखिके३५॥
पिंडज नरकी देह सँवारा । तामें पांच तत्त्व विस्तारा ॥
ताते ज्ञान होय अधिकाई । गहे नाम सत लोकहिं जाई ॥

सब मनुष्योंका ज्ञान एक समान क्यों नहीं है ? । धर्मदासवचन ।

धर्मदास कह सुन बंदीछोरा । इक संशय मेटो प्रभु मोरा ॥
सब नर नारितत्त्व सम आहीं । इक सम ज्ञान सबनको नाहीं॥
दया शील संतोष क्षमा गुनन । कोई शून्य कोइ होय सम्पूरन॥
कोई मनुष्य होय अपराधी । कोइशीतल कोइकालउपाधी॥
कोइ मारि तन करे अहारा । कोई जीव दया उर धारा ॥
कोई ज्ञान सुनत सुख माने । कोई काल गुणवाद बखाने ॥
नाना गुण किहि कारण होई । साहिब वरणि सुनाओ सोई ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

धर्मदास परखो चित लाई । नरनारी गुण कहूँ बुझाई ॥
जाते नर ह्व ज्ञानी अज्ञानी । सो सबतोहि कहों सहिदानी॥
नाहर सर्प औ श्वानसियारा । काग गिद्ध सूकर मंजारा ॥
और अनेक जो इन अधखानी । खाहि अखज अधमगुणजानी॥
इन जो इनते जे जिव आवा । नरकीजोन जनम जिन पावा॥
पीछे जो इन सुभावन छूटे । कर्म प्रधान महापुन छूटे ॥
ताते सब चले कागके लेखे । नरकी देह परगट तेहि देखे ॥

जिहि जो इनते जो नर आऊ। ताको तैसो आहि सुभाऊ॥
अघकरमी घातक विष पूजा। जो इन प्रभाव होय नहिं दूजा॥

योनिप्रभाव मेटनेका उपाय।

सतगुरु मिले तो ज्ञानलखावै। काग दसा तब सब बिसरावै॥
मुरचा जो इन छुटै तब भाई। ज्ञान मसकला फिरै बनाई॥
जब धोबी वस्तर कहँ धोवे। जल साबुन मिलि उज्वल होवे॥
थोर मैल कर वस्तर भाई। थोडे परिश्रम मैल नसाई॥
निपट मलिन जे वस्तर आही। ताकहँ अधिक अधिक श्रमचाही
जैसे मैल वस्तर कर भाऊ। ऐसे जीवन करे सुभाऊ॥
कोइ कोइ जो अंकुरी होई। स्वल्प ज्ञान सो गहे विलोई॥

धर्मदास वचन।

यह तो स्वल्प जोनिकर लेखा। खानि भाव अब कहूँ विशेषा॥
चारि खानिको जिव है जोई। मनुष्य खानमहँ आवे सोई॥
ताकर लच्छन मोहि बताओ। विलगविलगकरिमुहिसमझावो॥
जेहि परखी मुहहिं महँ चेतू। कर अब साहब यहि बडहेतू॥

चारि खानिके लक्षणोंकी पारख। कबीरवचन।

धर्मदास परखहु चित लायी। चारिखानि गुणकहुँ समझायी॥
चारों खानि जीव भरमाया। तब ले नरकी देह धराया॥
देह धरे छोडे जस खाना। तैसे ता कहँ ज्ञान बखाना॥
लच्छन औ अपलच्छन भेदा। सो सब तुमसों कहों निषेदा॥

अण्डजखानसे मनुष्यदेहमें आये हुए जीवकी पारख।

प्रथम कहों अंडजकी वानी। एकहिं एक कहों बिलछानी॥
आलस निद्रा जा कहँ होई। काम क्रोध दारिद्री सोई॥
चोरी चंचल अधिक सुहाई। तृष्णा माया अधिक बढाई॥
चोरी चुगली निंदा भावे। घर बन झाडी अगिन लगावे॥
रोवे कूदे मंगल गावे। भूत भूत सेवा मन भावे॥

देखत देत ओर पुनि काहू। मन मन झंखे बहु पछताहू॥
वाद विवाद सबैसों ठाने। ज्ञान ध्यान कछु मनहिं न आने॥
गुरु सतगुरु चीन्हें नहिं भाई। वेद शास्त्र सब देइ उठाई॥
आपन नीच ऊंच मन होई। हम समसरि दूसर ना कोई॥
मैले बस्तर नहीं नहाई। आँख कीच मुख लार बहाई॥
पांसा जुवा चित्त मन आने। गुरुचरणननिशदिन नहिं जाने॥
कुबरा मूड ताहिका होई। लंबा होय पाव पुनि सोई॥

छन्द।

यहि भांतिलक्षणमैंकहा, तुमसुनहु धर्मनि नागरू॥
अंडज खानिनगोयराखों, कह्यो भेद उजागरू॥
यह खानि वर्णन कहों तासों, कछूनाहिंछिपायऊ॥
सो समुझवानीजीवथिरकै, धोखसकलमिटायऊ॥३४॥

ऊष्मज खानिसे मनुष्यदेहमें आये हुए जीवकी पारख।

सोरठा–दूजीखानि बताय, ताहिलक्ष तोसों कहो॥
उषमजते जियआय, नर देही जिनपाइया॥३६॥

कहें कबीर सुनो धर्मदासा। उषमज भेद कहौं परगासा॥
जाइ शिकार जीव बहु मारे। बहुते अनंद होय तेहि वारे॥
मारिजीव जब घरकहँ आयी। बहुविधि रांध ताहि कहँ खाई॥
निंदे नाम ज्ञान कहँ भाई। गुरु कहँ मेटि करे अधिकाई॥
निंदे शब्द और गुरु देवा। निंदे चौका नरियर भेवा॥
बहुत बात बहुते नरि आयी। कथे ज्ञान बहुते समुझाई॥
झूठे वचन सभामें कहई। टेढी पाग छोर उरमहई॥
दया धरम मनहीं नहिं आवे। करें पुन्य तेहि हांसी लावे॥
माल तिलक अरु चंदन करई। हाट बजार चिकन पट फिरई॥

अन्तर पापी ऊपर दाया । सो जिव यमके हाथ बिकाया ॥
लंब दांत अरु वदन भयावन । पीरे नेत्र ऊंच अति पावन ॥

छन्द ।

कहे सतगुरु सुनहु धर्मनि, भेद भल तुम पाइया ॥
सतगुरु बिना नहिं भेद पावे, भलीविधि तोहि दरसाइया ॥
भेंटिया तुम मोहि को, कछु नाहिं तोहिं दुराइहौं ॥
जो बूझि हो तुम मोहिसो, सकलभेद बताइहौं ॥ ३५ ॥

स्थावर खानिसे मनुष्य शरीरमें आये हुए जीवकी पारख ।

सोरठा–तीजी खानि सुभाव, अचलखानि कहत जेही ॥
नर देहीतिन पाव, ताकरलक्षण अब कहौं ॥ ३७ ॥

अचल खानिको कहों सँदेसा । देह धरे जस होवें भेसा ॥
छनिक बुद्धि होवे जिव केरी । पलटत बुद्धि न लागे बेरी ॥
झंगा फेटा सिर पर पागा । राज द्वार सेवा भल लागा ॥
घोडा पर होवे असवारा । तीर खरग औ कमर कटारा ॥
इत उत चितै सैन जो मरई । पर नारी कारि सैन बुलावई ॥
रससों बात कहैं मुख जानी । काम बान लागे उर आनी ॥
पर घर ताकइ चोरी जायी । पकर बांधि राजा पहँ लायी ॥
हांसी करें सकल पुनि जबहूं । लाज शर्म उपजै नहिं तबहूं ॥
छिन इक मन महँ पूजा करई । छिन इक मन सेवा चित धरई ॥
छिन इक मन महँ बिसरे देवा । छिन इक मन महँ कीजे सेवा ॥
छिन इक ज्ञानी पोथी वांचा । छिनइकमाहिं सबनघरनाचा ॥
छिन इक मनमें सूर कहोई । छिन इकमें कादर हो सोई ॥
छिन इक मनमें साहु कहाई । छिन इक मनमें चोरी लाई ॥
छिन इक मनमें करेजु धर्म्मा । छिन इक मनमें करे अकर्म्मा ॥

भोजन करत माथ खजु आई। बांह जाँघ पुनि मींजत भाई॥
भोजन करत सोय पुनि जाई। जो जगाय तिहि मारन धाई॥
आंखें लाल होहिं पुनि जाकी। कहँलग भेद कहों मैं ताकी॥

छन्द।

अचल खानीभेद धर्मनि, छिनक बुद्धि सो होय हो॥
छिन माहिं करके मेट डारे, कहों तुमसों सोयहो॥
मिले सतगुरु सत्य जा कहँ, खानबुधिसबमेटही॥
गुरु चरण लीन अधीन होवे, लोकसोहँसापैठही३६॥

पिंडज खानिसे मनुष्य शरीरमें आये हुए जीवनकी पारख।

सोरठा–सुनहुहो धरमदास, पिंडज लक्षण गुणकहों॥
कहों तुम्हारेपास चौथी, खानिकी युक्तिसो॥३८॥

पिंडज खानिके लच्छ सुनाऊँ। गुण अवगुणका भेद बताऊँ॥
बैरागी उनमुनि मति धारी। करे धर्म पुनि वेद विचारी॥
तीरथ औ पुनि योगसमाधी। गुरुके चरण चित्त भल बांधी॥
वेद पुराण कथे बहु ज्ञाना। सभा बैठि बातें भल ठाना॥
राजयोग कामिनि सुख माने। मनशंका कबहूँ नहिं आने॥
धन संपति सुख बहुत सहायी। सेज सुपेद पलंग बिछायी॥
उत्तम भोजन बहुत सुहायी। लौंग सुपारी बीसों खायी॥
खरचे दाम पुन्य महँ सोई। हिरदे सुधि ताकर पुनि होई॥
चच्छु तेज जाकर पुनि जानी। पराक्रम देही बल ठानी॥
देखो स्वर्ग सदा तेहि हाथा। देखे प्रतिमा नावे माथा॥

छंद।

बहुत लीन अधीन धर्मनि, ताहि जितकहँजानिहो॥
सतगुरु चरणनिशिदिन गहे, सतशब्द निश्चयमानिहो॥

एक एक बिलोय धर्मनि, कह्यो सत मैं तोहिसों ॥
चारखानी लक्ष भाषेउँ, सुनो आगे मोहिसों ॥ ३७ ॥

मनुष्यशरीरसे मनुष्यदेहमें आनेवाले जीवकी पारख ।

सोरठा–छूटे नरकी देह, जन्म धरे फिर आयके ॥
ताका कहों संदेह, धर्मदास सुन कान दे ॥ ३९ ॥

धर्मदासवचन ।

हे स्वामी इक संशय आयी । सो पुनि मोहि कहो समझाई ॥
चौरासी योनिन भरमावे । तब मानुषकी देही पावे ॥
यह विधि मोसन कह्यो बुझायी । अब कैसे यह संधि लखायी ॥
सो चरित्र गुरु मोहि लखाऊ । धर्मदास गहि टेके पाऊ ॥
मानुष जन्म धरे पुनि आयी । लक्षण तासु कहो समुझायी ॥

कबीरवचन ।

धर्मदास तुम भलिविधि जानो । होय चरित सो भले बखानो ॥

आयु रहतेभी मृत्यु होती है ।

आइ अछत जो नर मर जाई । जन्म धरे मानुषको आई ॥
जो पुनि मूरख ना पतियाई । दीपक बाती देख जराई ॥
बहुविधि तेल भरे पुनि ताही । लागे वायु तबै बुझ जाही ॥
अग्नि लायके ताहि लैसावे । यहि विधि जीवहु देह धरावे ॥
ताको लक्षण सुनहु सुजाना । तुमसों योग न राखूँ ज्ञाना ॥
शूरा होवे नरके माहीं । भयडर ताके निकट न जाहीं ॥
माया मोह ममता नहिं व्यापे । दुश्मन ताहि देखि डरकाँपे ॥
सत्यशब्द प्रतीति कर माने । निंदा रूप न कबहीं जाने ॥
सतगुरु चरण सदा चित राखे । प्रेम प्रीतिसो दीनता भाखे ॥
ज्ञान अज्ञान होइ कहँ बूझे । सत्य नाम परिचय नितसूझे ॥
जो मानुष अस लक्षण होई । धर्मदास लखि राखो सोई ॥

छंद ।

जनम जनमको मैल छूटे, पुरुष शब्द जो पावई ॥
नाम भाव सुमिरण गहे सो, जीव लोक सिधावई ॥
गुरु शब्दनिश्चय दृढगहेसो, जीव अमिय अमोलहो ॥
सतनाम बलनिज घर चले, करे हंस कलोलहो ॥ ३८ ॥
सोरठा–सत्य नामपरताप, काल न रोके जीवकहँ ॥
देखि वंशको छाप, काल रहै सिर नायके ॥ ४० ॥

चौरासी धार क्यों बनी ? । धर्मदासवचन ।

चार खानिके बूझेउ भाऊ । अब बूझों सो मोहि बताऊ ॥
चौरासी योनिनकी धारा । किह कारण यह कीन्ह पसारा ॥
नर कारण यह सृष्टि बनाई । कै कोइ और जीव भुगताई ॥
हे साहिब जनि मोहि दुराओ । कीजे कृपा विलंब जनि लाओ ॥

मनुष्यके लियेही चौरासी बनी है । सद्गुरुवचन ।

धर्मनि नर देही सुख दायी । नर देही गुरु ज्ञान समायी ॥
सो तनु पाय आप जहँ जावे । सतगुरु भक्ति विना दुख पावे ॥
नरतनु काज कीन्ह चौरासी । शब्द न गहे मूढ मति नाशी ॥
चौरासीकी चाल न छाडे । सत्य नाम सो नेह न माडे ॥
लै डारे चौरासी माहीं । परचै ज्ञान जहाँ कछु नाहीं ॥
पुनि पुनि दौडि कालमुखजाहीं । ताहूते जिव चेतत नाहीं ॥
बहुत भांतिते कहि समुझावा । जीवत विपति जान गुहरावा ॥
यह तनु पाय गये सतनामा । नाम प्रताप लहे निज धामा ॥

छन्द ।

आदि नाम विदेह अस्थिर, परखि जो जियरागहे ॥
पाय बीरा सार सुमिरण, गुरु कृपा मारग लहे ॥

तजिकागचाल मराल पथगहि, नीरक्षीर निवारिके॥
ज्ञानदृष्टि सो अदृष्टिदेखे, क्षर अक्षर सुविचारके३९॥

सोरठा–निह अक्षर है सार, अक्षरते लखि पावई ॥
धर्मनि करो विचार, निह अक्षर निह तत्त्व है४१

धर्मदासवचन ।

धर्मदास कहे शुभदिन मोरा । हे प्रभु दर्शन पायउ तोरा ॥
मुहि किंकर पर दाया कीजे । दास जानि मुहिं यह वर दीजे॥
निशिदिन रहो चरण लौलीना । पल इक चित्त न होवे भीना ॥
तुव पद पंकज रुचिर सुहावन । पद परागबहु पतितन पावन ॥
कृपासिंधु करुणामय स्वामी । दया कीन्ह मोहि अंतरयामी ॥
हे साहिब मैं तव बलिहारी । आगल कथा कहो निरवारी ॥
चारखानि रचि पुनि कस कीन्हा । सो सब मोहि बतावो चीन्हा ॥

जीवोंके लिये कालका फन्दा रचना । कबीरवचन ।

सुनु धर्मनि यह है यमबाजी । जेहि नहिं चीन्हे पंडित काजी॥
जो यम ताहि गोसइया भाखे । तजे सुधा नर विषकहँ चाखे ॥
चारिहु मिलि यह रचनाकीन्हा । कच्चा रंग सु जीवहि दीन्हा ॥
पांच तत्त्व तीनों गुण जानो । चौदह यम ता संग पिछानो ॥
यहिविधि कीन्ही नरकी काया । मारे खाय बहुरि उपजाया ॥
ओङ्कार है वेदको मूला । ओङ्कारमें सब जग भूला ॥
है ओंकार निरंजन जानो । पुरुष नाम सो गुप्त अमानो ॥
सहस अठासी ब्रह्मा जाया । भा विस्तर कालकी छाया ॥
ब्रह्माते जिव उपजे बारा । तिन पुनि कथे बहुत विस्तारा॥
स्मृति शास्त्र पुराण बखाना । तामें सकल जीव उरझाना ॥
जीवनको ब्रह्मा भटकावा । अलख निरंजन ध्यान दृढावा ॥

वेद मते सब जिव भरमाने । सत्य पुरुषको मर्म न जाने ॥
निरंकार कस कीन्ह तमासा । सो चरित्र बूझो धर्मदासा ॥

छन्द ।

असुर ह्वै जीवनसतावे, देव ऋषि मुनि कारकं ॥
पुनि धरि औतार रक्षक, असुर करै संहारकं ॥
जीवकोदिखलाय लीला, आपनी महिमा धनी ॥
यहिजानजीवनबांधि आशा, यही है रक्षकधनी४० ॥

सोरठा—रक्षककलादिखाय, अंत काल भक्षणकरै ॥
पीछे जिव पछताय, जबहि कालके मुखपरे४२ ॥

अडसठ तीरथ ब्रह्मा थापा । अकरम करमपुण्य और पापा ॥
बारह राशि नखत सत्ताइस । सात वार पंद्रह तिथि लाइस ॥
चारों युग तब बांधे तानी । घडी दंड स्वासा अनुमानी ॥
कार्तिकमाघ पुन्यकहि दीन्हा । यम बाजी कोई विरले चीन्हा ॥
तीरथ धामकी बांधिमहातम । तजे न भरम न चीन्है आतम ॥
पाप पुण्य महँ सब फँदावा । यहि विधि जीव सबै उरझावा ॥
सत्य शब्द विनु वांचे नाहीं । सार शब्द बिन यममुख जाहीं ॥
त्रास जानि जिव पुण्यकमावे । किंचित फलतेहि छुधा न जावे ॥
जबलग पुरुष डोर नहिं गहई । तब लग योनिन फिर २ लहई ॥
अमित कलाजम जीव लगावे । पुरुष भेद जीव नहिं पावे ॥
लाभ लोभ जिव लागे धायी । आशा बंध काल धर खायी ॥
यम बाजी कोइ चीन न पावे । आशा दे यम जीव नचावे ॥
प्रथमैं सतयुगको व्यवहारा । जीवहि यम लै करे अहारा ॥
लच्छ जीव यम नितप्रति खाई । महा अपरबल काल कसाई ॥
तप्त शिला निशिदिन तहँ जरई । तापर लै जीवन कहँ धरई ॥

जीवहि जारे कष्ट दिखावे । तब फिर लै चौरासी नावे ॥
ता पीछे योगिन भरमावे । यहि विधि नानाकष्ट दिखावे ॥
बहुविधि जीवन कीन्ह पुकारा । काल देत है कष्ट अपारा ॥

तप्त शिलापर कष्ट पाकर जीवोंका गुहार करना और कबीर साहबका सतपुरुषकी आज्ञासे जाकर उन्हें छुडाना ।

यमकर कष्ट सह्यो नहिं जाई । हे गुरु ज्ञानी होहु सहाई ॥

छंद ।

जब देखि जीवनको विकल, अति दया पुरुष जनाइया ॥
दयानिधि सत पुरुषसाहिब, तबै मोहि बुलाइया ॥
कहे मुहिं समझाय बहुविधि, जीव जाय चितावहू ॥
तुव दरशते हो जीव शीतल, जाय तपन बुझावहू ॥ ४१
सो०–आज्ञा लीन्ही मान, पुरुष सिखापन सीसधरि ॥
ततक्षण कीन्ह पयान, सीस नाय सतपुरुषकहँ ४२
आये जहँ यम जीव सतावे । काल निरंजन जीव नचावे ॥
चटपट करे जीव तहँ भाई । ठाढे भये तहां पुनि जाई ॥
मोहि देख जिव कीन्ह पुकारा । हे साहिब मुहि लेहि उबारा ॥
तब हम सत्य शब्द गुहरावा । पुरुष शब्दते जीव जुडावा ॥

जीवोंका स्तुति करना ।

सकल जीव तब अस्तुतिलाये । धन्य पुरुष भल तपन बुझाये ॥
यमते छोर लेव तुम स्वामी । दयाकरो प्रभु अन्तरयामी ॥

कबीरवचन जीवोंप्रति ।

तब मैं कहा जीव समुझायी । जोर करो तो वचन नसायी ॥
जब तुम जाय धरो जग देहा । तब तुम करिहो शब्द सनेहा ॥
पुरुष नाम सुमिरण सहिदाना । बीरा सार कहों परवाना ॥
देह धरी सत शब्द समाई । तब हंसा सत्य लोकै जाई ॥

जहां आशा तहां वासा ।

जहँ आशा तहँ बासा होई । मन वच करम सुमिर जो कोई ॥
देह धारि कीन्हेउ जिहि आसा । अंत आय लीन्हेउ तहंवासा ॥
जब तुम देहधरो जग जायी । बिसरचो पुरुषकाल धरि खाई ॥

जीववचन कबीरप्रति ।

कहे जीव सुनु पुरुष पुराना । देह धरी बिसरचो यह ज्ञाना ॥
पुरुष जान सुमरेउ यमराई । वेद पुराण कहे समुझाई ॥
वेद पुराण कहे मति एहा । निराकार ते कीजे नेहा ॥
सुर नर मुनि तेतीस करोरी । बांधे सबै निरंजन डोरी ॥
ताके मते कीन्ह मैं आसा । अब मोहिं चीन्ह परे यमफांसा ॥

कबीरवचन जीवोंप्रति ।

सुनो जीव यह छल यम केरा । यह यम फंदा कीन्ह घनेरा ॥

छंद ।

काल कला अनेक कीन्हो, जीव कारण ठाट हो ॥
तीरथ व्रत जग योग फन्दे, कोइन पावत बाट हो ॥
आप तन धरि प्रगट ह्वैके, सिफत आपन कीन्हेऊ ॥
नानागुण मन कर्म कीन्हे, जीव बंधन दीन्हेऊ ॥४२॥
सो०–काल कराल प्रचण्ड, जीवपरे वशताहिके ॥
जनम जनमभे दण्ड, सत्य नामचीन्हे विना ॥४४॥

---

१ यह छंद कई ग्रंथोंमें कई प्रकारसे लिखा है, दूसरे प्रकारसे जो दो सौ वर्षसे भी अधिकके लिखे पुराने ग्रंथमें इस प्रकार है ।

छन्द–काल कन्या अनेक कीन्हे, जीव कारन जाल हो ।
वेद शास्त्र पुरान स्मृति ते, रुधे काल कराल हो ॥
देह धरि नर परगट हो फिरि, ताहि आशा कीन्हेऊ ।
भरमत इत उत काल वसि, बहु पन्थमें चित दीन्हेऊ ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

छन इकजीवन कहँ सुख दयऊ । जीव प्रबोध पुरुषपहँ गयऊ ॥
छन इकजीवन कहँ सुख दीन्हा । जीवन कह्यो ज्ञानको चीन्हा ॥
जब तुम देह धरो जग जाई । तब हमशब्द कहब गोहराई ॥
जो गहिहो सत नामकी डोरी । तब आनब हम जमसे छोरी ॥
जीव परमोधि पुरुषपहँ गयऊ । जीवनको दुख वरनि सुनयऊ ॥
पुरुषदयाल दयानिधि स्वामी । जिवके मूल अमान अकामी ॥
कह्यो मोहिं बहुविधि समझाई । जीवन आनो शब्द चेताई ॥

धर्मदासवचन ।

धर्मदास अस विनती लायी । ज्ञानी मोहिं कहो समझायी ॥
जो कछु पुरुष शब्दमुख भाखो । सो साहिब मोहि गोयनराखो ॥
कौन शब्दते जीव उबारा । सो साहिब सब कहो बिचारा ॥

सतगुरुवचन ।

पुरुष मोहि जैसे फुरमायी । सो सब तुमसों संधिलखायी ॥
कहेउ मोहि बहुविधिसमझायी । जीवहि आनो शब्द चितायी ॥
गुप्त वस्तु प्रभु मो कहँ दीन्हा । नाम विदेह मुक्तिकर चीन्हा ॥
दीन्ह पात परवाना हाथा । संधिछाप मोहि सौंप्यो नाथा ॥
विनु रसनाते सो धुनि होई । गुरुगमते लखि पावे कोई ॥
पंच अमीय मुक्तिका मूला । जातें मिटे गर्भ अस्थूला ॥
यहि विधि नाम गहे जो हंसा । तारौं तासु इकोतर बंसा ॥
नाम डोरि गहि लोकहि जायी । धर्म राय तिहि देखि डरायी ॥
ज्ञानी करो शिष्य जेहि जाई । तिनका तोरो जल अँचवाई ॥
जिहि विधि दीन्हतुमहिमैंपाना । तेहि विधि देहुँ शिष्यसहिदाना ॥

गुरुमहिमा ।

गुरुमुख शब्द सदा उर राखे । निशिदिन नाम सुधारसचाखे ॥
पिया नेह जिमि कामिनि लागे । तिमि गुरुरूप शिष्य अनुरागे ॥

पल पल निरखे गुरुमुखकान्ती। शिष्यचकोरगुरूशशि शांती॥
पतिव्रता ज्यों पतिव्रत ठाने। द्वितीयपुरुषसपने नहिं जाने॥
पतिव्रता दोउ कुलहिं उजागर। यह गुण गहे संतमति आगर॥
ज्यों पतिव्रता पिया मन लावे। गुरु आज्ञा अस शिष्यजुगावे॥
गुरुते अधिक और कोइ नाहीं। धर्मदास परखहु हियमाहीं॥
गुरुते अधिक कोइ नहिं दूजा। भर्म तजै करि सतगुरु पूजा॥
तीर्थ धाम देवल अरु देवा। शीश अर्पि जो लावैं सेवा॥
तो नहिं वचन कहें हितकारी। भूले भरमें यह संसारी॥

छन्द।

गुरु भक्ति अटल अमान धर्मनि, यहि सरसदूजानहीं॥
जप योग तप व्रत दान पूजा, तृणसदृश यह जग कहीं॥
सतगुरुदयाजिहिसंतपरतिहि, हृदय यहि बिधि आवई॥
ममगिरापरखे हरषिकेहिय, तिमिरमोहनशावई४२॥
सो०--दीपकसतगुरुज्ञान, निरखेहु संत अंजोरतोहि॥
पावे मुक्ति अमान, सत्यगुरु जेहिदायाकर॥४५॥

शुकदेवकी कथा।

शुकदेव भये गरभ जोगेशर। उन समान नहिं थाप्यो दूसर॥
तपके तेज गये हरि धामा। गुरु बिन नहीं लहे विश्रामा॥
विष्णु कहे ऋषि कहँवा आये। गुरुबिहीन तप तेज भुलाये॥
गुरु बिहीन नर मोहि न भावे। फिर २ जो इन संकट आवे॥
जाहु पलटि करहु गुरु सयाना। तब पैहो यहँवा अस्थाना॥
सुनिमुनि शुकदेववेगि सिधाये। गुरु बिहीन तहँ रहन न पाये॥
जनक विदेह कीन्ह गुरुजानी। हरषि मिले तब सारंगपानी॥
नारद ब्रह्मा सुत बड ज्ञानी। यह सबकथा जगतमें जानी॥

और देव ऋषि मुनिवर जेते । जिनगुरु कीन्ह उतर सो तेते ॥
जो गुरु मिले तो पंथ बतावे । सार असार परख दिखलावे ॥
गुरु सोई जो सत्य बतावे । और गुरू कोइ काम न आवे ॥
सत्य पुरुषके कहे संदेशा । जन्म जन्मका मिटै अंदेशा ॥
पाप पुन्यकी आशा नाहीं । बैठै अक्षय वृक्षकी छांहीं ॥
भृङ्गी मत होवे जिहि पासा । सोई गुरु सत्यसुनि धर्मदासा ॥

छन्द ।

जो रहित घर बतलावई, सो गुरू सांचा मानिये ॥
तीन तजि मिलि जायचौथे,तासुबचन परमानिये ॥
पांच तीन अधीन काया, न्यार शब्द विदेह हैं ॥
देह माहिं विदेह दरशै, गुरुमता निज एक हैं॥४५॥
सोरठा–ध्यान बिदेह समाय, देह धरेका फलयह ॥
नहिं आवे नहिं जाय, मिलइदेह विदेहहोइ॥४६॥
अस गुरुकरे बनाय, बहुरि न जग देही धरे ॥
नहिं आवे नहिं जाय जिहि सतगुरु दायाकरे४७॥

धर्मदास वचन ।

हे प्रभु मोहि कृतारथ कीन्हा । पूरणभाग्य दरश मुहि दीन्हा ॥
तुव गुण मोसनवरणि न जाई । मो अचेत कहँ लीन्ह जगाई ॥
सुधावचन तुव मोहिं प्रियलागे । सुनतहि वचन मोह मद भागे ॥
अब वह कथा कहो समझायी । जिहिबिधि जगमें प्रथमैं आयी ॥

कबीरसाहबका सत्पुरुषकी आज्ञा पाकर जीवोंको चितानेके लिये चलना, निरञ्जनसे भेट होना और उससे बात चीतकरके आगे बढना ।

कबीरवचन ।

धर्मदास जो पूछ्यो मोही । युग युग कथा कहौं मैं तोही ॥
जबहिं पुरुष आज्ञा कीन्हा । जीवन काज पृथ्वी पग दीन्हा ॥

करि प्रमाण तबहीं पगु धारा । पहुँचे आय धर्म दरबारा ॥
प्रथमैं चलेउ जीवके काजा । पुरुष प्रताप शीशपर छाजा ॥
तेहियुग नाज अचिन्त कहाये । आज्ञा पुरुष जीव पहँ आये ॥
आवत मिल्यो धर्म अन्याई । तिन पुनि हमसो रार बढाई ॥
मो कहँ देखि धर्म ढिग आवा । महा क्रोध बोले अतुरावा ॥
योगजीत इहँवा कस आवो । सो तुम हमसों वचन सुनावो ॥
कै तुम हमको मारन आओ । पुरुष वचन सो मोहिसुनाओ ॥

जोगजीत वचन ।

तासों कह्यो सुनो धर्म राई । जीव काज संसार सिधाई ॥
बहुरि कह्यो सुनु सो अन्याई । तुम बहु कीन्ह कपट चतुराई ॥
जीवन कहँ तुम बहुत भुलावा । बार बार जीवन संतावा ॥
पुरुष भेद तुम गोपित राखा । आपन महिमा परगट भाखा ॥
तप्त शिलापर जीव जरावहु । जारिबारिनिजस्वादकरावहु ॥
तुम अस कष्टजीव कहँ दीन्हा । तबहि पुरुषमोहिआज्ञाकीन्हा ॥
जीव चिताय लोक ल जाऊं । काल कष्टते जीव बचाऊं ॥
तातें हम संसारहि जायब । दे परवाना लोक पठायब ॥

धर्मरायवचन ।

यह सुनि काल भयंकर भयऊ । हम कहँ त्रास दिखावन लयऊ ॥
सत्तर युग हम सेवा कीन्ही । राज बडाइ पुरुष मुहिं दीन्ही ॥
फिर चौंसठ युग सेवा ठयऊ । अष्ट खंड पूरुष मुहिं दयऊ ॥
तब तुम मारि निकारे मोही । योगजीत नाहिं छांडों तोही ॥
अब हम जान भलीविधि पावा । मारों तोहि लेउँ अब दावा ॥

योगजीतवचन ।

तब हम कहा सुनो धर्मराया । हम तुम्हरे डर नाहिं डराया ॥
हम कहँ तेज पुरुष बल आही । अरे काल तुव डर मोहि नाहीं ॥

पुरुष प्रताप सुमिरि तिहि बारा । शब्द अंगते कालहि मारा ॥
ततछण दृष्टि ताहि पर हेरा । स्याम ललाट भयो तिहि केरा ॥
पंख घात जस होय पँखेरू । ऐसे काल मोहि पहँ हेरू ॥
करे क्रोध कछु नाहिं बसाई । तब पुनि परेउ चरण तर आई ॥

धर्मरायवचन । छन्द ।

कह निरंजन सुनो ज्ञानी, करो विनती तोहिसों ॥
जान बंधु विरोध कीन्हो, घाट भयीअब मोहिसों ॥
पुरुष सम अब तोहि जानों, नाहिं दूजी भावना ॥
तुम बडे सर्वज्ञ साहिब, क्षमा छत्र तनावना ॥ ४९ ॥
सो०तुमहो करो बखशीश, पुरुषदीन्हजसराजमुहिं ॥
षोडशमहँ तुम ईश, ज्ञानी पुरुष सु एकसम ४८ ॥

ज्ञानीवचन ।

कह ज्ञानी सुनु राय निरंजन । तुम तो भये वंशमें अंजन ॥
जीवन कहँ म आनब जाई । सत्य शब्द सत नाम दृढाई ॥
पुरुष आज्ञाते हम चलि आये । भौसागरते जीव मुक्ताये ॥
पुरुष अवाज टारु यहि बारा । छन महँ तो कहँ देउँ निकारा ॥

धर्मरायवचन ।

धर्मराय अस बिनती ठानी । मैं सेवक द्वितिया नहिं जानी ॥
ज्ञानी विनती एक हमारा । सो न करहु जिहि मोर बिगारा ॥
पुरुष दीन्ह जस मो कहँ राजू । तुमहूँ देहु तो होवे काजू ॥
अब हम वचन तुम्हारो मानी । लीजो हंसा हम सो ज्ञानी ॥
विनती एक करों तुहि ताता । दृढ कर मानो हमरी बाता ॥
कहा तुम्हार जीव नहिं मानिहिं । हमरी दिशि है बाद बखानिहिं ॥
दृढ फन्दा मैं रचा बनायी । जामें जीव रहें उरझाई ॥
वेदशास्त्र सुमिरिति गुण नाना । पुत्र तीन देवन परधाना ॥

तिनहू बहु बाजी रचि राखा। हमरी डोरि ज्ञान मुखि भाखा॥
देवल देव पखान पुजाई। तीरथ व्रत जप तप मन लाई॥
पूजा विश्व बलि देव अराधी। यहिमति जीवन राख्यो बांधी॥
जग्य होम अरु नेम अचारा। और अनेक फन्द मैं डारा॥
जो ज्ञानी जैहो संसारा। जीव न माने कहा तुम्हारा॥

ज्ञानीवचन।

ज्ञानी कहे सुनो अन्याई। काटों फन्द जीव लै जाई॥
जेतिक फन्द तुम रचे विचारी। सत्य शब्दते सबै बिडारी॥
जौन जीव हम शब्द दृढावे। फंद तुम्हारा सकल मुक्तावे॥
जब जिव चिन्हिहें शब्द हमारा। तजहि भरम सब तोरपसारा॥
सत्य नाम जीवन समझायब। हंस उबार लोक लै जायब॥

छन्द।

देहुँ सत्य शब्द दिढायहंसहि, दया शील क्षमाघनी॥
सहज शील सन्तोषसारा, आत्मपूजा गुन धनी॥
पुरुष सुमिरन सार वीरा, नाम अविचल गाइ हौं॥
शीस तुम्हरे पाँव दके, हंसहि लोकपठाइ हौं॥४६॥
सोरठा-अमी नाम विस्तार, हंसहि देह चिताइहौं॥
मरदहिं मात्र तुम्हार, धर्मदास सुनु चित्तदे ४९॥
चौका करी परवाना पाई। पुरुष नाम तिहि सेउँ चिन्हाइ॥
ताके निकट काल नहिं आवे। संधि देख ता कहँ शिर नावे॥

धर्मरायवचन।

इतना सुनतै काल सकाना। हाथ जोरिके विनती ठाना॥
दयावन्त तुम साहिब दाता। एतिक कृपा करो हो ताता॥
पुरुष शाप सो कहँ अस दीन्हा। लच्छ जीवनित ग्रासन कीन्हा॥

जो जिव सकललोक तुव आवे । कैसे क्षुधा सो मोरि बुतावे ॥
पुनि पुरुष मोपर दाया कीन्हा । भौसागर कहँ राजमुहि दीन्हा ॥
तुमहू कृपा मोपर करहू । मांगो सो वर मुहि उच्चरहू ॥
सतयुग त्रेता द्वापर माहीं । तीनहु युग जिव थोरे जाहीं ॥
चौथा युग जब कलियुग आवे । तब तुव शरण जीव बहु जावे॥
ऐसा वचन हार मुहिं दीजे । तब संसार गवन तुम कीजे ॥

ज्ञानीवचन ।

अरे काल परपंच पसारा । तीनों युग जीवन दुख डारा ॥
विनती तोरि लीन्ह मैं जानी । मोकहँ ठग काल अभिमानी॥
जस विनती तू मोसन कीन्ही । सोअबबकसितोहि कहँदीन्ही॥
चौथा युग जब कलियुग आये । तब हम आपन अंश पठाये ॥

छन्द ।

सुरति आठों अंशसुकृत, प्रगटि हैं जग जासके ॥
ता पीछे पुनि सुरत नौतम, जाय ग्रह धर्मदासके॥
अंश ब्यालिस पुरुषके वे, जीव कारण आवई ॥
कलि पंथ प्रगट पसारिके, वह जीव लोक पठावई ॥४७॥
सोरठा–सत्य शब्द दे साथ, जिहिपरवाना देइ है ॥
सदा ताहि हम साथ, सोजिवयमनहिं पाय है५०

धर्मरायवचन ।

हे साहिब तुम पंथ चलाऊ । जीव उबार लोक लै जाऊ ॥
वंश छाप देखों जेहि हाथा । ताहि हंस हम नाउब माथा ॥
पुरुष अवाज लीन्ह मैं मानी । विनती एक करों तुहि ज्ञानी ॥

कालका अपना बारह पन्थ चलानेकी बात कबीरसाहेबसे कहना ।

पंथ एक तुम आप चलाऊ । जीवन लै सत लोक पठाऊ ॥
द्वादश पंथ करों मैं साजा । नाम तुम्हार ले करों अवाजा॥

द्वादश यम संसार पठैहों । नाम तुम्हारा पंथ चलै हों ॥
मृतु अन्धा इक दूत हमारा । सुकृत ग्रह लै है अवतारा ॥
प्रथम दूत मम प्रगटे जायी । पीछे अंश तुम्हारा आयी ॥
यहि विधि जीवनको भरमाऊँ । पुरुष नाम जीवन समझाऊँ ॥
द्वादश पंथ जीव जो ऐहैं । सो हमरे मुख आन समैं हैं ॥
एतिक विनती करो बनाई । कीजे कृपा देउ बगसाई ॥

कालका कबीरसाहेबसे जगन्नाथ स्थापनाका वरदान मांगना ।

कलियुग प्रथमचरण जब आयब । तब हम बौद्ध शरीर बनायब ॥
राजा इन्द्र दवन पहँ जायब । जगन्नाथ हम नाम धरायब ॥
राजा मंडप मोर बनै है । सागर नीर खसावत जै है ॥
पुत्र हमार विष्णु तहँ आही । सागर ओइल सात तेहि पाही ॥
ताते मंडप बचन न पाई । उमँगे सागर लेइ डुबाई ॥
ज्ञानी एक मता निर्माऊ । प्रथमैं सागर तीर सिधाऊ ॥
तुम कहँ सागर लाँघि न जाई । देखत उदधि रहे मुरझाई ॥
यहिविधि मोकहँ थापिहु जायी । पीछे आपन अंश पठायी ॥
भवसागर तुम पंथ चलाओ । पुरुष नामते जीव बचाओ ॥
संधि छाप मोहि देहु बतायी । पुरुष नाम मोहि देहु सुझायी ॥
विना सन्धि जो उतरै घाटा । सो हंसा नहिं पावे बाटा ॥

ज्ञानीवचन । छन्द ।

धर्म जस तुम मांगहू सो, चरितहम भल चीन्हिया ॥
पंथ द्वादश तुम कहेउ सो, अमी घोरविष दीन्हिया ॥
जोमेटिडारों तोहिको अब, पलटि कलादिखावऊँ ॥
लै जीवबंद छुडाय यमसो, अमरलोकसिधावऊं४८ ॥

सो०-पुरुषवचनअसनाहिं, यहै सोच चित कीन्हेऊ ॥
लै पहुँचावहुँ ताहि, सत्य शब्द जो दृढ गहे ८१ ॥

द्वादश पंथ कहेउ अन्याई । सो हम तोहि दीन्ह बगसाई ॥
पहिले प्रगटे दूत तुम्हारा । पीछे लेहि अंश औतारा ॥
उदधितीर कहँ मैं चलिजायब । जगन्नाथको माड मडायब ॥
ता पाछे हम पंथ चलायब । जीवन कहँ सतलोक पठायब ॥

धर्मरायका कबीरसाहबको धोखा देकर उनके गुप्त भेदका पूछना ।

धर्मरायवचन ? १

सांधि छाप मोहि दीजे ज्ञानी । जस देहौं हंसहि सहिदानी ॥
जो जीव मो कहँ संधि बतावे । ताके निकट काल नहिं आवे ॥
नाम निसानी मोकहँ दीजे । हे साहिब यह दाया कीजे ॥

ज्ञानीवचन ।

जो तोहि देहुँ संधि लखाई । जीवन काज होइहो दुखदाई ॥
तुम परपंच जान हम पावा । काल चलै नहिं तुम्हरो दावा ॥
धर्मराय तेहि परगट भाखा । गुप्त अंक बीरा हम राखा ॥
जो कोइ लेई नाम हमारा । ताहि छोडि तुम होहु नियारा ॥
जो तुम हंसहि रोको जायी । तो तुम काल रहन नहिं पायी ॥

धर्मरायवचन ।

कहें धर्म जाओ संसारा । आनहु जीव नाम आधारा ॥
जो हंसा तुम्हरो गुण गाये । ताहि निकट तो हम नहिं जाये ॥
जो कोइ जैहैं शरण तुम्हारा । हम सिर पग दै होवै पारा ॥
हम तो तुम सन कीन्ह ढिठाई । पिता जान कीन्ही लरिकाई ॥
कोटिन औगुण बालक करई । पिता एक हिरदय नहिं धरई ॥
जो पितु बालक देइ निकारी । तब को रक्षा करे हमारी ॥
धर्मराय उठ सीस नवायो । तब ज्ञानी संसार सिधायो ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

जब हम देखा धर्म सकाना । तब तहँवाते कीन्ह पयाना ॥
कह कबीर सुनु धर्मनि नागर । तब मैं चलि आयउँ भौसागर॥

कबीरसाहबकी ब्रह्मासे भेंट ।

आया चतुराननके पासा । तासों कीन्ह शब्द परकाशा ॥
ब्रह्मा चित दै सुनवे लीन्हा । पूछ्यो बहुत पुरुषको चीन्हा ॥
तबहिं निरंजन कीन्ह उपाई । जेष्ठ पुत्र ब्रह्मा मोर जाई ॥
निराजन मन घण्ट विराजै । ब्रह्मा बुद्धि फेरि उपराजै ॥

ब्रह्मावचन ।

निराकार निर्गुण अविनाशी । ज्योति स्वरूप शून्यकेवासी ॥
ताहि पुरुष कहँ वेद बखाने । आज्ञा वेद ताही हम जाने ॥

कबीरसाहबका विष्णुके पास पहुँचना ।

जब देखा तेहि काल दृढायो । तहँते उठे विष्णु पहँ आयो ॥
विष्णुहि कह्यो पुरुष उपदेशा । कालवशी नहिं गहे सँदेशा ॥

विष्णुवचन ।

कहे विष्णु मोसम को आही । चार पदारथ हमरे पाही ॥
काम मोक्ष धर्मारथ साही । चाहे जौन देउँ मैं ताही ॥

ज्ञानीवचन ।

सुनहु सो विष्णु मोक्ष कसतोही । मोक्ष अक्षर परले तर होही ॥
तुम नाहीं थिरथिर कस करहू । मिथ्या साखि कवणगुणभरहू ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

रहे सकुच सुन निर्भय बानी । निजहिय विष्णु आपडरमानी॥
तब पुनि नागलोक चलिगयऊ । तासे कछु कछु कहिबे लयऊ ॥
पुरुषभेद कोउ जानत नाहीं । लागे सभे कालकी छाहीं ॥
राखनहार कहँ चीन्हों भाई । यमसो को तुहिं लेइ छुडाई ॥
ब्रह्मा विष्णु रुद्र जिहि ध्यावैं । वेदजासु गुण निशिदिन गावैं॥

सोइ पुरुष नहिं राखन हारा। सोइ तुमहिं लै करि है गारा ॥
राखनिहार और कोउ आही। करु विश्वास मिलाऊं ताही ॥
शेष खानि विष तेज सुभाऊ। वचन प्रतीत हृदय नहिं आऊ॥
सुनहु सुलक्षण धर्मनि नागर। तब मैं आयउँ या भवसागर ॥
आये जब मृत्युमंडल माहीं। पुरुषजीव कोउ देख्यो नाहीं ॥
का कहँ कहिय पुरुष उपदेशा। सो तो अधिकै यमको भेषा ॥
जो घातक ताको विश्वासा। जो रक्षक तेहि बोल उदासा ॥
जाहि जपै सोई धर खाई। तब मम शब्द चेत चित आई ॥
जीव मोहवश चीन्हे नाहीं। तब असभाव उपजी हियमाहीं॥

छंद।

मेटि डारो काल शाखा, प्रगट काल दिखावऊँ ॥
लऊ जीवन छोरि यम सो, अमरलोक पठावऊँ ॥
जाहि कारण रटत डोलों, सो न मोकहँ चीन्हई ॥
कालके वश परे जिव सब, तजि सुधा विष लीन्हई॥४९॥

सोरठा—पुरुष वचन अस नाहिं, यही सोच चितकीन्हऊ ॥
ले पहुँचाओ ताहि, शब्द परख दृढके गहे ॥५२॥

पुनि जस चरित भयो धर्मदासा। सो सब वरन कहों तुव पासा ॥
ब्रह्मा विष्णु शम्भु सनकादी। सब मिलि कीन्हीशून्यसमाधी॥
कवन नाम सुमिरो करतारा। कवनहिं नाम ध्यान अनुसारा॥
सबहिं शून्य महँ ध्यान लगाये। स्वाति सनेह सीपज्यों लाये ॥
तबहिं निरंजन जतन बिचारा। शून्य गुफाते शब्द उचारा ॥
ररांकु शब्द उठा बहुबारा। मा अक्षर माया संचारा ॥
दोउ अक्षर कहँ समकैराखा। रामनाम सबहिन अभिलाखा ॥
रामनाम लै जगहि दृढायो। कालफन्द कोइ चीन्ह न पायो ॥
यहि विधि राम नाम उत्पानी। धर्मनि परख लेहु यह वानी ॥

धर्मदासवचन ।

धर्मदास कहै सतगुरु पूरा । छूटेउ तिमिर ज्ञान तुव सूरा ॥
माया मोह घोर अंधियारा । तामहँ जीव परे बिकारारा ॥
जब तुव ज्ञान प्रगट है माना । छूटे मोह शब्द परखाना ॥
धन्य भाग हम तुम कहँ पायी । मोहि अधम कहँ लीन्हजगायी ॥
अब वह कथा कहो समुझाई । सतयुग कौन जीव मुकताई ॥

सत्ययुगमें सतसुकृत (कबीरसाहब) के पृथ्वीपर
आनेकी कथा सद्गुरुवचन ।

धर्मदास सुनु सतयुग भाऊ । जिन जीवनको नाम सुनाऊ ॥
सतयुग सत सुकृत मम नाऊँ । आज्ञा पुरुष जीव चेताऊँ ॥

धोंधल राजाका वृत्तान्त ।

नृप धोंधल पहँ मैं चलि जाई । सत्य शब्द सो ताहि सुनाई ॥
सत्यशब्द तिन हमरो माना । तिन कह दीन्ह पान परमाना ॥

छन्द ।

राय धोंधल संत सज्जन, शब्द मम दृढके गह्यो ॥
सारसीत प्रसाद लीन्हों, चरण परसत जल लह्यो ॥
प्रेमसे गदगद भयो सब, तजेउ भर्म विभाय हो ॥
सार शब्दहिं चीन्हि लीनो, चरण ध्यान लगाय हो ॥५०॥

खेमसरीका वृत्तान्त ।

सोरठा-धोंधल शब्द चिताय, तब आयउ मथुरानगर ॥
खेमसरि आयो धाय, नारि वृद्ध गो बालिसों ॥५३॥

कहै खेमसरि पुरुष पुराना । कहँवाते तुम कीन्ह पयाना ॥
तासों कहेउ शब्द उपदेशा । पुरुष भाव अरु यमको भेषा ॥
सुना खेमसरि उपजा भाऊ । जब चीन्हा सब यमका दाऊ ॥

खेमसरीको लोकका दर्शन कराना ।

पै धोखा इक ताहि रहाई । देखे लोक तब मन पतियाई ॥
राखेउ देह हंस लै धावा । पल इकमाहिं लोक पहुंचावा ॥
लोक दिखाय हंस लै आयो । देह पाय खेमसरी पछतायो ॥
हे साहेब लै चलु वहि देशा । यहां बहुत है काल कलेशा ॥
तासौं कहेउ सुनो यह बानी । जो मैं कहूं लेहु सो मानी ॥

टीका पूरनेपरही लोककी प्राप्ति होती है ।

जबलों टीका पूर न भाई । तब लग रहो नाम लौ लाई ॥
तुम तो देखा लोक हमारा । जीवनको उपदेशहु सारा ॥

जीवोंको उपदेश करनेका फल ।

एकहु जीव शरणागत आवे । सो जीव सत्य पुरुषको भावे ॥
जैसे गऊ बाघ मुख जायी । सोकपिलहि कोइ आय छुडायी ॥
ता नरको सब सुयश बखाने । गऊ छुडाय बाघते आने ॥
जस कपिला कहँ केहरि त्रासा । ऐसे काल जीव कहँ ग्रासा ॥
एक जीव जो भक्ति दृढावे । कोटिक गऊ पुण्य सो पावे ॥

खेमसरीवचन ।

खेमसरि परै चरण पर आयी । हे साहिब मोहि लेहु बचायी ॥
मो पर दाया करहु प्रकाशा । अब नहिं परौं कालके फांसा ॥

सुकृतवचन ।

सुन खेमसरि यह यमको देशा । बिना नाम नहिं मिटै अंदेशा ॥
पान प्रवान पुरुषकी डोरी । लेहि जीव यम तिनका तोरी ॥
पुरुष नाम बीरा जो पावे । फिरके भवसागर नहिं आवे ॥

खेमसरीवचन ।

कहे खेमसरि परवाना दीजे । यमसों छोरि अपन करिलीजे ॥
और जीव हमरे गृह आही । नाम पान प्रभु दीजे ताही ॥
मोरे गृह अब धारिय पाऊ । मुक्ति संदेश जीवन समझाऊ ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

भयेउ तासु ग्रह भाव समागम । परेउ चरणतर नारि सुधासम ॥
खेमसरी सब कहि समझायी । जन्म सुफल करु रे सब भायी ॥

खेमसरीवचन परिवारप्रति ।

जीवन मुक्ति चाहु जो भाई । सतगुरु शब्द गहो सो आई ॥
यमसो येहि छुड़ावन हारे । निश्चय मानो कहा हमारे ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

सब जीवन परतीत दृढावा । खेमसरी सँग सब जिव आवा ॥

सब मिलाकर विनय करते हैं ।

आय गहे सब चरण हमारा । साहिब मोर करो निस्तारा ॥
जाते यम नहिं मोहि सताये । जन्म जन्म दुख दुसह नसाये ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

अति अधीन देखेउ नरनारी । तासों हम अस वचन उचारी ॥
जो कोइ मनिहै शब्द हमारा । ताकहँ कोइ न रोकन हारा ॥
जो जिय माने मम उपदेशा । मेटों ताकर काल कलेशा ॥
पुरुष नाम परवाना पावे । यमराजा तिहि निकट न जावे ॥

सुकृतवचन खेमसरीप्रति ।

आनहु साज आरती केरा । काल कष्ट मेटों जिय केरा ॥

खेमसरी वचन ।

कह खेमसरी प्रभु कहो बिलोई । कवन बस्तु लै आरति होई ॥

सुकृतवचन–आरतिका साज । छंद ।

भाव आरती खेमसरि सुनु, तोहि कहू समुझायके ॥
मिष्टान पान कपूर केरा, अष्ट मेवा लायके ॥
पांच बसन श्वेत वस्तर, कदलिपत्र अच्छन्दना ॥
नारियल अरु पुहुप श्वेतहि, श्वेत चौकाचंदना ॥ ९१ ॥

सो०–यह आरति अनुमानि, आनु खेमसरिसाजसब ॥
पुंगीफल परमान, शब्द अंगचौका करे ॥ ५४ ॥
और वस्तु आनहु सुठिपावन । गो घृत उत्तम श्वेत सुहावन ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

खेमसारि सुनि सिखावन माना । ततक्षण सब विस्तारसो आना ॥
सेत चंदेवा दीन्हों तानी । आरति करन युक्ति विधिठानी ॥
पंच साधु तब इच्छा उपराजा । भक्ति भजन गुरुज्ञानबिराजा ॥
हम चौका पर बैठक लयऊ । भजन अखंड शब्द धुनभयऊ ॥
भजन अखण्ड शब्दध्वनि होई । दुनियां चांप सके नहिं कोई ॥
सत्य समय लै चौका साजा । ज्योतिप्रकाश अखंड विराजा ॥
शब्द अंग चौका अनुमाना । मोरत नरियर काल पराना ॥
जब भयो नरियर शिलासँयोगा । काल शीश पुनि चम्पेरोगा ॥
नरियल मोरत बास उडायी । सत्य पुरुष कह जानि जनायी ॥
पांचशब्द कहि तब दल फेरा । पुरुष नाम लीन्हो तिहि बेरा ॥
छन एक बैठे पुरुषतहँ मायी । सकल सभा उठि आरतिलायी ॥
तब पुनि आरति दीन्ह मँडाई । तिनका तोरे जल अचवाई ॥
प्रथम खेमसरि लीन्हों पाना । पाछे और जीव संमाना ॥
दीन्हेउ ध्यान अंग समुझाई । ध्यान नामते हंस बचाई ॥
रहनि गहनि सब दीन्ह दृढाई । सुमिरत नाम हंस घर जाई ॥

छन्द ।

हंस द्वादश[1] बोधि सतयुग, गयउसुखसागर करी ॥
सतपुरुषचरण सरोज परसेउ, विहँसिके अंकमभरी ॥

---

१ किसी किसी प्रतिमें द्वादशके स्थानमें त्रयोदश लिखा है । और किसी किसीमें द्वादश त्रयोदश कुछ भी न लिखकर " दिनदश बांधि " लिखा है ।

बूझि कुशल प्रसन्न बहु विधि, मूल जीवनके धनी॥
बंधुहर्षितसकलशोभा मिलि, अति सुंदरबनी॥५२॥
सोरठा-शोभा बरणिनजाय, धर्मनिहंसनकान्तिकर॥
रविषोडश शशिकाय,एक हंस उजियार जौं॥५५
कछु दिन कीन्हों लोकनिवासा । देखेउ आय बहुरि निजदासा ॥
निशिदिन रहों गुप्त जगमाहीं । मोकह कोइ जिव चीन्हत नाहीं ॥
जो जीवन पर बोध्यो जायी । तिनकहँ दीन्हो लोक पठायी ॥
सत्य लोक हंसन सुखबासा । सदा वसंत पुरुषके पासा ॥
सो देखे जो पहुँचे जाई । जिन यहि रचा सो कहा चिताई॥

त्रेतायुगमें मुनींद्र (कबीरसाहब) के पृथ्वीपर आनेकी कथा ।

सतयुग गयो त्रेतायुग आवा । नाम मुनींद्र जीव समुझावा ॥
जब आयेउ जीवन उपदेशा । धर्मराय हित भयेउ अँदेशा ॥
इन भवसागर मोर उजारा । जिव लै जाहि पुरुष दरबारा ॥
कैतो छल बल करे उपाई । ज्ञानी डरतिहि नाहिं ठराई ॥
पुरुष प्रताप ज्ञानिके पासा । तातें मोइ न लागे फांसा ॥
इनते काल कछु पावै नाहीं । नाम प्रताप हंस घर जाहीं ॥

छन्द ।

सत्यनाम प्रताप धर्मनि, हंसाघर निज कै चलै ॥
जिमि देख केहरि त्रास गज,हिय कंपकरधरनीरलै ॥
पुरुष नाम प्रताप केहरि, काल गज सम जानिये ॥
नाम गहि सतलोक पहुँचे, गिराममफुरमानिये॥५३
सो०-सतगुरु शब्द समाय, गुरु आज्ञा निरखन चले ॥
रहे नाम लौ लाय, कर्म भर्म मन मति तजे॥५६॥

त्रेतायुग जबही पगु धारा । मृत्यु लोक कीन्हों पैसारा ॥
जीव अनेकन पूछा जाई । यमसे को तुहिं लेहि छुडाई ॥
कहे भर्म वश जीव अयाना । हमरा करता पुरुष पुराना ॥
विष्णु सदा हमरे रखवारा । यमते मोहिं छुडावन हारा ॥
कोइ महेशकी आश लगावें । कोइ चण्डी देवी कहँ गावें ॥
कहा कहों जिव भयो बिगाना । तजेउ खसम कइ जार विकाना॥
कर्म कोठरी सब दिन डारा । फंदा दे सब जीवन मारा ॥
सत्य पुरुषकी आयसु पाऊं । कालहि मेटि छोर जिवलाऊँ ॥
जोर करोंतो वचन नसायीं । सहजहिं जीवन लेउं चिताई ॥
जो ग्रासे जिव सेवें ताही । अनचीन्हे यमके मुख जाहीं ॥

विचित्र भाटकी कथा लंकामें ।

चहुँदिश फिरि आयेउँ गढलंका। भाट विचित्र मिल्यो निःशंका॥
तिनि पुनि पूछेउ मुक्ति संदेशा । तासों कह्यों ज्ञान उपदेशा ॥
सुनो विचित्र तबहि भ्रम भागा । अतिअधीन ह्वै चरणन लागा ॥
कहे शरण मुहि दीजे स्वामी । तुम सबपुरुष सदा सुखधामी ॥
कीजै मोहि कृतारथ आजू । मोरे जिवकर कीजे काजू ॥
कह्यो ताहि आरतिको लेखा । खेमसारिहि जस भाषेउ रेखा ॥
आनेहु भाव सहित सब साजा । आरति कीन्ह शब्दधुनि गाजा॥
तृण तोरा बीरा तिहि दीन्हा । ताके गृहमें काहु न चीन्हा ॥
सुमिरण ध्यान ताहिसो भाखा। पुरुष डोरि गोय नहिं राखा ॥

छंद ।

विचित्र वनिता गयी नृपढिग, जायरानीसो कही ॥
इक योगी सुन्दर है महामुनि, तासुमहिमाकाकही॥
श्वेत कला अपार उत्तम, और नहिं अस देखेउं ॥
पति हमारेशरणगहितिहि, जन्मशुभकरिलेखेऊँ॥५४॥

मंदोदरीका वृत्तान्त

सोरठ–सुनत मंदोदरिचाव, दरशलेनअकुलानेऊ ॥
वृषलीसंगलेआव, कनकरतन लै पगुधरचो ८७॥

चरण टेकिके नायो शीशा । तब मुनींद्र पुनिदीन्ह अशीशा॥

मंदोदरीवचन ।

कहे मँदोदरि शुभदिन मोरी । विनती करों दोइ कर जोरी ॥
ऐसा तपसी कबहुँ न देखा । श्वेत अंग सब श्वेतहि भेखा ॥
जिवकारज मम हो जिहि भांती । सो मोहि कहो तजो कुलजाती॥
हे समरथ मोहि करहु सनाथा । भव बूडत गहि राखो हाथा॥
अब प्रति प्रिय मोहि तुम लागे । तुम दयाल सकल भ्रम भागे ॥

मुनींद्रवचन मंदोदरी प्रति ।

सुनहु वधू प्रिय रावण केरी । नाम प्रताप कटे यम बेरी ॥
ज्ञान दृष्टिसौ परखहु भाई । खरा खोट तोहि देउँ चिन्हाई ॥
पुरुष अमान अजरमनिसारा । सो तो तीन लोकते न्यारा ॥
तेहि साहिब कहँ सुमिरे कोई । आवागमन रहित सो होई ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

सुनतहि शब्द तासुभ्रम भागा । गह्यो शब्द शुचिमन अनुरागा॥
हे साहिब मोहि लीजे शरणा । मेटहु मोर जन्म अरु मरणा ॥
दीन्हों ताहि पान परवानां । पुरुष डोर सौंप्यो सहिदाना ॥
गदगद भई पाय घर डोरी । मिलि रंकहिं जिमिद्रव्यकरोरी॥
रानी टेकेउ चरण हमारा । ता पाछे महलन पगु धारा ॥

विचित्र वधूका वृत्तान्त ।

विचित्र वधू रानी समुझावा । गहो शरण जीवन मुकतावा ॥
विचित्र नारिगहिरानिसिखापन । लीन्हेसिपानतजि भ्रम आपन॥

मुनींद्रका रावणके पास जाना ।

तब मैं रावणपहँ चलि आयो । द्वारपालसों वचन सुनायो ॥

मुनींद्रवचन द्वारपालप्रति ।

तासों एक बात समुझाई । राजा केहँ तुम आव लिवाई ॥

द्वारपालवचन ।

तब पौरिया विनय यह लाई । महा प्रचंड है रावण राई ॥
शिव बल हृदय शंक नहिं आने । काहूकेर वचन नहिं माने ॥
महा गर्व अरु क्रोध अपारा । कहों जाय मोहि पलमें मारा॥

मुनींद्रवचन द्वारपालप्रति ।

मानहु वचन जाव यहि बारा । रोम बंक नहिं होय तुम्हारा ॥
सत्य वचन तुम हमरो मानो । रावण जाय तुरत तुम आनो॥

प्रतिहारवचन ।

ततक्षण गा प्रतिहार जनायी । द्वै कर जोरे ठाढ रहायी ॥
सिद्ध एक तो हम पहँ आई । तेकह राजहि लाव बुलाई ॥

रावणका क्रोध प्रतिहारप्रति ।

सुन नृप क्रोध कीन्ह तेहि बारा । तैं मतिहीन आहि प्रतिहारा ॥
यहमति ज्ञान हरों किन तोरा । जो तैं मोहि बुलावन दौरा ॥
दर्शमोर शिवसुत नहिं पावत । मों कह भिक्षुक कहा बुलावत॥
हे प्रतिहार सुनहु मम वानी । सिद्ध रूप कहो मोहि बखानी॥
वर्णन है कौन कौनतिहि भेषा । मो सन कहो दृष्टिजस देखा ॥

प्रतिहारवचन ।

अहो रावण तेहि श्वेतस्वरूपा । श्वेतहि माला तिलक अनूपा॥
शशि समान है रूप विराजा । श्वेतवसन सब श्वेतहि साजा ॥

मन्दोदरीवचन ।

कहे मंदोदरि रावण राजा । ऐसो रूप पुरुषको छाजा ॥
वेगे जाय गहो तुम पाई । तो तुव राज अटल होय जाई॥
छोडहु राजा मान बडाई । चरण टेकि जो सीस नवाई ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

रावण सुनत क्रोध अतिकीन्हा । जरतहुताशन मनु घृत दीन्हा॥
रावण चला शस्त्र लै हाथा । तुरत जाय तिहि काटों माथा॥
मारों ताहि सीस खसि परयी । देखों भिक्षुक मोरका करयी ॥
जहँ मुनींद्र तहँ रावण राई । सत्तर वार अस्त्र कर लाई ॥
लीन्ह मुनींद्र तृण कर ओटा । अति बल रावण मारै चोटा ॥

छन्द ।

तृण ओट यहि कारणे है, गर्व धारी राय हो ॥
तेहि कारणे यह युक्ति कीन्ही, लाजरावण आयहो ॥

मन्दोदरीवचन ।

कहे मन्दोदरि सुनहु राजा, गर्व छोडो लाज हो ॥
पांव टेकहु पुरुषके गहि, अटल होवै राज हो ॥५५॥

रावणवचन ।

सो०-सेवाकरोंशिवजाय,जिनमोहिराज अटल दिये।
ताकर टेकों पांय,पल दँडवत क्षण ताहिको ५८॥

मुनींद्रवचन ।

सुन अस वचन मुनींद्र पुकारी । तुम हो रावण गर्व अहारी ॥
भेद हमारा तुव नहिं जाना । वचन एक तोहि कहों निशाना॥
रामचंद्र मारें तुहि आयी । मांस तुम्हार श्वान नहिं खायी॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

रावणको कीन्हो अपमाना । अवधनगर पुनि कीन्ह पयाना॥

मधुकरकी कथा । छन्द ।

रावणको अपमान करी, तबअवधनगरहिआयऊ ॥
विप्र मधुकर मिलेऊ मारग,दरश तिन मम पायऊ॥

१ इसके बदले पुराने ग्रन्थोंमें ऐसा लिखा है-
" तीन जीव परमोधि लंका, तब अवध नगरहि आयऊ ॥ "

मिलेउ मोकहँ चरण गहि, तबशीसनायअधीनता॥
करिविनयबहु लेगयोमंदिर, कीन्हबहुबिधिदीनता५६
सोरठा-रंक विप्र थिर ज्ञान,बहुत प्रेममोसों किया ॥
शब्द ज्ञान सहिदान, सुधासरितविहँसतवदन५९
देख्यो ताहि बहुत लवलीन्हा । तासो कह्यो ज्ञानको चीन्हा ॥
पुरुष सँदेश कहेउ तिहि पासा । सुनतबचनजियभयउहुलासा ॥
जिमि अंकुर तपै बिन वारी । पूर्ण उदक जो मिलै खरारी ॥
अम्बु मिलत अंकुर सुख माना । तैसहि मधुकर शब्दहि जाना॥

मधुकरवचन ।

पुरुष भाव सुन तेहि हरषंता । मो कहँ लोक दिखावहु संता ॥

मुनींद्रवचन ।

चलहु तोहि लै लोक दिखावों । लोक दिखाय बहुरि लै आवों॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

राख्यो देह हंस लै धाये । अमर लोक लै तिहि पहुँचाये॥
शोभा लोक देख हरषाना । तब मधुकरको मन पतियाना॥

मधुकरवचन ।

परचो चरण मधुकर अकुलाई । हे साहिब अब तृषा बुझाई ॥
अब मोहि लेइ चलो जगमाहीं । और जीव उपदेशो ताहीं ॥
और जीव गृहमाहिं जो आई । तिन कहँ हम उपदेशब जाई ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

हंसहि लै आये संसारा । पैठि देह जाग्यो द्विजवारा ॥
मधुकर घर षोडश जिव रहई । पुरुष संदेश सबनसों कहई ॥
गहहु चरण समरथके जाई । यही लेहिं जमसों मुकताई ॥
मधुकरवचन सबन मिलिमाना । मुक्ति जान लीन्हों परवाना ॥

मधुकरवचन ।

कह मधुकर विनती सुन लीजै । लोक निवास सबन कहँ दीजै ॥
यह यम देश बहुत दुख होई । जीव अम्बु बूझै नहिं कोई ॥
मोहि सब जीवन लै चलु स्वामी । कृपा करहु प्रभु अंतरयामी ॥

छन्द ।

यहि देश है यम महा परबल, जीव सकल सतावई ॥
कष्ट नाना भांति व्यापे, मरण जीवन लावई ॥
काम क्रोध कठोर तृष्णा, लोभ माया अति बली ॥
देव मुनिगण सबहि व्यापे, कोट जीवन दलमली ५७ ॥

सो०–तिहुपुर यमको देश, जीवन कहँ सुखछनकनहिं ॥
मेटहु काल कलेश, लेइ चलहु निज देशकहँ ॥ ६० ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

बहुत अधीन ताहि हम जाना । करचौका तब दीन्ह परवाना ॥
षोडश जिव परवाना पाये । तिन कहँ लै सतलोक पठाये ॥
यमके दूत देख सब ठाडे । चितवहिं जे जन ऊर्द्ध अखाडे ॥
पहुँचे जाय पुरुष दरबारा । अंशन हंसन हर्ष अपारा ॥
परसे चरण पुरुषके हंसा । जन्म मरणको मेटेउ संसा ॥
सकल हंस पूछी कुशलाई । कहुद्विज कुशल भये अबआई ॥
धर्मदास यह अचरज बानी । गुप्त प्रगट चीन्हें सोइ ज्ञानी ॥
हंसन अमर चीर पहिराये । देह हिरम्मर लखि सुख पाये ॥
षोडश भानु हंस उजियारा । अमृत भोजन करे अहारा ॥
अगर वासना तृप्त शरीरा । पुरुष दरश गदगद मति धीरा ॥
यहि विधि त्रेतायुगको भावा । हंस मुक्त भये नाम प्रभावा ॥

द्वापरयुगमें करुणामय (कबीरसाहब) के पृथ्वीपर आनेकी कथा ।

त्रेता गत द्वापर युग आवा । तब पुनि भयो काल परभावा ॥
द्वापर युग प्रवेश भा जबही । पुरुष अवाज कीन्हपुनि तबही ॥

पुरुषवचन ।

ज्ञानी वेगि जाहु संसारा । यमसों जीवन करहु उबारा ॥
काल देत जीवन कहँ त्रासा । काटो जाय तिनहिंको फांसा ॥
कालहि मेटि जीव लै आवो । बार बार का जगहि सिधावो ॥

ज्ञानीवचन ।

तब हम कहा पुरुषसों बानी । आज्ञा करहु शब्द परवानी ॥

पुरुषवचन ।

कहा पुरुष सुन योग सँतायन । शब्द चिताय जीव मुक्तायन ॥
जो अब काल कीन्ह अन्याई । हो सुत तुम मम वचन नशाई ॥
अबतो परे जीव यह फन्दा । जुगुतहि आनु परम अनंदा ॥
काल चरित परगट ह्वै जाई । तब सब जीव चरण गहे आई ॥
ज्ञान अज्ञान चीन्ह नहिं जायी । जाय प्रगट ह्वै जिवन चितायी ॥
सहज भाव जग प्रगटहु जाई । देखहु भाव जिवनको भाई ॥
तोहि गहे सो जिव मुहिं पैहै । तनु प्रतीत बिरले यम खैहै ॥
जाई करहु जीव कडिहारी । तोपर है परताप हमारी ॥
हमसों तुमसों अन्तर नाहीं । जिमि तरंग जलमाहिं समाहीं ॥
हमहिं तुमहिं जो दुइकर जाना । ताघट यम सब करिहै थाना ॥
जाहु बेगि तुम वा संसारा । जीवन खेइ उतारहु पारा ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

चले ज्ञानी तब माथ नवायी । पुरुषआज्ञा जगमाहिं सिधायी ॥
पुरुष अवाज चल्यो संसारा । चरण टेकु मम धर्म लवारा ॥

निरञ्जनवचन । छन्द ।

तुहे धर्मराय अधीन ह्वै बहु, भांति विनती कीन्हेऊ ॥
किहि कारणे अब जग सिधारेहु, मोहिसोमतिदीन्हेऊ ॥
असकरहुजनिसबजगचितावहु,इहै विनती मैं करौं ॥
तुम बंधु जेठे छोट मैं,कर जोर तुम पांयन परौं ॥ ५८ ॥

ज्ञानीवचन ।

सो०–कह्यो धर्म सुन बात, विरल जीवमोहि चीन्हिहैं ॥
शब्दनको पतियाय, तुम अस कै जीवन ठगे ।६१॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

अस कह मृत्युलोक पगु धारा । पुनि परमारथ शब्द पुकारा ॥
छोड्यो लोक लोककी काया । नरकी देह धारि तब आया ॥
मृत्युलोकमें हम पगु धारा । जीवन सो सतशब्द पुकारा ॥
करुणामय तब नाम धराया । द्वापर युग जब महिमें आया ॥
कोइ न बूझें हैला मेरी । बांधे काल विषम भ्रम बेरी ॥

रानी इन्द्रमतीकी कथा ।

गढ गिरनार तबहि चलि आये । चन्द्रविजय नृप तहां रहाये ॥
तेहि नृप गृह रह नारि सयानी । पूजै साधु महातम जानी ॥
चढी अटारी वाट निहारे । सत दरश कहँ कायागारे ॥
रानी प्रीति बहुत हम जाना । तेहि मारग कहँ कीन्ह पयाना ॥
मोहि पहँ दृष्टि परी जब रानी । वृषली[1] रसना कह यह बानी ॥

इन्द्रमतीवचन ।

मारग बेगि जाहु तुम धाई । देखहु साधु आनु गहि पाई ॥

दासीवचन ।

वृषली आय चरण लपटानी । नृप वनिता मुख भास सयानी ॥
कही वृषली रानि अस भाषा । तुव दर्शन कहँ बहुअभिलाषा ॥
देहु दरश मोहिं दीनदयाला । तुम्हरे दरश मिटे सब शाला ॥

करुणामयवचन दासीप्रति ।

तब ज्ञानी कहि वचन सुनावें । राज रावघर हम नाहिं जावें ॥
राज काज है मान बडाई । हम साधू नृप गृह नहिं जाई ॥

---

१ दासी, लौंडी ।

दासीवचन रानी प्रति ।

चलि वृषली रानी पहँ आयी । द्वै कर जोरे विनय सुनायी ॥
साधु न आवे मोर बुलायी । राज राव घर हम नहिं जाई ॥
यह सुन इन्द्रमती उठि धाई । कीन्ह दंडवत टेके पाई ॥

इन्द्रमतीवचन ।

हे साहिब मोपर करु दाया । मोरे गृह अब धरिये पाया ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

प्रीति देख हम भवन सिधारे । राजा घर तबहीं पग धारे ॥
कहे रानी चलु मन्दिर मोरे । भयो सुखी दर्शन लिये तोरे ॥
प्रीति देखि तेहि भवन सिधाये । दीन्ह सिंहासन चरण खटाये ॥
दीन्ह सिंहासन चरण पखारी । चरण परछालन अंगोछा धारी ॥
चरण धोय पुनि राखेसि रानी । पट पद पोंछ जन्म शुभजानी ॥

इन्द्रमतीवचन ।

पुनि प्रसादको आज्ञा मांगी । हे प्रभु मोकहँ करहु सुभागी ॥
जूठन परै मोर गृहमाहीं । सीतप्रसाद लै हमहूँ स्वाहीं ॥

करुणामयवचन ।

सुन रानी मोहि क्षुधा न होई । पंचतत्त्व पावे जेहि सोई ॥
अमृत नाम अहार है मोरा । सुनु रानी यह भाष्यो थोरा ॥
देह हमारि तत्त्व गुण न्यारी । तत्त्व प्रकृतिहिं काल रचि वारी ॥
असी पंच किहु काल समीरा । पंच तत्त्वकी देह खमीरा ॥
तामह आदि पवन इक आही । जीव सोहंग बोलियो ताही ॥
यह जिव अहे पुरुषको अंशा । रोकासि काल ताहि दे संशा ॥
नाना फन्द रचि जीव गरासै । देइ लोभ तब जीवहि फांसै ॥
जिवतारन हम यहि जग आये । जो जिव चीन्हे ताहि मुक्ताये ॥
धर्मराय अस बाजी कीन्हा । धोक अनेक जीव कहँ दीन्हा ॥
नीर पवनकृत्रिम किहु काला । विनशि जाय बहु करै बिहाला ॥

तन हमार यहि साजते न्यारा । मम तन नहिं सिरज्यो करतारा ॥
शब्द अमान देह है मोरा । परखि गहहु भाष्यो कछु थोरा ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

सुनि वचन अचल भौ भारी । तब रानी अस वचन उचारी ॥

रानी इन्द्रमतीवचन ।

हे प्रभु अचरज यह होई । अस सुभाव दूजा नहिं कोई ॥

छंद ।

इन्द्रमती आधीन है कहै, कृपा करहु दयानिधि ॥
एक एक बिलोय वरणहु, मोहिते सकलहु विधी ॥
विष्णु सम दूजा नहीं कोइ, रुद्र चतुरानन मुनी ॥
पंचतत्त्व खमीरतनतिहि,तत्त्वके वश गण गुणी ॥९
सो०–तुमप्रभुअगम अपार,वरनो मोते कितभये ॥
मेटहुतृषा हमार, अपनोपरिचय मोहि कहु ॥ ६२ ॥

हे प्रभु अस अचरज मोहि होई । अस सुभाव दूजा नहिं कोई ॥
कौन आहु कहँवाते आये । तन अचिंत प्रभु कहँवा पाये ॥
कौन नाम तुम्हरो गुरु देवा । यह सब वरण कहो मोहि भेवा ॥
हम का जानहिं भेद तुम्हारा । ताते पूछों यह व्यवहारा ॥

करुणामयवचन ।

इन्द्रमती सुनु कथा सुहावन । तोहि समुझाय कहों गुणपावन ॥
देश हमार न्यार तिहुँ पुरते । अहिपुर नरपुर अरु सुरपुरते ॥
तहां नहीं यम केर प्रवेशा । आदि पुरुषको जहवाँ देशा ॥
सत्य लोक तेहि देश सुहेला । सत्य नाम गहि कीजे मेला ॥
अद्भुत ज्योति पुरुषकी काया । हंसन शोभा अधिक सुहाया ॥
आदि पुरुष शोभा अधिकारा । पटतर काहि देहुँ संसारा ॥
द्वीपकरी शोभा उजियारी । पटतर देहुँ काहि संसारी ॥

यहि तीनों पुर अस नहिं कोई । जाकर पटतर दीजै सोई ॥
चन्द्र सूर यहि देश मँझारा । इन सम और नहीं उजियारा ॥
सत्य लोककी ऐसी बाता । कोटिकशशि इक रोम लजाता॥
एक रोमकी शोभा ऐसी । और वदनकी वरणों कैसी ॥
ऐसा पुरुष कान्ति उजियारा । हंसन शोभा कहों बिचारा ॥
एक हंस जस षोडश भाना । अग्र वासना हंस अघाना ॥
तहँ कबहूँ यामिनि नहिं होई । सदा अजोर पुरुष तन सोई ॥
कहा कहों कछु कहत न आवे । धन्य भाग जे हंस सिधावे ॥
ताहि देशते हम चलि आये । करुणामय निज नाम धराये ॥
सतयुग त्रेता द्वापर नामा । तोसन वचन कहों सुख धामा ॥
युगन युगनमें मैं चलि आवों । जो चेते तेहि लोक पठावों ॥

इन्द्रमतीवचन ।

हे प्रभु औरो युग तुम आये । कौन नाम उन युगन धराये ॥

करुणामयवचन ।

सतयुगमें सतनाम कहाये । त्रेता नाम मुनीन्द्र धराये ॥
युगन युगन हम नाम धरावा । जो चीन्हा तिहि लोक पठावा ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

धर्मदास तेहि कह्यो बुझायी । सतयुग त्रेता कथा सुनायी ॥
सो सुनि अधिचाह तिन कीन्हा। और बातसू पूछन लीन्हा ॥
उत्पति प्रलय और बहु भाऊ । यमचरित्र सब वरनि सुनाऊ ॥
जेहि विधि षोडशसुत प्रगटाना। सो सब भाष सुनायो ज्ञाना ॥
कूर्म विदार देवी उत्पानी । सो सब ताहि कहा सहिदानी ॥
ग्रास अष्टंगी और निकासा । जेहि विधि भये महि आकाशा॥
सिन्धु मथन त्रय सुत उत्पानी । सबही कहेउ पाछिलसहिदानी॥

जेहि विधि जीवन जम ठगिराखा। सो सबताहि सुनायउ भाषा ॥
सुनत ज्ञान पाछिल भ्रम भागा । हरषि सो चरण गहे अनुरागा ॥

इन्द्रमतीवचन ।

जोरि पाणि बोली बिलखायी । हे प्रभु यमते लेहु छुडाई ॥
राज पाट सब तुम परवारों । धनसम्पाति यह सब तजि डारों॥
देहु शरण मुहिं दीनदयाला । बंदिछोर मुहिं करहु निहाला ॥

करुणामय वचन ।

इन्द्रमती सुनु वचन हमारा । छोरों निश्चय बंदि तुम्हारा ॥
चीन्हेउ मोहि परतीत दृढाना । अब देहुँ तोहि नाम परवाना ॥
करहु आरती लेवहु परवाना । भागे यम तब दूर पयाना ॥
चीन्हों मोहि करो परवाती । लेहु पान चलभौ जल जीती ॥
आनहु जो कछु आरति साजा । राजपाट कर मोहि न काजा ॥
धनसंपति कछु मोहि न भावा । जीव चितावन यहि जग आवा ॥
धन सम्पति तुम यहँवा लायी । करहु सन्त सम्मान बनायी ॥
सकल जीव हैं साहिब केरा । मोह विवश जिवपरे अन्धेरा ॥
सब घटपुरुष अंश कियो वासा । यहीं प्रगट कहिं गुप्त निवासा ॥

छन्द ।

सब जीव है सतपुरुषका वश, मोह भ्रम विगानहो॥
यमराजकोयहचरित सब, भ्रमजालजगपरधानहो॥
जिवकालवश ह्वै लरत मोसे, भ्रमवश मोहि न चीन्हई ॥
तजि सुधा कीन्हो नेह विषसे, छोडि घृतअचवे मही॥६०॥
सो०–कोइइकविरलाजीव, परखि शब्द मोहि चीन्हई॥
धाय मिले निज पीव, तजे जारको आसरो६३॥

इन्द्रमतीवचन ।

इन्द्रमती सुन वचन अमानी । बोली मधुर ज्ञान गुण बानी ॥

मोहि अधमको तुम सुखदीन्हा । तुव प्रसाद आगमगम चीन्हा॥
हे प्रभु चीन्ह तोहि अब पाहू । निश्चय सत्य पुरुष तुम आहू॥
सत्यपुरुष जिन लोक सँवारा । करेहु कृपा सो मोहि उदारा ॥
आपन हिरदै अस हम जाना । तुमते अधिक और नहिं आना॥
अब भाषहु प्रभु आरति भाऊ । जो चाहिय सो मोहि बताऊ ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

हे धर्मनि सो ताहि सुनावा । जस खेमसरि सो भाषेउ भावा॥
चौका कर लेवहु परवाना । पाछे कहों अपन सहिदाना ॥
आनेउ सकल साज तब रानी । चौका बैठि शब्द ध्वनि ठानी ॥
आरति कर दीन्हा परवाना । पुरुष ध्यान सुमिरण सहिदाना॥
उठि रानी तब माथ नवायी । ले आज्ञा परवाना पायी ॥
पुनि रानी राजहि समुझावा । हे प्रभु बहुरि न ऐसो दावा ॥
गहो शरण जो कारज चाहो । इतना वचन मोर निरवाहो ॥

राजा चन्द्रविजयवचन ।

तुम रानी अरधंगी सोई । हम तुम भक्त होय नहिं दोई ॥
तोरि भक्ति कर देखो भाऊ । किहि विधि मोहि लेहु मुक्ताऊ॥
देखो तोरि भक्ति परतापा । पहुंचो लोक मिटे संतापा ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

रानी बहुरि मोहि पहँ आयी । हम तिहि काल चरित्र लखायी॥
रानी आइ हमारे पासा । तासों किया वचन परकासा॥

करुणामयवचन ।

सुनु रानी एक वचन हमारा । कालहु कला करे छल धारा॥
काल व्याल है तो पहँ आयी । डसे तोहि सो देउँ बतायी ॥
तो कह शिष्य कीन्ह मैं जानी । डसे काल तक्षक है आनी ॥
तब हम तो कहँ मंत्र लखायी । काल गरल तब दूर परायी ॥

दीन्हों शब्द विरहुली ताही । काल गरल जेहि व्यापे नाहीं ॥
पुनि यम दूसर छल तोहि ठानी । सो चरित्र मैं कहों बखानी ॥
छल कर यम आये तुम पासा । सो तुहि भेद कहों परगासा ॥
हंसवर्ण वह रूप बनायी । हम सम ज्ञान तोहि समझायी ॥
तुम सनकहे चीन्ह मुह रानी । मरदन काल नाम मम ज्ञानी ॥
यहि विधिकालठगेतोहि आयी । काल रेख सब देउँ बतायी ॥
मस्तक छोट काल कर जानू । चक्षु गुंजनको रंग बखानू ॥
काल लक्ष म तोहि बतायी । और अंग सब सेत रहायी ॥

इन्द्रमतीवचन ।

रानी चरण गहे तब धायी । हे प्रभु मोहिं लोक ल जायी ॥
यह तो देश आही यम केरा । लै चलु लोक मिटै झकझोरा ॥
यह तो देश कालकर थानी । हे प्रभु लै चलु देश अमानी ॥

करुणामयवचन ।

तब रानीसों कहेउ बुझायी । वचन हमार सुनो चितलाई ॥
अब तोर तिनका यमसो टूटा । परिचय भयो सकल भ्रम छूटा ॥
निशिदिन सुमरो नाम हमारा । कहा करे यम धर्म लबारा ॥
जब लगि ठेका पूरे नाई । तब लग रहो नाम लौ लाई ॥

छंद ।

सुमरु नाम हमार निशिदिन, कालतोकहँजबछले ॥
टीका पुरे नाहीं जौलौं, तौलौं जीव नाहीं चले ॥
काल कला प्रचंड देखो, गजरूप धर जग आवई ॥
देखि केहरि गजत्रास माने, धीर बहुरि न लावई ॥६१॥

सोरठा–गजरूपी है काल, केहरि पुरुष प्रताप ह ॥
रोप रहो तुमढाल, काल खड्ग व्यापे नहीं ६४ ॥

इन्द्रमतीवचन ।

हे साहिब मैं तुम कहँ जानी । वचन तुम्हार लीन्ह सिरमानी ॥
विनती एक करौं तुहि स्वामी । तुम तो साहिब अंतरयामी ॥
काल व्याल हुए मोहिं सतायी । अरु पुनि हंस रूप भरमायी ॥
तब पुनि साहिब मोपहँ आऊ । हंस हमार लोक लै जाऊ ॥

करुणामयवचन ।

कह ज्ञानी सुन रानी बाता । तुमसों एक कहों विख्याता ॥
काल कला धरती पहँ आयी । नाना रंग चरित्र बनायी ॥
तोरो ताहि मान अपमाना । मोहि देखि तब काल पराना ॥
तेहि पीछे हम तुमलग आवैं । हंस तुम्हार लोक पहुँचावैं ॥
शब्द तोहि हम दीन्ह लखाई । निशिदिन सुमरो चित्त लगायी॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

इतना कह हम गुप्त छिपाया । तक्षक रूप काल हो आया ॥
चित्रसार पर तक्षक आया । रानी केर तहँ पलँग रहाया ॥
जबहीं रात बीतगइ आधी । रानी उठि चली सेवा साधी ॥
रानी तब कहँ सीस नवायी । चली तबै महलन कहँ आयी ॥
सेज आय रानी पौढायी । डसेउ व्याल मस्तकमहँ जायी॥

इन्द्रमतीवचन ।

इन्द्रमती अस बचन सुनायी । तक्षक डसेउ मोहि कहँ आयी॥
सुन राजा व्याकुल ह्वै धावा । गुणी गारुडी वेगि बुलावा ॥
राय कहे मम प्राण पियारी । लेहु चिताय जो अबकी बारी॥
तक्षक गरल दूर हो आयी । देहुँ परगना तोहि दिवायी ॥

इन्द्रमतीवचन । छन्द ।

शब्द विरहुलीजपेउरानी, सुरति साहिब राखिहो ॥
वैद गारुडि दूर भाग्यो, दूर नरपति नाहिं हो ॥

मन्त्र मोहि लखाय सतगुरु, गरल मोहि न लागई ॥
होतसूर्यप्रकाश जेहिक्षण, अंधअघोर नशावई॥६२॥
सोरठा–ऐसे गुरु हमार, बार बार विनती करौं ॥
ठाढ़भयी उठिनार, राजालखि हरषितभयो॥६९

यमदूतवचन ।

चल्यो दूत तब उहँवा जायी । जहँ ब्रह्मा विष्णु महेश रहायी॥
कहे दूत विषतेज न लागा । नाम प्रताप बन्ध लो भागा ॥

विष्णुवचन ।

कहे विष्णु सुनहो यमदूता । सेतहि अंग करो तुम पूता ॥
छल करि जाइ लिवाइय रानी । वचन हमार लेहु तुम मानी ॥
कीन्हों दूत सेत सब अंगा । चलेउ नारि पहँ बहुत उमंगा ॥

यमदूतवचन ।

रानी सो अस वचन प्रकाशा । तुम कस रानी भई उदासा ॥
जानि बूझि कसभई अचीन्हा । दीक्षा मंत्र तोहि हम दीन्हा ॥
ज्ञानी नाम हमारो रानी । मरदो काल करौं पिसमानी ॥
तक्षक काल होय तोहि खायी । तब हमराख लीन्ह तोहि आयी॥
छोडहु पलँग गहो तुम पाई । तजहु आपनी मान बडाई ॥
अब हम लैन तोहि कहँ आवा । प्रभुके दर्शन तोहि करावा ॥

इन्द्रमतीवचन ।

इन्द्रमती तब चीन्हेउ रेखा । जसकछु साहिब कहेउ विशेखा॥
तीनों रेख देख चक माहीं । जर्द सेत अरु राता आहीं ॥
मस्तक ओछ देख पुनि ताको । भयो प्रतीत वचनको साको ॥
जाहु दूत तुम अपने देसा । अब हम चीन्हेउ तुम्हरो भेसा॥
काग रूप जो बहुत बनाई । हंस रूप शोभा किमि पाई ॥
तस हम तोरा रूप निहारा । ऐ समर्थ बड गुरू हमारा ॥

यमदूतवचन ।

यह सुनि दूत रोष बड कीन्हा । इन्द्रमतीसों बोले लीन्हा ॥
बार बार तो कहँ समुझावा । नाहि न समुझत मती हिरावा ॥
बोला वचन निकटचलि आवा । इन्द्रमती पर थाप चलावा ॥
थाप चलाय सुमुखपर मारा । रानी खसि परि भूमि मँझारा ॥

इन्द्रमतीवचन ।

इन्द्रमती तब सुमिरण लाई । हे गुरु ज्ञानी होहु सहाई ॥
हम कहँकाल बहुत विधिग्रासा। तुम साहिब काटो यम फांसा॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

सुनत पुकार मुहि रहो न जायी । सुनहु धर्मनि यह मोर सुभायी॥
रानी जबही कीन्ह पुकारा । ततछिन मैं तहांहि पगुधारा ॥
देखत रानी भयी हुलासा । मनते भाग्यो कालको त्रासा ॥
आवत हमरे काल पराया । भयी शुद्ध रानीकी काया ॥

इंद्रमतीवचन ।

पुनि कह इन्द्रमती कर जोरी । हे प्रभु सुनु विनती एकमोरी ॥
चीन्हि परी मोहि यमकी छाहीं । अब यहि देश रहब हम नाहीं ॥
हे साहब लै चलु निज देशा । तहवां है बहु काल कलेशा ॥
इहि विधि कही भयी उदासा । अबहीं लै चलु पुरुषके पासा॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

प्रथमहि रानी कीन्हो संगा । मेटचो काल कठिन परसंगा ॥
तबहीं ठीक पूर भराया । लै रानी सत लोक सिधाया ॥
लै पहुँचायो मान-सरोवर । जहवां कामिनि करहिं कतोहर ॥
अमी सरोवर अमी चखायी । सागर कबीर पांव परायी ॥
तेहि आगे सुरतिको सागर । पहुँची रानी भई उजागर ॥
लोक द्वार ठाढे तब कीनी । देखत रानी अति सुख भीनी ॥
हंस धाय अंकम भर लीन्हा । गावहिं मंगल आरति कीन्हा ॥

सकल हंस कीन्हा सनमाना। धन्य हंस सतगुरु पहिचाना ॥
भल तुम छोडेहु कालकाफन्दा। तुम्हरो कष्ट मिट्यो दुखद्वंदा ॥
चलो हंस तुम हमरे साथा। पुरुष दरश करि नावहु माथा ॥
इन्द्रमती आवहु संग मोरे। पुरुष दरश होवें अब तोरे ॥
इन्द्रमती अरु हंस मिलाहीं। करहिं कुतूहल मंगल गाहीं ॥
चलत हंस सब अस्तुति लावें। अब तो दरश पुरुषको पावें ॥
तबहम पुरुषसन बिनती लावा। देहु दरश अब हंसढिग आवा ॥
देहु दरश तिहिं दीनदयाला। बंदीछोर सु होहु कृपाला ॥
बिकस्यो पुहुप उठा अस बानी। सुनहु योग संतायन ज्ञानी ॥
हंसन कहँ अब आव लिवाई। दरश कराइ लेउ तुम आई ॥

छंद।

ज्ञानी आउ हंस लग तव हंस सकला ले गये ॥
पुरुष दर्शन पाय हंसा रूप शोभा तब भये ॥
कराहिं दंडवत हंस सबही पुरुष पहँ चित लाइया ॥
अमीफल तब चार दीन्हों हंस सबमिलिपाइया६३॥

सोरठा—जस रविके परकाश, दरश पाय पंकज खुलै ॥
तैसे हंस बिलास, जन्म जन्म दुख मिटि गयो६६॥

इन्द्रमतीका लोकमें पहुच पुरुष और करुणामयको एकही
रूपम देखकर चकित होना।

पुरुष कांति जब देखेउ रानी। अद्भुत अमी सुधाकी खानी ॥
गदगद होय चरण लपटानी। हंस सुबुद्धि सुजन गुणज्ञानी ॥
दीनों शीश हाथ जिव मूला। रवि प्रकाश जिमि पंकज फूला ॥

इन्द्रमतीवचन।

कह रानी तुमधनि करुणामय,। जिमिभ्रममेटि आनियहिठामय॥

पुरुषवचन ।

कहा पुरुष रानी समझायी । करुणामय कहँ आनु बुलायी ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

नारि धाय आई मो पासा । महिमा देखि चकित भयेदासा॥

इन्द्रमतीवचन ।

कह रानी यह अचरज आही । भिन्न भाव कछु देखों नाहीं ॥
जे कोइ कला पुरुष कहँदेखा । करुणामय तन एक विशेखा ॥
धाय चरण गह हंस सुजाना । हे प्रभु तव चरित्र सब जाना ॥
तुम सतपुरुष दास कहलाये । यह शोभा कस उहां छिपाये ॥
मोरे चित यह निश्चय आई । तुमहि पुरुष दूजा नहिं भाई ॥
सो मैं आय देख यहि ठाई । धन समरथ मुहिंलिया जगाई ॥

इन्द्रमती स्तुति करती है । छन्द ।

तुम धन्य हो दयानिधान सुजान नाम अचिंतय ॥
अकथअविचलअमर अस्थितअनघअज सुअनादिय
असंशय निःकाम वाम अनाम अटल अखंडितं॥
आदि सबके तुमहि प्रभु हो सर्व भूतसमीपतं॥६४॥

सो०-मोपर भये दयाल, लियहु जगाई जानि निज॥
काटेहु यमको जाल, दीन्हो सुखसागर करी६७॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

संपुट कमल लगो तेहि बारा । चले हंस निज दीप मंझारा ॥

करुणामय (ज्ञानी) वचन इन्द्रमतीप्रति ।

ज्ञानी बूझें रानी बाता । कहो हंस तुम्हरो विख्याता ॥
अब दुख द्वंद तोर मिटि गयऊ । षोडशभानु रूप पुनि भयऊ ॥
ऐसे पुरुष दया तोहि कीन्हा । संशय सोग मेंटि तुव दीन्हा ॥

इन्द्रमतीका अपने पति राजा चन्द्रविजयको लोकमें लानेके लिये विनती करना । इन्द्रमतीवचन ।

इन्द्रमती कह दोउ कर जोरी । हे साहिब इक बिनती मोरी ॥
तुम्हरे चरण भागते पायी । पुरुष दर्श कीन्हा हम आयी ॥
अंगर हमार रूप अति सोही । इक संशय व्यापे चितमोही ॥
मो कहँ भयो मोह अधिकारा । राजा तो पति आहि हमारा ॥
आनहु ताहि हंसपति राई । राजा मोर काल मुख जाई ॥

करुणामयवचन ।

कहे ज्ञानी सुन हंस सुजाना । राजा नहिं पाये परवाना ॥
तुम तो हंसरूप अब पाया । कौन काज कहँ राव बुलाया ॥
राजा भाव भक्ति नहिं पाया । सत्त्व हीन भवभटका खाया ॥

इन्द्रमतीवचन ।

हे प्रभु हम जग महँ रहेऊ । भक्तितुम्हार बहुत विधिकरेऊ॥
राजा भक्ति हमारी जाना । हम कहँ बरजेउ नहीं सुजाना॥
कठिन भाव संसार सुभाऊ । पुरुष छोडि कहुं नारि रहाऊ ॥
सब संसार देहि तिहि गारी । सुनतहि पुरुष डार तेहि मारी॥
राजा काज अतिमान बडाई । पाखंड क्रोध और चतुराई ॥
साधु संतकी सेवा करऊं । राजाकेर त्रास ना डरऊँ ॥
सेवा करौं संतकी जबहीं । राजा सुनि हरषित हो तबहीं ॥
जो मोहि तजि न देतो राजा । तो प्रभु मोर होत किमि काजा॥

छन्द ।

रायकी हम हतीप्यारी, मोहि कबहु न बरजेउ ॥
साधु सेवा कीन्ह नित हम, शब्द मारग चीन्हेऊ ॥
चरण मो कहँ मिलत कैसे, मोहि बरजत रायजा ॥
नाम पाननमिलत मोकहँ, कैसे सुधरत काज जो॥ ६९

सो०–धन्य राय सुज्ञान, आनहु ताहि हंसनपति ॥
तुम गुरु दयानिधान, भूपति बंद छुडाइये ॥६८॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

सुन ज्ञानी बहुतै विहँसाये । चले तुरंत बार नहिं लाये ॥
गढगिरनार बेगि चलि आया । नृपति केरि अवधि नियराया ॥
घेरचो ताहि लेन यमराई । राजहिं देत कष्ट बहुताई ॥
राजा परे गाढ महँ आया । सतगुरु कहे तहां गुहराया ॥
छोडे नृप नाहीं यमराई । ऐसे भक्ति चूक है भाई ॥
भक्ति चूक कर ऐसे ख्याला । अवधि पूर जम करै विहाला ॥
चन्द्रविजयका कर गहि लीन्हा । तत्क्षण लोक पयाना दीन्हा ॥
रानी देखि नृपति ढिग आई । राजा केर गह्यो तब पाई ॥

इन्द्रमतीवचन ।

इन्द्रमती कहे सुनहु भुवारा । मोहि चीन्हों मैं नारि तुम्हारा ॥

राजा चन्द्रविजयवचन ।

राय कहैं सुनु हंस सुजाना । वरण तोर षोडश शशिभाना ॥
अंग अंग तोरे चमकारी । कैसे कहों तोहि मैं नारी ॥
तुम तो भक्ति कीन्ह भल नारी । हमहू कहँ तुम लीन्ह उबारी ॥
धन्य गुरु अस भक्ति दृढाई । तोरि भक्ति हम निजघर पाई ॥
कोटिन जन्म कीन्ह हम धर्मा । तब पाई अस नारि सुकर्मा ॥
हम तो राजकाज मन लाया । सतगुरु भक्ति चीन्ह नहिं पाया ॥
जो तुम मोरि होत ना रानी । तो हम जात नरककी खानी ॥
तुव गुण मोहि वरणि ना जाई । धन गुरु धन्य नारि हम पाई ॥
जस हम तो कहँ पायउ नारी । तैसे मिले सकल संसारी ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

सुनत वचन ज्ञानी विहँसायी । चन्द्रविजयकहँ वचन सुनायी ॥

करुणामयवचन ।

सुनो राय तुम नृपति सुजाना । जो जिव शब्द हमारा माना ॥
ते पुनि आय पुरुष दरबारा । बहुरि न देखे वह संसारा ॥
हंस रूप होवे नर नारी । जो निज माने बात हमारी ॥
पुरुष दर्श नरपति चितलायी । हंस रूप शोभा अति पायी ॥
षोडश भानु रूप नृप पावा । जानु मयंकम ढार बनावा ॥

धर्मदासवचन । छन्द ।

धर्मदास विनती करे, युग लेख जीव सुनायऊ ॥
धन्य नाम तुम्हारा साहिब, राय लोकसमायऊ ॥
तत्व भाव न गहेउ राजा, भक्ति तुव निजठानिया ॥
नारि भक्ति प्रतापते, यमराजसे नृप आनिया६६ ॥
सो०—धन्यनारिकोज्ञान, लीन्हबुलायस्वनृपतिकहँ॥
आवागमन नशान,जगमें बहुरि न आइया॥६९॥
ता पीछे पुनि का प्रभु कीना । सोई कथा कहो परवीना ॥
कैसे पुनि आये भवसागर । सो कहिये हंसन पतिनागर ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

धर्मनि पुनि आये जगमाहीं । रानी पति लै गये तहाहीं ॥
राख्यो ताहि लोक मंझारा । ततछिन पुनि आयउ संसारा ॥
काशी नगर तहां चलि आये । नाम सुदरशन सुपच जगाये ॥

सुपच सुदर्शनकी कथा ।

नाम सुदर्शन सुपच रहाई । ता कहे हम सत शब्द दृढाई॥
शब्द विवेकी संत सुहेला । चीन्हा मोहि शब्दके मेला ॥
निश्चय वचन मान तिन्ह मोरा । लखि परतीत बंदि तिहि छोरा॥
नाम पान दियो मुक्तिसंदेशा । मेटचोसुसकल काल कलेशा ॥

शब्द[1] ध्यान तेहि दीन्ह दृढाई । हरषित नाम सुमिरे चितलाई ॥
सतगुरु भक्तिकरे चितलाई । छोडी सकल कपट चतुराई ॥
तात मात तेहि हर्ष अपारा । महा प्रेम अतिहित चितधारा ॥
धर्मनि यह संसार अँधेरा । बिनु परिचय जिव यमको चेरा ॥
भक्ति देख हर्षित हो जायी । नाम पान हमरो नहिं पाई ॥
प्रगट देख चीन्हे नहिं मूढा । परे कालके फन्द अगूढा ॥
जैसे श्वान अपावन रांचेउ । तिमि जग अमी छोडि विषरांचेउ ॥
नृपति युधिष्ठिर द्वापरराजा । तिन पुनि कीन्ह यज्ञको साजा ॥
बन्धु मार अपकीरति कीन्हा । ताते यज्ञ रचन चित दीन्हा ॥
कृष्ण केर जब आज्ञा पाई । तब पाण्डव सब साज मंगाई ॥
यज्ञकी सामग्री गहि सारी । जहँ तहँते सब साधु हंकारी ॥
पाण्डव प्रति बोले यदुपाला । पूरन यज्ञ जान तिहिं काला ॥
घण्ट अकाश बजत सुनि आवे । यज्ञको फल तब पूरन पावे ॥
संन्यासी बैरागी झारी । आये ब्राह्मण औ ब्रह्मचारी ॥
भोजन विविध प्रकार बनाई । परम प्रीतिसे सबहिं जेवांई ॥
इच्छा भोजन सबमिलि पावा । घंट नहिं बाजा राय लजावा ॥
जबही घण्ट न बाज अकाशा । चकित भयो राय बुधिनाशा ॥
भोजन कीन सकल ऋषिराया । बजा न घण्ट भूप भ्रम आया ॥
पाण्डव तबहिं कृष्ण पहँ गयऊ । मन संशयकारि पूछत भयऊ ॥

युधिष्ठिरवचन ।

करिके कृपा कहो यदुराजा । कारण कौन घण्ट नहिं बाजा ॥

कृष्णउत्तर ।

कृष्ण अस कारण तासु बताया । साधू कोइ न भोजन पाया ॥

---

१ "शब्द ध्यान" के बदले किसी किसी प्रतियोंमें "सुरति ध्यान" लिखा है ।

युधिष्ठिरवचन ।

चकित भै तब पाण्डव कहेऊ । कोटिन साधु भोजन लहेऊ ॥
अब कहँ साधु पाइय नाथा । तिनते तब बोले यदुनाथा ॥

कृष्णवचन ।

सुपच सुदर्शनको लै आवो । आदर मान समेत जिमावो ॥
सोई साधु और नहिं कोई । पूरन यज्ञ जाहिते होई ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

कृष्ण आज्ञा जब अस पयऊ । पाण्डव तब ताके ढिग गयऊ ॥
सुपच सुदर्शनको लै आये । विनय प्रीतिसे ताहि जेवांये ॥
भूप भवन भोजन कर जबहीं । बजा अकाशमें घंटा तबहीं ॥
सुपच भक्त जब ग्रास उठावा । बाजो घण्ट नाम परभावा ॥
तबहुँ न चीन्हे सतगुरु बानी । बुद्धि नाश यम हाट बिकानी ॥
भक्त जीव कहँ काल सताये । भक्त अभक्त सबन कहँ खाये ॥
कृष्ण बुद्धि पाण्डव कहँ दीन्हा । बंधु घात पाण्डव तब कीन्हा ॥
पुनि पाण्डव कहँ दोष लगावा । दोषलगा तेहि यज्ञ करावा ॥
ताहूपर पुनि अधिक दुखावा । भेजि हिमालय तिन्हैं गलावा ॥
चार बन्धु सह द्रौपदि गहेऊ । उबरे सत्य युधिष्ठिर रहेऊ ॥
अर्जुन सम प्रिय और न आना । ताकर अस कीन्हा अपमाना ॥
बलि हरिचन्द करण बड दानी । काल कीन्हपुनितिन्हकी हानी॥
जिव अचेत आशा तेहि लावे । खसम बिसार जारको धावे ॥
कला अनेक दिखावे काला । पीछे जीवन करे बिहाला ॥
मुक्ति जान जिव आशा लावें । आशा बांधि काल मुख जावें ॥
सब कहँ काल नचावे नाचा । भक्त अभक्त कोइ नहिं बाचा ॥
जो रक्षक तेहि खोजे नाहीं । अनचीन्हें यमके मुख जाहीं ॥
बार बार जीवन समुझावा । परमारथ कहँ जीव चितावा ॥

अस यम बुद्धि हरी सब केरी । फन्द लगाय जीव सब घेरी ॥
सत्य शब्द कोइ परखे नाहीं । यम दिश होय लरै हमपाहीं ॥
जबलगि पुरुष नाम नहिं भेंटे । तबलगि जन्म मरण नहिं मेटे ॥
पुरुष प्रभाव पुरुष पहँ जायी । कृत्रिम नामते यम धरि खायी ॥
पुरुष नाम परवाना पावे । कालहि जीत अमर घर जावे ॥

छन्द ।

सत नाम प्रताप धर्मनि, हंस लोक सिधावई ॥
जन्ममरणको कष्ट मेटै, बहुरि न भव जल आवई ॥
पुरुषकी छबि हंस निरखहिं, लहे अति आनँदघना॥
अंशहंसमिलकरेकुतूहल, चंद्रकुमुदिनि सँगबना॥६७॥
सो०--जैसे कुमुदिनिभाव, चन्द्र देखि निशि हर्षई ॥
तैसइ हंस सुख पाव, पुरुष दर्शके पावते॥७०॥
नहीं मलीन मुख भाव, एकप्रभाव सदा उदित॥
हंस सदा पाव, शोक मोह दुख क्षणक नहिं॥७१॥
जबै सुदरशन ठेका पूरा । ले सत लोक पठायो सूरा ॥
मिले रूप शोभा अधिकारा । अरु हंसन संग कुतूहल सारा ॥
षोडश भानुरूप तब पावा । पुरुष दर्श सो हंस जुडावा ॥

धर्मदासवचन ।

हे साहिब इक विनती मोरा । खसम कबीर कहु बंदी छोरा ॥
भक्त सुदर्शन लोक पठायी । पीछे साहिब कहां सिधायी ॥
सो सतगुरु मुहि कहो सँदेशा । सुधावचन सुनि मिटै अँदेशा ॥

कबीरवचन ।

अब सुनु धर्मनि परम पियारा । तुमसों कहौं अलग व्यवहारा ॥
द्वापर गत कलियुग परवेशा । पुनि हम चल जीवन उपदेशा ॥
धर्मराय कहँ देख्यो आई । मोहि देखि यम गयो मुझाई ॥

धर्मरायवचन ।

कहे धर्म कस मोहिं दुखावहु । भच्छ हमार लोक पहुँचावहु ॥
तीनों युग गवने संसारा । भवसागर तुम मोर उजारा ॥
हारी वचन पुरुष मोहि दीन्हा । तुम कस जीव छुडावन लीन्हा ॥
और बन्धु जो आवत कोई । छिनमहँ ता कहँ खांव बिलोई ॥
तुमते कछू न मोर बसाई । तुम्हरे बल हंसा घर जाई ॥
अब तुम फेर जाहु जगमाहीं । शब्द तुम्हार सुनै कोउ नाहीं ॥
करम भरम मम अतकै ठाटा । ताते कोइ न पावै बाटा ॥
घर घर भ्रम भूत उपजावा । धोखा दै दै जीव नचावा ॥
भरम भूत है सब कहँ लागे । तोहि चिन्है ता कहँ भ्रम भागे ॥
मद्य मांस खावै नर लोई । सर्व मांस प्रिय नरको होई ॥
आपन पंथ मैं कीन परगासा । सर्व मांस मद्य मानुष ग्रासा ॥
चण्डी जोगिन भूत पुजाओं । यही भ्रम है जग जहै मडाओं ॥
बांधि बहु फन्दहि फन्द फँदाओं । अंतकाल कर सुधि बिसराओं ॥
तुम्हरी भक्ति कठिन है भाई । कोई न मनि है कहों बुझाई ॥

ज्ञानीवचन ।

धर्मरायते बड छल कीन्हा । छल तुम्हार सकलो हम चीन्हा ॥
पुरुष वचन दूसर नहिं होई । ताते तुम जीवन कहँ खोई ॥
पुरुष मोहि जो आज्ञा देही । तो सब होंय नाम सनेही ॥
ताते सहजहिं जीव चेताऊं । अंकुरी जीव सकल मुकताऊं ॥
कोटि फन्द जो तुम रचिराखा । वेदशास्त्र निज महिमा भाखा ॥
प्रगट कला जो धरि जग जाऊं । तो सब जीवनको मुकताऊं ॥
जो अस करौं वचन तब डोलै । वचन अखंड अडोल अमोलै ॥
जो जियरा अंकूरी शुभ होई । शब्द हमार मानि है सोई ॥
अंकुरी जीवसकल मुकताओं । फन्दा काटि लोक लै जाओ ॥
काटि भरम जो देहों ताही । भरम तुम्हार मानि हैं नाहीं ॥

छंद ।

सत्य शब्द दिढाय सबहीं, भ्रमतोरि सब डारिहौं ॥
छल तोर सब चिन्हाइ तबहीं, नामबलजियतारिहौं॥
मनवचन सत्य जोमोहि चीन्ही, एकतत्त्वलौलाइहैं ॥
तवसीस तुम्हरे पांव देहीं, अमल लोक जिव आइहैं६८॥
सोरठा-मर्दहि तोरा मान, सूराहंस सुजान कोइ ॥
सत्यशब्द सहिदान, चीन्हहि हंसहरषअती॥७२॥

धर्मरायवचन

कहै धर्म जीवन सुखदाई । बात एक मुहि कहो बुझाई ॥
जो जिव रहै तुम्हैं लौ लाई । ताके निकट काल नहिं जाई ॥
दूत हमार ताहि नहिं पावे । मूर्छित दूत मोहि पहँ आवे ॥
यह नहिं बूझ परी मोहिं भाई । तौन भेद मोहि कहो बुझायी ॥

ज्ञानीवचन ।

सुनहु धर्म जो पूछहु मोही । सो सब हाल कहौं मैं तोही ॥
सुनहु धर्म तुम सतसाहिदानी । सोतो सत्यशब्द आहि निर्बानी॥
पुरुष नाम है गुप्त परमाना । प्रगट नाम सतहंस बखाना ॥
नाम हमार हंस जो गहई । भवसागर सो सो निरबहई ॥
दूत तुम्हार होय बल थोरा । जब मम हंस नाम ले मोरा ॥

धर्मरायवचन ।

कहै धर्म सुनु अंतरयामी । कृपा करहु अब मोपर स्वामी॥
यहि युग कौन नाम तुव होई । सो जनि मोपर राखहु गोई ॥
बीरा अंक गुप्त गन आऊ । ध्यान अंग सब मोहि बताऊ ॥
केहि कारन तुम जाहु संसारा । सोइ कहहु मोहि भेदगुन न्यारा॥
हमहूं जीवन शब्द चेतायब । पुरुष लोककहँ जीव पठायब ॥
मोहिं दास आपन कर लीजै । शब्दसार प्रभु मो कहँ दीजै ॥

ज्ञानीवचन।

सुनहु धर्म तुम कस छल करहू। प्रगट सुदास गुप्त छल धरहू॥
गुप्त भेद नहिं देहौं तोही। पुरुष अवाज कही नहिं मोहीं॥
नाम कबीर मोर कलिमाहीं। कबीर कहत यम निकटनजाहीं॥

धर्मरायवचन।

कहै धर्म तुम मोहिं दुरै हो। खेल एक पुन हमहु खेलै हो॥
ऐसी छल बुधि करब बनाई। हंस अनेक लेब संग लाई॥
तुम्हार नाम ले पंथ चलायब। यहि विधि जीवन धोखदिखायब॥

ज्ञानीवचन।

अरे काल तू पुरुष द्रोही। छलमति कहा सुनावसि मोही॥
जो जिव होइ है शब्द सनेही। छल तुम्हार नहिं लागै तेही॥
जौहरी हंस लेहिं पहिचानी। परखि हैं ज्ञान ग्रंथ मम बानी॥
जेहि जीव में थापव जाई। छल तुम्हार तेहि देव चिन्हाई॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति।

यहि सुनत धर्मराय गहुमौना। ह्वै अन्तर्धान गयो निज भौना॥
धर्मनि कठिन काल गतिगन्दा। छल बुध कै जीवन कहँ फन्दा॥

धर्मदासवचन।

कह धर्मनि प्रभु मोहि सुनावो। आगल चरित्र कहि समुझाओ॥

जगन्नाथ मन्दिरकी स्थापनाका वृत्तान्त।

कबीरवचन धर्मदासप्रति।

राजा इन्द्रदमन तेहि काला। देश उडेसेको महिपाला॥

सतगुरुवचन।

राजा इन्द्रदमन तहँ रहई। मंडप काज युगति सो कहई॥
कृष्ण देह छांडी पुनि जबही। इन्द्रदमन सपना भा तबही॥
स्वप्नेमें हरि अस ताहि बताई। मेरो मंदिर देहु उठाई॥
मोकहँ स्थापन कर राजा। तो पहँमैं आयउ यहि काजा॥

राजा यहिविधि सपना पायी । ततक्षण मंडप काम लगायी ॥
मंडप उठा पूर्ण भा कामा । उदधि आय बोरा तेहि ठामा ॥
पुनि जब मंदिर लाग उठावा । क्रोधवंत सागर तब धावा ॥
क्षणमें धाय सकल सो बोरे । जगन्नाथको मंदिर तोरे ॥
मंडप सो षट बार बनायी । उदधि दौर तिहिं लेत डुबायी ॥
हारा नृप करि यतन उपायी । हरिमन्दिर तहँ उठै न भाई ॥
मन्दिरकी यह दशा विचारी । वर पूरब मन माहिं सम्हारी ॥
हम सन काल मांग अन्याई । बाचा बन्ध तहां हम जायी ॥
आसन उदधि तीर हम कीन्हा । काहू जीवन मोही चीन्हा ॥
पीछे उदधि तीर हम आई । चौरा तहां बनायऊ जाई ॥
इन्द्रदमन तब सपना पावा । अहो राय तुम काम लगावा ॥
मंडप शंक न राखो राजा । इहँवा हम आये यहि काजा ॥
जाहु वेगि जनि लावहु बारा । निश्चय मानहु वचन हमारा ॥
राजा मंडप काम लगायो । मंडप देखि उदधि चल आयो ॥
सागर लहर उठी तिहि बारा । आवत लहर क्रोध चितधारा ॥
उदधि उमंग क्रोध अतिआवे । पुरुषोत्तम पुर रहन ना पावे ॥
उमँगेउ लहर अकाशे जायी । उदधि आय चौरा नियरायी ॥
दरश हमार उदधि जब पायी । अति भयमान रह्यो ठहराई ॥

छन्द ।

रूप धारचो विप्रको तब, उदधि हमपहँ आइया ॥
चरण गहिके माथनायो, मर्म हम नाहिं पाइया ॥

उदधिवचन ।

जगन्नाथ हम मोर स्वामी, ताहिते हम आइया ॥
अपराध मेरो क्षमा कीजे, भेदअब हम पाइया ॥ ६९ ॥

सोरठा-तुमप्रभु दीनदयाल, रघुपतिवोइलदिवाइये॥
वचन करो प्रतिपाल, कर जोरे बिनतीकरौं७३॥
कीन्हेउ गवन लंक रघुबीरा। उदधि बांध उतरे रणधीरा॥
जो कोइ करे जोरावरि आई। अलख निरंजन वोइल दिखाई॥
मोपर दया करहु तुम स्वामी। लेउ ओइल सुनु अंतरयामी॥

कबीरवचन।

ओइल तुम्हार उदधि हमचीन्हा। बोरहु नगर द्वारका दीन्हा॥
यह सुनि उदधि धरे तब पांई। चरण टेकके चल हरषाई॥
उदधि उमँग लहर तब धायी। बोरचो नगर द्वारका जायी॥
मंडप काम पूर तब भयऊ। हरिकी थापन तहँवा कियऊ॥
तब हरि पंडन स्वपन जनावा। दास कबीर मोहि पहँ आवा॥
आसन सागर तीर बनायी। उदधि उमंग नीर तहँ आयी॥
दरश कबीर उदधि हट जाई। यहि विधि मंडप मोर बचाई॥
पंडा उदधि तीर चलि आये। करि अस्नान मंडप चल आये॥
पंडन अस पाखंड लगायी। प्रथम दरश मछेच्छ दिखायी॥
हरिके दर्शन मैं नहिं पावा। प्रथमहि हम चौरालग आवा॥
तब हम कौतुक एक बनाये। कहों वचन नहिं राखु छिपाये॥
मंडप पूजन जब पंडा गयऊ। तहँवा एक चरित असभयऊ॥
जहँ लग मूरति मंडप माहीं। भये कबीर रूप धर ताहीं॥
हर मूरति कहँ पंडा देखा। भये कबीर रूप धर भेखा॥
अक्षत पुहुप ले विप्र भुलाई। नहिं ठाकुर कहँ पूजहुँ भाई॥
देखि चरित्र विप्र सिर नाया। हे स्वामी तुम मर्म न पाया॥

पण्डावचन।

हम तुम काहि नहीं मनलाया। ताते मोहि चरित्र दिखाया॥
क्षमा अपराध करो प्रभु मोरा। बिनती करों दोइ कर जोरा॥

कबीरवचन । छंद ।

वचन एक मैं कहों तोसों, विप्र सुन तैं कान दे ॥
पूज ठाकुर दीन्ह आयसु, भाव दुविधा छोड दे ॥
भ्रम भोजन करे जो जिव, अंगहीन हो ताहिको ॥
करे भोजन छूत राखे, सीस उलट ताहिको ॥ ७० ॥
सोरठा–चौराकरिव्यवहार, भ्रमविमोचनज्ञानदृढ ॥
तहँते कियो पसार, धर्मदास सुनु कानदे ॥ ७४ ॥

धर्मदासवचन ।

धर्मदास कहे सतगुरु पूरा । तुम प्रसाद भयउ दुख दूरा ॥
जेहि विधि हरिकहँथापेउजाई । सो साहिब सब मोहिं सुनाई ॥
ता पीछे कहवां तुम गयऊ । कौन जीव कैसे मुकतयऊ ॥
कलियुग केर कहो परभाऊ । और हंस परमोधेउ काऊ ॥
सो मोहि वरण कहो गुरु देवा । कौन जीव कीन्ही तुम सेवा ॥

कबीरवचन ।

धर्मदास तुम बूझहु भेदा । सो सब हमसों कहो निषेदा ॥

चार गुरुकी स्थापनाका वृत्तान्त ।

सुनहु संत यह ज्ञान अनूपा । गज थल देस परमोध्यो भूपा ॥

रायबंकेजी ।

रायबंकेज नाम तेहि आही । दीनेउ सार शब्द पुनि ताही ॥
कीन्ह्यो ताहि जीवन कडिहारा । सो जीवनका करैं उबारा ॥

सहतेजी ।

झिलमिली दीपतहांचलिआये । सहतेजी एकसंत चिताये ॥
ताहूको कडिहारी दीन्हा । जबउनमो कहँनिजकरचीन्हा ॥

---

१ किसी किसी ग्रंथमें यही चौपाई ऐसे लिखी है–
सुनो सन्त यह कथा अनूपा । गज अस्थल मरमोध्यो भूपा ॥

चतुरभुज।

तहांते चलि आए धर्मदासा। रायचतुरभुज नृपति जहँ बासा॥
ताकर देश आहि दरभंगा। परखिसि मोहि संतपरसंगा॥
देखि अधीन ताहि समझावा। ज्ञान भक्ति विधि ताहि दृढावा॥
दृढता देखि ताहि पुनि थापा। मिला मोहि छाँडि भ्रम आपा॥
मायामोह न तनिको कीन्हा। अमर नाम तब ताही दीन्हा॥
ताहू कहँ कडिहारी दीना। चतुर्भुज शब्द हेतकरि लीना॥

छंद।

हस निरमल ज्ञान रहनी, गहनि नाम उजागरा॥
कुल कानि सबै बिसारि विषया, जौहरी गुण नागरा॥
चतुर्भुज बंकेज औ सहतेज, तुम चौथे सही॥
चारिहैं कडिहारजिवकै, गिरा निश्चल हमकही ७१॥
सो०—जम्बुदीपके जीव, तुम्हरी बांह मो कहँमिले॥
गहे वचनदृढ पीव, ताहि काल पावे नहीं॥७५॥

धर्मदासवचन।

धन सतगुरु तुम मोहिं चेतावा। काल फन्दते मोहि मुकतावा॥
मैं किंकर तुव दासके दासा। लीन्हों मोरि काटि जमफांसा॥
मोते चित अतिहरष समाना। तुव गुण मोहि न जाय बखाना॥
भागी जीव शब्द तुव माना। पूरण भाग जो तुव व्रत ठाना॥
मैं अघकर्मी कुटिल कठोरा। रहेउ अचेत भ्रम जिव मोरा॥
कहा जानि तुम मोहि जगाये। कौने तप हम दर्शन पाये॥
सो समुझाय कहो जियमूला। रवि तव गिरा कमल मनफूला॥

धर्मदासके पिछले जन्मोंकी कथा। कबीरवचन।

इच्छा कर जो पूछा मोही। अब मैं गोइ न राखौं तोही॥
धर्मनि सुनहु पाछली बाता। तोहि समझाय कहो विख्याता॥

संत सुदर्शन द्वापर भयऊ । तासुकथा तोहि प्रथम सुनयऊ॥
तेहि ले गयो देश निज जबहीं । विनती बहुत कीन तिन तबहीं॥

सुपचवचन ।

कहे सुपच सतगुरु सुन लीजे । हमरे मात पिता गति दीजे ॥
बंदी छोड करो प्रभु जाई । यमके देश बहुत दुख पाई ॥
मैं बहु भांति पिता समझावा । मातु पिता परतीति न पावा ॥
बालक वद नाहिं ज्ञान सिखावा । भक्तिकरत नाहिं मोहि डरावा ॥
भक्ति तुम्हारि करन जब लागे । कबहुँ न द्रोह कीन्ह मम आगे॥
अधिक हर्ष ताही चित होई । ताते विनती करौं प्रभु सोई ॥
आनहु तेहि सत शब्द दृढाई । बंदी–छोर जीव मुकताई ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

विनती बहुत संत जब कीन्हा । ताकर वचन मान हम लीन्हा ॥
ताकर विनय बहुरि जग आवा । कलियुग नाम कबीर कहावा ॥
हम इक वचन निरंजन हारा । वाचा बंध उदधि पगु धारा ॥
और दीप हंसन उपदेशा । जम्बुदीप पुनि कीन प्रवेशा ॥
संत सुदरसनके पितु माता । लछमी नर हर नाम सुहाता ॥
सुपच देह छोडी तिन भाई । मानुष जन्म धरे तिन आई ॥

सुपचसुदर्शनके मातपिताके पहला जन्म कुलपति और ।
महेश्वरीकी कथा ।

संत सुदर्शन केर प्रतापा । मानुष देह विप्रके छापा ॥
दोनों जन्म दोय तब लीन्हा । पुनिविधिमिलै ताहिकहँदीन्हा॥
कुलपति नाम विप्र कर कहिया । नारी नाम महेसारि रहिया ॥
बहुत अधीन पुत्र हित नारी । करी अस्नान सूर्य व्रतधारी ॥
अञ्चल लै विनवै कर जोरी । रुदन करे चितसुत कह दौरी ॥
तत्क्षण हम अंचल पर आवा । हम कहँ देखि नारि हरषावा ॥
बाल रूप धरि भेंट्यो वोही । विप्र नारि गृह लै गइ मोही ॥

कहै नारि कृपा प्रभु कीना। सूर्य व्रत कर फल यह दीना॥
बहुत दिवसलग तहां रहाये। नारि पुरुष मिल सेवा लाये॥
रहे दरिद्रते दुखी अपारा। हम मन महँ अस कीन विचारा॥
प्रथमहि दरिद्रता इनकर टारों। पुनिभक्तिमुक्तिकरवचनउचारों॥
जब हम पलना झटक झकोरा। मिलत सुवर्ण ताहि इक तोरा॥
नितप्रति सोन मिलै इक तोला। ताते भये वह सुखी अमोला॥
पुनि हम सत्य शब्द गोहराई। बहु प्रकारते उनहिं समझाई॥
ता हृदये नहिं शब्द समायी। बालक जान प्रतीत न आयी॥
ताहि देह चीन्हसि नहिं मोहीं। भयो गुप्त तहँ तन तजि वोही॥

सुपचसुदर्शनके पितामाताके दूसरे जन्ममें चंदनसाहु
और ऊदाकी कथा।

नारि द्विज दोई तन त्यागा। दरश प्रभाव मनुज तनु जागा॥
पुनि दोनों भये अंश मिलाऊ। रहहि नगर चंद वारे नाऊ॥
ऊदा नाम नारी कहँ भयऊ। पुरुष नाम चंदन धरि गयऊ॥
परसोतमते हम चलि आये। तब चंदवारा जाइ प्रगटाये॥
बालक रूप कीन्ह तेहि ठामा। किन्हेउ ताल माहिं विश्रामा॥
कमल पत्र पर आसन लाई। आठ पहर हम तहां रहाई॥
पीछे ऊदा अस्नानहि आयी। सुन्दर बालक देखि लुभायी॥
दरश दियो तेहि शिशुतन धारी। लेगई बालक निज घर नारी॥
ले बालक गृह अपने आई। चन्दन साहु अस कहा सुनाई॥

चन्दनसाहुवचन।

कहु नारी बालक कहँ पायी। कौने विधिते इहँवा लायी॥

ऊदावचन।

कह ऊदा जल बालक पावा। सुन्दर देखि मोर मन भावा॥

चन्दनसाहुवचन।

कह चन्दनते मूरख नारी। वेगि जाहु दै बालक डारी॥
जाति कुटुम्ब हँसिहैं सब लोगा। हँसत लोग उपजै तन सोगा॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

ऊदा त्रास पुरुष कर माना । चन्दन साहु जबै रिसियाना ॥

चन्दनसाहुवचन चेरी प्रति ।

बालक चेरी लेहु उठाई । लै बालक जल देहु खसाई ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

चल चेरी बालक कहँ लीन्हा । जलमहँ डारन ताहिचितदीन्हा॥
चलि भइ मोहि पवांरन जबहीं । अन्तरधान भयो मैं तबहीं ॥
भयउ गुप्त तेहि करसे भाई । रुदन करें दोनों बिलखाई ॥
बिकल होय बन ढूँढत डोलैं । मुग्ध ज्ञान कछू मुख नहिं बोलैं॥

सुपच सुदर्शनके माता पिता तीसरे जन्में नीमा हुए ।

यहिविधि बहुतदिवसचलिगयऊ । तजि तनजन्मबहुरितिनपयऊ॥
मानुष तन जुलहा कुल दीन्हा । दोउ संयोगबहुरि विधि कीन्हा॥
काशी नगर रहे पुनि सोई । नीरू नाम जुलाहा होई ॥
नारि गवन लावे मग सोई । जेठमास बरसाइत होई ॥
नारि लिवाय आय मगमाहीं । जल अचवन गह बनिता ताहीं॥
ताल माहिं पुरइन पनवारा । शिशु होय मैं तहँ पगुधारा ॥
तहां जस बालक रहुँ पौढाई । करौं कुतूहल बाल स्वभाई ॥
नीमा दृष्टि परी तिहि ठांऊ । देखत दरश भयो अति चाऊ॥
जिमि रवि दरश पदुमविगसाना । धाय गहो धन रंक समाना ॥
धाय गही कर लिया उठायी । बालक लै नीरूपहँ आयी ॥
जुलहा रोष किन्ह तेहि बारी । बेगि देहु तुम बालक डारी ॥
हर्ष गुनावन नारी लायी । तब हम तासो वचन सुनाई ॥

---

१ बरसाइत बटसाविश्रीका अपभ्रंश है । यह वटसावित्री व्रत ज्येष्ठशुद्ध पूर्णमासीको होता है इसकी विस्तारपूर्वक कथा महाभारतमें है । उसी दिन कबीर साहब नीमा और नूरीको मिले थे । इस कारणसे कबीर पंथियोंमें बरसाइत महातम ग्रंथकी कथा प्रचलित है और उस दिन कबीर पंथीलोग बहुत उत्सव मनाते हैं॥

छन्द।

सुनहु वचन हमरे नीमा, तोहि कहूँ समझायके ॥
प्रीत पिछली कारणे तुहि, दरश दीन्हो आयके ॥
आपने गृह मोहि लै चलु, चीन्हिकै जो गुरु करो ॥
देऊँ नाम दृढ़ाय तो कहँ, फन्द यमके ना परो॥७२॥

सोरठा–सुनत वचन अस नारि, नीरूत्रासनराखेउ।
लै गई गेह मँझार, काशि नगर तब पहुँचेउ७६

नारी न मान त्रास तेहि केरा। रंक धनद सम लै चलि डेरा ॥
जोलहा देखि नारी लौलीना। लेइ चलो अस आयसुदीना ॥
दिवस अनेक रहे तेहि ठाईं। कैसहु तेहि परतीत न आयी ॥
बहुतदिवस तेहि भवन रहावा। बालक जान न शब्द समावा ॥

सुपच सुदर्शनके माता पिताका चौथे जन्ममें मथुरामें
प्रगट होकर सत्यलोक जाना।

बिन परतीत काज नहिं होई। दृढ कै गहहु परतीत बिलोई ॥
ताहि देह पुनि मोहि न चीन्हा। जानि पुत्र मोहि संग न कीन्हा ॥
तजि सो देह बहुरि जो भाई। देह धरी सो देहुँ चिन्हाई ॥
जुलहाकी तब अवधि सिरानी। मथुरा देह धरी तिन आनी ॥
हमतहँ जाय दरश तिन दीन्हा। शब्द हमार मानसों लीन्हा ॥
रतना भक्ति करे चितलाई। नारि पुरुष परवाना पाई ॥
ता कहँ दीन्हेउ लोक निवासा। अंकूरी पठये निज दासा ॥
पुरुष चरण भेटे उरलाई। शोभा देह हंस कर पाई ॥
देखत हंस पुरुष हरषाने। सुकृत अंश कही मन माने ॥
बहुत दिवस लगि लोक रहाये। तबलगि काल जीव संताये ॥
जीवन दुखअतिशय भयोभाई। तबहीं पुरुष सुकृत हंकराई ॥

आज्ञा कीन्ह जाहु संसारा । काल अपर बल जीव दुखारा ॥
लोक संदेशा ताहि सुनाओ । देइ नाम जीवन मुकताओ ॥
आज्ञा सुनत सुकृत हरषाये । तुरतहिं लोक पयाना लाय ॥
सुकृत देखि काल हरषाई । इन कहँ तो हम लेब फँसाई ॥
करि उपाय बहुत तब काला । सुकृत फँसाय जालमहँ डाला ॥
बहुत दिवस गयो जब बीता । एकहु जीवन कालहिं जीता ॥
जीव पुकार सतलोक सुनाये । तबहीं पुरुष मोकहँ हंकराये ॥

कबीरसाहबका धर्मदासजीको चितानेके लिये लोकसे पृथ्वीपर आना । पुरुष वचन ।

पुरुष अवाज उठी तिहि बारा । ज्ञानी बेग जाहु संसारा ॥
जीवन काज अंश पठवायी । सुकृत अंश जग प्रगटे जायी ॥
दीन्ह आज्ञा तेहिको भाई । शब्द भेद वाही समझाई ॥
लावहु जीवन नाम अधारा । जीवन खेइ उतारो पारा ॥
सुनत आज्ञा वहिकीन पयाना । बहुरि न आये देश अमाना ॥
सुकृत भवसागर चलि गयऊ । काल जालते सुधि बिसरयऊ ॥
तिन कहँ जाय चितावहु ज्ञानी । जेहिते पंथ चले निरवानी ॥
बंस व्यालिस अंस हमारा । सुकृत गृह लैहैं औतारा ॥
ज्ञानी बेगि जाहु तुम अंसा । अब सुकृतअंशकर मेटहु फंसा ॥

कबीर वचन ।

चलेउ हम तब सीस नवाई । धर्मदास हम तुम लग आई ॥
धर्मदास तुम नीरू औतारा । आमिन नीमा प्रगट विचारा ॥
तुमतो आहू प्रिय मम अंसा । जा कारन हम कीन्ह बहुसंसा ॥
पुरुषहिआज्ञातुम्हरेढिग आये । पिछली हेतु पुनि यादकराये ॥
यहि संयोग हम दर्शन दीन्हा । धर्मनिअबकीतुममोहिचीन्हा ॥
पुरुष अवाज कहूँ तुम पासा । चीन्हेहु शब्द गहो विश्वासा ॥
धाय परे चरणन धर्मदासा । नैन बारि भर प्रगट प्रगासा ॥

धरहिं न धीर बहुर संतोखा । तुम साहिब मेटहु जिवधोखा ॥
धरे न धीरज बहुत प्रबोधे । बिछुरि जननिजिमिमिल्यो अबोधे
युग पग गहे सीस भुई लाये । निपट अधीर न उठत उठाये ॥
बिलखत बदन वचन नहिं बोले । सुरति चरणते नेक न डोले ॥
निरखत वदन बहुरो पदगहहीं । गदगद हृदय गिरा नहिं कहहीं॥
बिलखत बदन स्वास नहिं डोले । उनमुनि दशापलकनहिं खोले॥

धर्मदासवचन ।

बहुरि चरण गहि रोवहिं भारी । धन्य प्रभु मोहितारनतनधारी॥
धरि धीरज तब बोल सम्हारी । मोकहँ प्रभु तारन पगधारी ॥
अब प्रभु दया करहु यहि मोही । एकौ पल ना बिसरों तोही ॥
निशिदिन रहों चरन तुमसाथा । यह बर दीजे करहू सनाथा ॥

कबीर वचन ।

धर्मदास निह संशय रहहू । प्रेमप्रतीति नाम दिढ गहहू ॥
चीन्हेउ मोहि तोर भ्रम भागा । रहहु सदा तुम दृढ अनुरागा ॥
मन बच कर्म जाहि जो गहई । गो तेहि तज अंते कसरहई ॥
आपन चाल बिना दुख पावे । मिथ्या दोष गुरू कहँ लावे ॥
पंथ सुपंथ गुरू समझावे । शिष्य अचेतन हृदय समावे ॥
तुम तो अंश हमारे आहू । बहुतक जीव लोक ले जाहू ॥
चार माहि तुम अधिक पियारे । किहि कारण तुम सोच विचारे॥
हम तुमसों कछु अंतर नाहीं । परख शब्द देखो हिय माहीं ॥
मन वच कर्म मोहि लौ लावे । हृदये दुतिया भाव न आवे ॥
तुम्हरे घट हम वासा किन्हा । निश्चय हम आपन कर लीन्हा ॥

छंद ।

आपनो कर लीन्ह धर्मनि, रहो निःसंशय हिये ॥
करहु जीव उबार दृढ है, नाम अविचल तुहि दिये॥

मुक्ति कारण शब्द धारण, पुरुष सुमिरणसार हो ॥
सुरति बीरा अंकधीरा, जीवका निस्तार हो ॥७३॥
सोरठा—तुमतौहौधर्मदास, जंबुदीपकडिहारजिव[1] ॥
पावे लोकनिवास, तुहि समेत सुमिरे मुझे ॥७७॥

धर्मदासवचन ।

धन सतगुरु धन तुम्हरी बानी । मुहिं अपनायदीन्हगति आनी ॥
मोहि आय तुम लीन्ह जगायी । धन्य भाग्य हम दर्शन पायी ॥
धनसाहब मुहिं आपन कीन्हा । मम शिर चरण सरोरुह दीन्हा ॥
मैं आपन दिनशुभ करि जाना । तुम्हरे दरश मोक्ष परमाना ॥
अब अस दयाकरहु दुख भंजन । कबहुँ मोहि न धरे निरंजन ॥
काल जाल जौनी विधि छूटे । यम बन्धन जौनी विधि टूटे ॥
सोई उपाय प्रभु अब कीजे । सार शब्द बताय मोहि दीजे ॥

कबीरवचन ।

धर्मदास तुम सुकृत अंशा । लेइ पान अब मेटहु संशा ॥
धर्मदास आपन करि लेऊँ । चौका करि परवाना देऊँ ॥
तिनका तुड़ाय लेहु परवाना । काल दशा छूटे अभिमाना ॥
शालिग्रामको छाडहु आसा । गहिसत शब्द होहु तुम दासा ॥
दश औतार ईश्वरी माया । यह सब देखु कालकी छाया ॥
तुम जगजीव चितावन आये । काल फन्द तुम आइ फँसाये ॥
अबहूँ चेत करो धर्मदासा । पुरुषहिं शब्द करो परकासा ॥
ले परवाना जीव चिताओ । काल जालते हँस मुकताओ ॥
यह काज तुम जगमें आये । अब न करहु दोसर मनभाये ॥

---

१ कर्णधार मल्लाह, नाव खेकर पार उतारनेवाला, भवसागरसे गुरु पार उतारते हैं इस कारण उन्हें कडिहार कहते हैं ॥

छन्द।

चतुर्भुज बंकेज सहतेज, और चौथे तुम अहौ ॥
चार गुरु [illegible]ार जगके, बचन यह निश्चयगहौ ॥
यही चार [illegible] संसारमें, जीव काज प्रगटाइया ॥
स्वसम्भेद [illegible] गदियो, जेहि सुनिकाल भगाइया॥७४

सोरठा–चा[illegible] धर्मदास, जम्बुदीपके गुरु सही ॥
ब्यालिस [illegible]विलास, तरैंजीवतेहिशरणगही॥७८

आरतीविधिवर्णन।

[illegible] साहबका चौका करके धमदासजीको परवाना देना।

धर्मदासवचन।

धर्मदास पद गहि अनुरागा। हो प्रभु मोहि कीन सुभागा ॥
हे प्रभु! नाहिं रसना प्रभुताई। अमित रसन गुण बरनि न जाई॥
महिमा अमित अहै तुमस्वामी। केहि विधि बरनों अन्तरयामी ॥
मैं सबविधि अयोग्य अविचारी। मुझ अधमहिं तुम लीन उबारी॥
अब चौकाभेदकहो [illegible]हिस्वामी। काहि कहहु तिहुका सुखधामी॥
जो तुम कहौ करौं मैं सोई। तामहँ फेर न परिहैं कोई ॥

[illegible]गिवचन। चौकाका साज।

धर्मदास सुनु [illegible] साजा। जाते भागि चले यमराजा ॥
सात [illegible] [illegible] लाओ। स्वेत चँदेवा छत्र तनाओ ॥
घर आंगन सब [illegible] कराओ। चौका करि चंदन छिडकाओ॥
तापर [illegible] चौका पुराओ। सवा सेर तन्दुल लै आओ ॥
स्वेत सिंहासन तहाँ बिछाई। नाना सुगन्ध धरु तहँ लगाई ॥
स्वेत मिठाई स्वेतै पाना। [illegible]गीफल स्वेतहि परमाना ॥
लौंग इलायची [illegible]पुर सँवारो। मेवा अष्ट केरा पनवारो ॥

जिव पीछे नरियल लै आओ । यह सब साजसु आनि धराओ ॥
जो कछु साहब आज्ञा कीन्हा । धर्मदास सब कछु धरि दीन्हा ॥
बहुरि धर्मनि विनती अनुसारा । अब समरथ कहु मुक्तिविचारा ॥
सबहि वस्तु मैं आनेउँ साई । जस तुम निजमुख भाखिसुनाई ॥
सुनत वचन साहब हर्षाने । धन्य धर्मनि अब तुम मनमाने ॥

छन्द ।

चौकाविधिते पोतिप्रभु, आसन बैठिया जायहो ॥
लघु दीरघ जीव धर्मनि, सबहिं लीन्ह बुलायहो ॥
नारिपुरुष एक मति करि, लीन नरियर हाथहो ॥
गुरुसन्मुखधरिभेंटकीन्हा, बहुविधिनायेमाथहो७५ ॥
सोरठा–सतगुरुचरणमयंक, चितचकोरधर्मनि कहा ॥
मेटचोसबमनशंक, भावभक्ति अतिचित धन्यो ॥७९ ॥

चौका कीन शब्द धुनिगाजा । ताल मिरदङ्ग झांझरी बाजा ॥
धर्मदासको तिनका तोरा । जाते काल न पकरे छोरा ॥
सत्य अंक साहब लिख दीना । ततछिन धर्मदास गहिलीना ॥
धर्मदास परवाना लीन्हा । सात दण्डवत तबहीं कीन्हा ॥
सतगुरु हाथ माथ तिहि दीन्हा । दै उपदेश किरतारथ कीन्हा ॥

कबीर साहबका धर्मदासजीको उपदेश देना ।

कहैं कबीर सुनो धर्मदासा । सत्यभेद मैं कियो परकासा ॥
नाम पान तुहि दीन लखाई । काल जाल सबदीन मिटाई ॥
अब सुनु रहन गहनकी बाता । बिन जाने नर भटका खाता ॥
सदा भक्ति करो चितलाई । सेवो साधु तजि मान बडाई ॥
पहिले कुल मरजादा खोवो । भयते रहित भक्त तब होवो ॥
सेवा करो छाँडि मत दूजा । गुरुकी सेवा गुरुकी पूजा ॥

गुरुसे करे कपट चतुराई । सो हँसा भव भरमें आई ॥
ताते गुरुसे परदा नाहीं । परदा करे रहे भवमाहीं ॥
गुरुके वचन सदा चित दीजे । माया मोह सु कोर न भीजे ॥
यहि रहनी भव बहुरि न आवे । गुरुके चरणकमल चितलावे ॥

छन्द ।

सुनहु धर्मदास दृढके गहो, एक नामकी आसहो ॥
जगत जालबहु जंजाल है, काल लगाये फांस हो ॥
पुरुष नाम परताप धर्मनि, सुमति होय सुधि लहे ॥
नारिनरपरिवारसबमिलि, कालकराल तबनारहे ७९ ॥
सोरठा–तुमघरजेतिकजीव, सबकहँ बेगि बुलावहू ॥
सुरति धरो दृढ पीव, बहुरि काल पावे नहीं ॥ ८० ॥

धर्मदासवचन ।

हे प्रभु तुम जीवनके मूला । मेटेउ मोर सकल तन सूला ॥
आहि नारायण पुत्र हमारा । सौंपहु ताहि शब्द टकसारा ॥
इतना सुनत सद्गुरु हँसि दीन्हा । भाव प्रगट बाहर नहिं कीन्हा ॥

कबीरवचन ।

धर्मदास तुम बोलाव तुरन्ता । जेहिको जानहुतुम शुद्धअन्ता ॥
धर्मदास तब सबहिं बुलावा । आय खसमके चरण टिकावा ॥
चरण गहो समरथके आई । बहुरि न भवजल जन्मो भाई ॥
इतना सुनत बहुत जिव आये । धाय चरण सतगुरु लपटाये ॥
यह नहिं आये दास नरायन । बहुतक आय परे गुरु पायन ॥
धर्मदास सोच मन कीन्हा । काहे न आयो पुत्र परवीना ॥

नारायणदासजीका कबीरसाहबकी अवज्ञा करना ।

धर्मदासवचन अपने दास दासियोंप्रति ।

दास नरायन पुत्र हमारा । कहाँ गयो बालक पगुधारा ॥

ताकहँ ढूँढ लाहु कोइ जायी । दास नरायन गुरुपहँ आयी ॥
रूपदास गुरु कीन्ह प्रतीता । देखहु जाय पढत जहँ गीता ॥
वेगि जाइ कहु तुम्हें बुलायी । धर्मदास समरथ गुरु पायी ॥
सुनत सँदेशी तुरतहि जायी । दास नरायन जहां रहायी ॥

संदेसीवचन नारायणदासप्रति ।

चलहु वेगि जनि बार लगाओ । धर्मदास तुम कहँ हँकराओ ॥

नारायणदासवचन ।

हम नहिं जायँ पिताके पासा । वृद्ध भये सकलौ बुधि नाशा ॥
हरिसम कर्ता और कहँ आही । ताको छोड जपें हम काही ॥
वृद्ध भये जुलहा मन भावा । हम मन गुरु विठलेश्वर पावा ॥
काहि कहौं कछु कहो न जाई । मोरा पिता गया बौराई ॥

संदेशीवचन ।

चाल संदेशी आया तहँवा । धर्मदास बैठे रह जहँवा ॥
कह संदेशी रह अरगाये । दास नराइन नाहीं आये ॥
यह सुन धर्मदास पगुधारा । गये तहां जहँ बैठे बारा ॥

धर्मदासवचन नारायणदासप्रति । छन्द ।

चलहु पुत्र भवन सिधारहु, पुरुष साहिब आइया ॥
करहु विनती चरण टेकहु, कर्म सकल कटाइया ॥
सतगुरुकरोतिहिआयकहुँचलु, वेगितजि अभिमानरे ॥
बहुरि ऐसो दाव बने नहिं, छाडि दे हठ बावरे ॥७७॥
सोरठा-भलसतगुरुहम पा॰, यमके फन्द कटाइया ॥
बहुरि न जनमहँ आव, उठहु पुत्र तुम बे॰ ॰ी ८१

नारायणदासवचन ।

तुम तो पिता गये बौराई । तीजे पन जिंदा गुरु पाई ॥

राम नाम सम और न देवा। जाकी ऋषिमुनि लावहिं सेवा॥
गुरु विठलेश्वर छांडेउ हीता। वृद्ध भये जिंदा गुरु कीता॥

धर्मदासवचन।

बांह पकर तब लीन्ह उठाई। पुनि सतगुरुके सन्मुख लाई॥
सतगुरु चरण गहोरे वारा। यमके फन्द छुडावन हारा॥
बहुरि न योनी संकट आवे। जो जिव नाम शरणगत पावे॥
तज संसार लोक कहँ जाई। नाम पान गुरु होय सहाई॥

नारायणदासवचन।

तब मुख फेरे नरायन दासा। कीन्ह मलेच्छ भवन परगासा॥
कहँवाते जिंदा ठग आया। हमरे पितहिं डारि बौराया॥
वेद शास्त्र कहँ दीन्ह उठायी। आपनि महिमा कहत बनायी॥
जिंदा रहे तुम्हारे पासा। तौ लग घरकी छोडी आसा॥
इतना सुनत धर्मदास अकुलाने। ना जानो सुतका मत ठाने॥
पुनि आमिनबहुविधि समझायो। नारायन चित एकु न आयो॥
तब धर्मदास गुरु पहँ आये। बहुविधिते पुनि विनती लाये॥

धर्मदासवचन कबीरप्राति।

कहो प्रभु कारन मोहि बतायी। कोइ कारन पुत्र दुचितायी॥

कबीरवचन।

तब सतगुरु बोले मुसकायी। प्रथमहिं धर्मनि भाख सुनायी॥
बहुरि कहो सुनहू दे कानो। या महँ कछु अचरजना मानो॥
पुरुष अवाज उठी जिहि बारा। ज्ञानी वेगि जाहु संसारा॥
काल देत जीवन कहँ त्रासा। वेगि जाहु काटहु यमफांसा॥
ज्ञानी तत्क्षण मस्तक नाई। पहुँचे जहां धर्म अन्याई॥
धर्मराय ज्ञानी कहँ देखा। विपरीतरूप कीन्ह तब भेखा॥

धर्मरायवचन।

सेवा बस दीप हम पाया। तुम भवसागर कैसे आया॥
करों सँहार सही तोहि ज्ञानी। तुम तो मर्म हमार न जानी॥

ज्ञानीवचन ।

ज्ञानी कहै तब सुनु अन्याई । तुम्हरे डर हम नाहिं डराई ॥
जो तुम बोलेउ वचन हँकारा । तत्क्षण तो कहँ डारों मारा ॥

धर्मरायवचन ।

तबै निरंजन बिनती लाई । तुम जग जाय जीव मुक्ताई ॥
सकलो जीव लोक तुव जावे । कैसे क्षुधा सु मोरि बुझावे ॥
लक्षजीव हम निशिदिन खाया । सवा लक्ष नितप्रति उपजाया ॥
पुरुष मोहि दीन्ही रजधानी । तैसे तुमहू दीजे ज्ञानी ॥
जगमें जाय हंस तुम लावहु । काल जालते तिन्हें छुडावहु ॥
तीनों युग जिव थोरा गयऊ । कलियुगमें तुम माड मडयऊ ॥
अब तुम आपन पंथ चलैहो । जीवन लै सतलोक पठैहो ॥
इतना कही निरंजन बोला । तुमते नहीं मोर बस डोला ॥
और बन्धु जो आवत कोई । छिनमहँ ता कहँ खात बिगोई ॥
मैं कहौं तो मतिहो नाहीं । तुम तो जान जगतके माहीं ॥
हमहूँ करब उपाय तहांहीं । शब्द तुम्हार माने कोइ नाहीं ॥
करम भरमें अस कहूं ठाटा । जाते कोइ न पावे बाटा ॥
घर घर भूत भरम उपजायब । धोखा देइ देइ जीव भुलायब ॥
मद्य मांस भक्षै नर लोई । सर्व मांस मद नर प्रिय होई ॥
तुम्हरी कठिन भक्ति है भाई । कोइ न मनि हैं कहौं बुझाई ॥
ताहीते मैं कहौं तुम पाहीं । अब जनि जाहु जगतके माहीं ॥

कबीरवचन ।

तेहि क्षण कालसन हम भाखा । छलबलतुम्हरो जानि हमराखा ॥

छन्द ।

देऊँ सत्य शब्द दिढाय, हंसहिं भरम तेरो टारऊँ ॥
लक्ष बल तुम्हारसबचिन्हायडारूं, नामबलजिवतारऊँ ॥

मनकर्म बानी मोहि सुमिरे, एक तत्त्व लौलाइहैं ॥
सीस तुम्हरे पांव द जीव, अमरलोकसिधाइहैं॥७८॥
सोरठा-मरदे तुम्हरो मान, सूरा हंससुजान कोइ ॥
सत्यशब्द परमान, चीन्हे हंसहि हर्ष अति॥८२॥
इतना सुनत काल जब हारा । छलमत्ता तब करन बिचारा॥

धर्मरायवचन ।

कहै धरम सुनु अंश सुखदायी । बात एक मुहिं कहौ बुझायी॥
यहि युग कौन नाम तुम्ह कोई । तौन नाम मुहि भाखो सोई ॥

कबीरवचन ।

नाम कबीर हमार कलिमाहीं । कबीरकहतजमनिकटनआहीं॥

धर्मरायवचन ।

इतना सुनत बोला अन्याई । सुनौ कबीर मैं कहौं बुझायी॥
तुम्हरो नाम लै पंथ चलायब । यहि विधिजीवनधोखलगायब॥
द्वादश पंथ करब हम साजा । नाम तुम्हारे करब अवाजा ॥
मृतु अन्धा है हमरो अंशा । सुकृतके घर होवे वंशा ॥
मृतु अंधा तुम्हरे गृह जैहैं । नाम नरायन नाम धरै हैं ॥
प्रथमैं अंश हमारा जाई । पीछे अंश तुम्हारा भाई ॥
इतनी बिनती मानो मोरी । बार बार मैं करौं निहोरी ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति ।

तब हम कहा सुनो धर्मराया । जीवन काज फंद तुम लाया ॥
ता कहँ वचन हार हम दीन्हा । पीछे जगहिं पयाना कीन्हा ॥
सो मृत अंधा तुम घर आवा । भयउ नरायन नाम धरावा ॥
काल अंश तो आहि नरायन । जीवन फन्दा काल लगायन ॥

छन्द ।

हम नाम पंथ प्रकाश करि हैं, जीव धोखा लावई ॥
भूत भेद न जीव पावे, जीव नरकहिं नावई ॥

जिमि नाद गावतपारधीबश, नाद मृग कहँकीन्हेऊ ॥
नादसुनि ढिगमृग आयोजब, चोट तापर दीन्हेऊ ॥ ७९ ॥
सोरठा–तस यम फंद लगाय, चेतनहारा चेति हैं ॥
वचन वंश जिन पाय, ते पहुँचे सतलोक कहाँ ८३

द्वादश पंथका वर्णन ।

धर्मदासवचन ।

द्वादश पन्थ कालसों हारा । सो साहिब मोहिं कहो विचारा ॥
कौन पंथकी कैसी रीती । कहिये सतगुरु होय प्रतीती ॥
हम अजान कछु मर्म न जाना । तुम साहिब सतपुरुष समाना ॥
मो किंकर पर कीजे दाया । उठि धर्मदास गहे दोइ पाया ॥

कबीरवचन ।

धर्मनि बूझहु प्रगट सँदेशा । मेटहुँ तोर सकल भ्रम भेषा ॥
द्वादश पंथ नाम समझाऊँ । चाल भेद सब तोहि लखाऊँ ॥
जस कछु होय चाल व्यवहारा । धर्मदास मैं कहों पुकारा ॥
तोरे जिवका धोख मिटाऊँ । चित संशय सब दूर बहाऊँ ॥

मृत्युअंधा दूतका पन्थ १ ।

प्रथम पंथका भाखौ लेखा । धर्मदास चित करो विवेका ॥
मृतु अंधा इक दूत अपारा । तुम्हरे गृह लीन्हों औतारा ॥
जीवन काज होइ दुखदाई । बार बार मैं कहों चिताई ॥

तिमिर दूतका पन्थ २ ।

दूजा तिमिर दूत चल आवे । जात अहीरा नफर कहावे ॥
बहुतक ग्रंथ तुम्हार चुरै हैं । आपन पन्थ नियार चलैहैं ॥

अंधअचेत दूतका पन्थ ३ ।

पन्थ तीसरे तोहि बताऊँ । अन्ध अचेत सो दूत लखाऊँ ॥

होय खवास आय तुम पासा। सुरत गुपाल नाम परकासा॥
अपनो पन्थ चलावै न्यारा। अक्षर जोगजीव भ्रम डारा॥

मनभंग दूतका पन्थ ४।

चौथा पन्थ सुनो धर्मदासा। मनभंग दूत करै परकासा॥
कथा मूल ले पंथ चलावे। मूल पंथ कहि जगमहिं आवे॥
लूदी नाम जीव समुझाई। यही नाम पारस ठहराई॥
झंग शब्द सुमरिन मुख भाखे। सकल जीव थाका गहि राखे॥

ज्ञानभंगी दूतका पन्थ ५। छन्द।

पंथ पांचों सुनो धर्मनि ज्ञान भंगी दूत जो॥
पंथतिहि टकसार है सुर साधु आगम भाख जो॥
जीभनेत्र ललाटके सब रेखा जिवके परखावई॥
तिल मसा परिचय देखिके तब जीव धोख लगवावई॥८०॥
सो०-जस जिहि कामलगाय, तसतिहिपानखवाइ हैं॥
नारी नर बंधाय, चहुँ दिश आपन फेरि हैं॥८४॥

मनमकरंद दूतका पन्थ ६।

छठे पंथ कमाली नाऊ। मनमकरन्द दूत जग आऊ॥
मुरदा माहिं कीन्ह तिहिं बासा। हम सुत होय कीन परकासा॥
जीवहि झिलमिल ज्योति दृढाई। यहि विधि बहुत जीव भरमाई॥
जौं लगि दृष्टि जीवकर होई। तौं लगि झिलमिल देखे सोई॥
दोनों दृष्टि नाहिं जिन देखा। कैसे झिलमिल रूप परेखा॥
झिलमिल रूप कालकर मानो। हिरदे सत्य ताहि जनि जानो॥

चितभंग दूतका पन्थ ७।

साते दूत आहि चित भंगा। नाना रूप बोल मन रंगा॥
दौन नाम कह पंथ चलावे। बोलनहार पुरुष ठहरावे॥
पांच तत्व गुण तीन बतावे। यहि विधि ऐसा पंथ चलावे॥

बोलत वचन ब्रह्म है आपा । गुरु वासिष्ठ राम किमि थापा॥
कृष्ण कीन्ह गुरुकी सेवकाई । ऋषि मुनि और गने को भाई॥
नारद गुरु कह दोष लगावा । ताते नरकवास भुगतावा ॥
बीजक ज्ञान दूत जो थापे । जस गूलर कीडा घट व्यापे ॥
आपा थापी भला न होई । आपा थापि गये जीव रोई ॥

अकिलभंग दूतका पन्थ ८ ।

अब मै आठवें पंथ बताऊं । अकिल भंग दूत समझाऊं ॥
परमधाम कहि पंथ चलावे । कछु कुरान कछु वेद चुरावे ॥
कछुकछु निरगुणहमरो लीन्हा । तारतम्य पोथी इक कीन्हा ॥
राह चलावे ब्रह्मका ज्ञाना । करमी जीव बहुत लपटाना ॥

विशम्भर दूतका पन्थ ९ ।

नववें पंथ सुनो धर्मदासा । दूत विशम्भर केर तमासा ॥
राम कबीर पंथ कर नाऊ । निरगुण सरगुण एक मिलाऊ॥
पाप पुन्य कहँ जाने एका । ऐसे दूत बतावे टेका ॥

नकटानैनदूतका पन्थ १० ।

अब मैं दसवां पंथ बताऊं । नकटा नैन दूत कर नाऊं ॥
मतनामी कह पंथ चलावें । चार वरण जिव एक मिलावें ॥
ब्राह्मण और क्षत्री परभाऊ । वैश्य शूद्र सब एक मिलाऊं ॥
सतगुरु शब्द न चीन्हें भाई । बांधे टेक नरक जिव जाई ॥
काया कथनी कहि समुझावे । सत्य पुरुषकी राह न पावे ॥

छन्द ।

सुनहु धर्मनि काल वाजी, करहि बड फन्दावली ॥
अनेक जीवन लइ गरासै, काल कर्म कर्मावली ॥
जो जीव परखे शब्द मम, सो निसतरें जमजालते ॥
गहे नाम प्रताप अविचल, जाय लोकअमानते ८१

सो०-पुरुषशब्द है सार,सुमिरण अमी अमोलगुण॥
हंसा होय भौ पार, मन बच कर जो दृढगहे॥८५॥

दुगदानी दूतका पन्थ ११।

पंथ इकादश कहों विचारा। दुरगदानि जो दूत अपारा॥
जीव पंथ कहि नाम चलावे। काया थाप राह समुझावे॥
काया कथनी जीव बतायी। भरमें जीव पार नहिं पायी॥
जो जिव होय बहुत अभिमानी। सुनके ज्ञान प्रेम अतिठानी॥

हंसमुनि दूतका पन्थ १२।

अब कहुँ द्वादश पंथ प्रकाशा। दूत हंसमुनि करे तमाशा॥
वचन बंस घर सेवक होई। प्रथम करे सेवा बहु तोई॥
पाछे अपनो मत प्रगटावे। बहुतक जीवन फन्द फँदावे॥
अंश बंसका करे विरोधा। कछु अमान कछु मान प्रबोधा॥
यहि विधि जम बाजी लावे। बारह पन्थ निज अंश प्रगटावे॥
फिरिफिरिआवे फिरिफिरि जाई। बार बार जगमें प्रगटाई॥
जहां जहां प्रगटे यमदूता। जीवनसे कह ज्ञान बहूता॥
नाम कबीर धरावे आपा। कथि ज्ञान काया कहँ थापा॥
जब जब जनम धरे संसारा। प्रगट होयके पन्थ पसारा॥
करामात जीवन बतलावे। जिव भरमाय नरक महँ नावे॥

छंद।

असकाल परबल सुनहु धर्मनि, करेछलमाति आयके॥
मम बचन दीपक दृढगहे, मैं लेहुँ ताहि बचायके॥
अंश हंसन तुम चितायेओ, सत्य शब्दहिं दानते॥
शब्द परखे यमहि चीन्हे, हृदय दृढगुरुज्ञानते॥८२॥
सोरठा-चितचितोधर्मदास, यमराजाअसछल करे॥
गहे नाम विश्वास,ता कहँ यम नहिं पावई॥८६॥

धर्मदासवचन ।

हे प्रभु तुम जीवनके मूला । मेटहु मोर सकल दुख शूला ॥
आहि नरायन पुत्र हमारा । अब हम ता कहँ दीन्ह निकारा॥
काल अंश गृह जन्मो आई । जीवन काज भयो दुखदाई ॥
धन सतगुरु तुम मोहि लखावा । काल अंशको भाव चिन्हावा ॥
पुत्र नरायन त्यागि हम दीना । तुमरो वचन मानि हम लीना॥

धर्मदास साहबको नौतम अंशका दर्शन होना ।

धर्मदास बिनवै सिर नाई । साहिब कहो जीव सुखदाई ॥
किहि बिधि जीवतरै भौसागर । कहिये मोहि हंसपति आगर ॥
कैसे पन्थ करौं परकासा । कैसे हंसहिं लोक निवासा ॥
दास नरायन सुत जो रहिया । काल जान ताकहँ परिहरिया॥
अब साहिब देहु राह बताई । कैसे हंसा लोक समाई ॥
कैसे बंस हमारो चलि है । कैसे तुम्हरो पन्थ अनुसरि है ॥
आगे जेहिते पन्थ चलाई । ताते करौं विनती प्रभुराई ॥

कबीरवचन ।

धर्मदास सुनु शब्द सिखापन । कहों संदेश जानि हित आपन॥
नौतम सुरति पुरुषके अंशा । तुव गृह प्रगट होइ है वंशा ॥
वचन वंश जग प्रगटे आई । नाम चुरामणि ताहि कहाई ॥
पुरुष अंशके नौतम वंशा । काल फन्द काटे जिव संशा ॥

छंद ।

कलि यहि नाम प्रताप धर्मनि, हंस छूटे कालसो ॥
सत्तनाम मन बिच दृढगहे, सो निस्तरे यमजालसो ॥
यम तासु निकट न आवई, जेहि बंशकी परतीतिहो॥
कलिकालके सिरपांवदै, चले भवजल जीतिहो८३॥

सोरठा-तुमसों कहों पुकार, धर्मदास चितपरखहू॥
तेहि जिव लेहुँ उबार, वचन जो वंश दृढगहे॥८७॥

धर्मदासवचन।

हे प्रभु विनय करों कर जोरी। कहत वचन जिव त्रासै मोरी॥
वचन वंश पुरुषके अंशा। पावउँ दर्श मिटे जिव संशा॥
इतनी विनय मान प्रभु लीजे। हे साहिब यह दाया कीजे॥
तब हम जानहिं सतकी रीती। वचन तुम्हार होय परतीती॥

कबीरवचन मुक्तामणिप्रति।

सुन साहिब अस वचन उचारा। मुक्तामणि तुम अंश हमारा॥
अति अधीन सुकृत हठ लायी। तिनकहँ दर्श देहु तुम आयी॥
तब मुक्तामणि क्षण इक आये। धर्मदास तब दर्शन पाये॥

धर्मदासवचन।

गहिके चरण परे धर्मदासा। अब हमरे चितपूजी आसा॥
बारम्बार चरण चितलाया। भले पुरुष तुमदर्श दिखलाया॥
दर्श पाय चित भयो अनंदा। जिमि चकोर पाये निशि चंदा॥
अब प्रभु दया करो तुम ज्ञानी। वचन वंश प्रगटे जग आनी॥
आगे जोहिते पन्थ चलाई। तेहिते करों विनती प्रभुराई॥

कबीरवचन। चूरामणिकी उत्पत्तिकी कथा।

कहैं कबीर सुनो धर्मदासा। दशौं मास प्रगटे जिव कासा॥
तुम गृह आय लेहि अवतारा। हंसन काज देह जग धारा॥
धर्मदास सुनु शब्द सिखापन। कहों सँदेश जानि हित आपन॥
वस्तु भंडार दीन तुम पांही। सौंपहु वस्तु बतावहु ताही॥
अब जो होइ हैं पुत्र तुम्हारा। सो तो होइ हैं अंश हमारा॥

धर्मदासवचन।

धर्मदास अस विनती लायी। हे प्रभु मोकहँ कहु समझाई॥
हे पुरुष हम इन्द्री वश कीन्हा। कैसे अंश जनम जग लीन्हा॥

कबीरवचन ।

तब आयसु साहब अस भाखे । सुरति निरति करि आज्ञा राखे ॥
पारस नाम धर्मनि लिखि देहू । जाते अंश जन्म सो लेहू ॥
लखहु सैन मैं देऊँ लखाई । धर्मदास सुनियो चितलाई ॥
लिखो पान पुरुष सहिदाना । आमिन देहु पान परवाना ॥

धर्मदासवचन ।

तब गयउ धर्मदास कह शंका । दृष्टि समीप कीन्हा पर संगा ॥
धर्मदास आमिन हँकरावा । लाय खसमके चरन परावा ॥
पारस नाम पान लिख दीन्हा । गरभवास आसा सो लीन्हा ॥
रति सुरति सो गरभ जो भयऊ । चूरामनिदास बास तहँ लयऊ ॥
धरमदास परवाना दीन्हा । आमिन आय दंडवत कीन्हा ॥
दसों मास जब पूजी आसा । प्रगटे अंश चूरामणि दासा ॥
कहिये अगहन मास बखानी । शुक्ल पक्ष सातम दिन जानी ॥
मुकतायन परगटि जब आये । द्रव्य दान औ भवन लुटाये ॥
धन्य भाग मोरे गृह आये । धर्मदास गहि टेके पाये ॥

कबीरवचन ।

जाना कबीर मुकतायन आये । धर्मदास गृह तुरत सिधाये ॥
अहै मुक्तकेर अक्षर मुक्तायन । जीवन काज देह धर आयन ॥
अजर छाप अब प्रगटे आये । यमसो जीव लेहि मुक्ताये ॥
जीवन केर भयो निस्तारा । मुक्तामनि आये संसारा ॥

ब्यालीस वंशके राज्यकी स्थापना ।

कछुकदिवस जबगये बितायी । तब साहिब इकवचन सुनायी ॥
धर्मदास लो साज मँगाई । चौका जुगत करब हम भाई ॥
थापब वंश बयालिस राजू । जाते होय जीवको काजू ॥
धर्मदास सब साज मंगाई । ज्ञानी आगे आन धराई ॥

धर्मदासवचन।

और साज चाहो जो ज्ञानी। सो साहिब मोहि कहो बखानी॥

कबीरवचन।

साहिब चौका जुगत मडावा। जो चहिये सो तुरत मँगावा॥
बहुत भांतिसों चौक पुरायी। चूरामणि कहँ ले बैठायी॥
पुरुष वचन तुम जगमँह आये। तेहि विधि जीव लेहु मुकताये॥
वंश बयालिस दीन्हा राजू। तुमते होय जीवकर काजू॥

चूरामणिको कबीरसाहेबका उपदेश देना।

तुमते वंश बयालिस होई। सकल जीव कहँ तारैं सोई॥
तिनसों साठ होइ हैं शाखा। तिन शाखनते होइ हैं परशाखा॥
दश सहस्र परशाख तुव ह्वै हैं। वंशन साथ सबै निरबहि हैं॥
नाता जान करे अधिकाई। ताकहँ लोक बदों नहिं भाई॥
जस तुम्हार हुइ है कड़िहारा। तैसे जानो साख तुम्हारा॥

छंद।

पुरुष अंश नहिं दूसरे तुम, सुनहु सुवंश नागरा॥
अंश नौतम पुरुषके तुम, प्रगट भे भौसागरा॥
देव जीवन कहँ विकल तब, पुरुष तोहि पठायऊ॥
वंश दूजो कहे तेहि, जीव यम लै खायऊ॥ ८४॥
सोरठा-वंश पुरुषके रूप, ज्ञान जौहरी परखिहैं॥
होवे हंस स्वरूप, वंश छाप जो पाई है॥ ८८॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति।

सतगुरु कहे धर्मनि सुनि लेहू। अब भण्डार सौंपि तुम देहू॥
प्रथम तुमहिं जो सौंपा भाई। सबहिं वस्तु तुम देहु लखाई॥
तब चूरामणि होवैं पूरा। देखत काल होय चकचूरा॥
आज्ञा सुनत उठे धर्मदासा। चूरामणि हँकराये निजपासा॥

वस्तु लखाय तेहि छन दीन्हा । तनिको विलम्ब न तामहँकीन्हा
दोउ आय पुनि गुरुपदपरसे । कांपन लग्यो कालतब डरसे ॥
सतगुरु भये हुलास मन माहीं । देखि चुरामणि अति हरषाहीं ॥
बहुरि धर्मनि सन भाषन लागे । सुनहु सुकृत तुम बहुतसुभागे ॥
वंश तोर भये जग कडिहारा । जग जीवन होई हैं भवपारा ॥
इतले होइ हैं ब्यालिस बंसा । प्रथम प्रगटै सोइ मम अंसा ॥
वचन वंश मम सोइ कहावै । बहुरि होय सों विन्द जगआवै ॥

वंशका माहात्म्य ।

वंश हाथ परवाना पइहैं । सो जिव निरभय लोक सिधै हैं ॥
ताकहँ यम नहिं रोके बाटा । कोट अठासी ढूँढे घाटा ॥
कोटज्ञान भाखे मुख बाता । नाम कबीर जपे दिनराता ॥
बहुतक ज्ञान कथे असरारा । वंश विना सब झूठ पसारा ॥
जो ज्ञानी करि हैं बकवादा । तासों बूझहु व्यंजन स्वादा ॥
कोट यतनसो बिंजन करई । साम्हर बिन फीका सब रहई ॥
जिमिविंजनतिमिज्ञान बखाना । वंश छाप सत रस समजाना ॥
चौदह कोटि है ज्ञान हमारा । इनते सार शब्द है न्यारा ॥
नौ लख उडुगन उगें अकाशा । ताहि देख सब होत हुलासा ॥
होवे दिवस भानु उगि आवे । तब उडुगनकी ज्योति छिपावे॥
नौलख तारा कोटि गियाना । सार शब्द देखहु जस भाना ॥
कोटि ज्ञान जीवन समुझावे । वंश छाप हंसा घर जावे ॥
उदधि मांझ जस चलैं जहाजा । ताकर और सुनो सब साजा ॥
जस वोहित तस शब्द हमारा । जसयरिया तस वंश तुम्हारा ॥

छंद ।

बहुभांति धर्मनि कहों तुमसों, पुरुष मूल बखानिहो ॥
वंशसों दूजो करे जोइ सो, जाय यमपुर थानहो ॥

वंश छाप न पावईजो जिव, शब्द निशिदिनगावई॥
काल फन्दामें फँदै तेहि, मोहि दोष न लावई॥८५॥
सोरठा–तजे कागकी चाल, परखि शब्दसोहंसहो॥
ताहि न पावै काल, सार शब्द जो दृढ गहे॥८९॥

भविष्यकथा प्रारम्भ । धर्मदासवचन ।

धर्मदास विनती अनुसारी । हे प्रभु मैं तुम्हरी बलिहारी ॥
जीवन काज वंश जग आवा । सो साहिब सब मोहिं सुनावा ॥
वचन वंश चीन्हें जो ज्ञानी । ता कह नहिं रोके दुर्ग दानी ॥
पुरुष रूप हम वंशहि जाना । दूजा भाव न हृदये आना ॥
नौतम अंश परगट जग आये । सो मैं देखा ठोक बजाये ॥
तबहूँ मोहि संशय एक आवे । करहु कृपा जाते मिट जावे ॥
हम कहँ समरथ दीन पठायी । आये जग तब काल फँसायी ॥
तुमतो कहो मोहि सुकृत अंसा । तबहूँ काल कराल मुहि डंसा ॥
ऐसहिं जो वंशन कहँ होई । जगत जीव सब जाय विगोई ॥
ताते करहु कृपा दुखभंजन । वंशन छले नहिं काल निरंजन॥
और कछू मैं जानों नाहीं । मोर लाज प्रभु तुम कहँ आही॥

कबीरवचन ।

धर्मदास तुम नीक विचारा । यह संशय सत आदि तुम्हारा॥
आगे अस होइहिं धर्मदासा । धर्मराय एक करै तमासा ॥
सो मैं तुमसे गोय न राखों । जस होइहिं तस सतसत भाखों॥
प्रथम सुनो आदिकी वानी । करिके ध्यान लेहु तुम जानी॥
सतयुग पुरुष मोहिं हँकराई । आज्ञा कीन्ह जाहु जग भाई ॥
तहँते चले काल मग भेंटा । बहु तकरार दर्प तिहि मेटा ॥
तब तिन कपट मोसन कीन्हा । तीनयुग मांगि मोहि सन लीन्हा॥
पुनि अस कहेसि काल अन्याई । चौथा युग नहिं मांगो भाई ॥

ऐसा वचन हार हम दीन्हा । तब संसार गमन हम कीन्हा ॥
युग तीनों हार तिहिं हमदीन्हा । ताते पन्थ प्रगट नहिं कीन्हा ॥
चौथायुग जब कलियुग आयो । बहुरि पुरुष मुहि जगत पठायो ॥
मगमहँ रोक्यो काल कसाई । बहुत विधिसों करी बरियाई ॥
सो कथा हम प्रथम जनाई । बारह पन्थको भेद बताई ॥
कपट करचो बारह बतलायो । औरो बात न मोहि जनायो ॥
तीनि युगन मोहि दीन हिरायी । कलियुगमां बहुफन्द मचायी ॥
बारह पन्थ प्रगट मोहि भाखा । चार पन्थ सो गुप्तहिं राखा ॥
जब मैं चार गुरु निरमाया । कालहु आपन अंश पठाया ॥
जब हम कीन्हा चार कडिहारा । धर्मराय छलबुधि विस्तारा ॥
पुरुष हम सन कीन परकासा । जानि परमारथ कहों धर्मदासा ॥
यह चरित्र सोइ बुझि है भाई । जासु हृदय निजनाम सहाई ॥

निरंजनका अपने चार अंशको पंथ चलानेकी आज्ञा देनेकी कथा ।

चारहि अंश निरञ्जन कीन्हा । तिनकहँ बहुत सिखापन दीन्हा ॥

निरंजनवचन ।

तिनते कह्यो सुनहु हो अंशा । तुमतो आहु मोर निज बंसा ॥
तुमसे कहौं मानि सो लीजे । आज्ञा मोर सो पालन कीजे ॥
बैरी हमार अहै यक भाई । नाम कबीर जगमांहि कहाई ॥
भवसागर मेटन सो चाहै । और लोकसो बसावत आहै ॥
करि छल कपट जगत भरमावै । मोर राहते सबहीं छुटावै ॥
सत्य नाम कर टेर सुनाई । जीवन कहँ सो लोक पठाई ॥
जगत उजारन सो मन दीन्हा । ताते तुमहिं हम उत्पन्न कीन्हा ॥
आज्ञा मानि जगत महँ जाहू । नाम कबीर पंथ प्रगटाहू ॥
जगत जीव विषया रस माते । मैं,जो कहहुँ करहु सोइ घाते ॥
पंथ चार तुम जग निरमाओ । आपन आपन राह बताओ ॥

नाम कबीर चारों धरि राखो। विनाकबीर न वचन मुख भाखो॥
नाम कबीर जब जिव आवैं। कहहु वचन तिनके मन भावैं॥
कलियुग जीव ज्ञानसुधि नाहीं। देखा देखी राह चलाहीं॥
सुनत वचन तुम्हरो हरषावैं। बार बार तुम्हरे ढिग आवैं॥
जब सरधा तिनकी दृढ होई। भेद भावना मानि हैं कोई॥
तिन पर जाल आपनो डारो। भेद न पावैं देखि सम्हारो॥
जम्बुदीप महँ करि हो थाना। नाम कबीर जहाँ परमाना॥
जब कबीर बांधो गढ जावे। धर्मदास कहँ निज अपनावे॥
ब्यालिस वंश जब थापै राजू। तबही होवे राज बिराजू॥
चौदह यमते नाका रोका। बारह पन्थ हम लाया धोखा॥
तबहूँ हम कहँ संशय भाई। ताते तुम कहँ देत पठाई॥
ब्यालिसपर तुम करिहो घाता। तिनहिं फँसावहु अपनी बाता॥
तबहीं तो हम जानब भाई। वचन मोर तुम लियहु उठाई॥

चारों दूत वच न।

सुनत वचन हरषे तब दूता। आज्ञा मान लीन्ह तुव बूता॥
जैसी आज्ञा तुम मोहिं दीन्हा। मानि वचन हम सिरपर लीन्हा॥
हाथ जोर तिन विनवन लागे। तुम किरपा हम होब सुभागे॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति।

इतना सुनत काल हरखाना। अतिही सुख दूतनते जाना॥
औरहु तिनको बहुत बुझावा। काल अन्याई राह बतावा॥
जीव घात बहु मन्त्र सुनायी। तिन कहँ कहे जाहु जग भाई॥
चारहु चार भाव धनि जाहू। ऊंच नीच छांडहु जनि काहू॥
अस करि फानफनहु तुमभाई। जेहिकरि मोर अहार न जाई॥
सुनत वचन तिन मन अतिहरषे। काल वचन जिमि अमृतवरषे॥
यही चार दूत जग प्रगटै हैं। चार नामते पंथ चलै हैं॥

चार दूत कहँ नायक जानो । बारह पन्थ कर अगुवा मानो ॥
इन्हहीं चार जो पंथ चलै हैं । उलट पुलट तिनहू अरथै हैं ॥
चार पन्थ बारह कर मूला । वचन वंश कहँ होइ हैं सूला ॥
सुनत वचन धर्मनि घबराने । हाथ जोर विनती तिन ठाने ॥

धर्मदासवचन ।

कह धर्मदास सुनु प्रभु मोरा । अब तो संशय भयो वरजोरा ॥
अब तो विलम्ब न कीजे साईं । प्रथम बतावहु तिनकर नाईं ॥
जीवन काज मैं पूछौं तोही । तिनकर चरित्र सुनावहु मोही ॥
तिन दूतन कर भेष बताओ । कहो चिह्न ताको परभाओ ॥
कौन रूप तिन जगमें धारैं । केहि विधिते सो जीवन धारैं ॥
कौन देस परगटि हैं आई । हे साहब मुहि देहु बताई ॥

कबीरवचन ।

धर्मदास मैं तोहिं लखाओं । चारि दूत कर भेद बताओं ॥

चार दूतोंके नाम ।

तिनकर नाम प्रथम सुनि लीजे । रम्भकुरंभ जय बिजय भनीजे ॥

१ रम्भ दूतका वर्णन ।

रम्भ दूत कर करौं बखाना । गढ कालिंजर रोपि है थाना ॥
भगवान भगतवहि नाम धराई । बहुतक जीव लेइ अपनाई ॥
जो जियरा होइहिं अंकूरी । सो बांचहिं यम फन्दा तूरी ॥
रम्भ जोरावर यम बड द्रोही । तुमहि खंडि अरुखंडिहि मोही ॥
आरती नरियर चौक संहारी । खंडिहिं लोक दीपसब झारी ॥
ज्ञान ग्रन्थ औ खंडिहिं बीरा । कथहिं रमैनी काल गँभीरा ॥
मोर वचन लेइ करे तकरारा । तेही फांस फँसे बहुसारा ॥
चारों धार कथे असरारा । हमर नाम ले करे पसारा ॥
आपहिं आप कबीर कहाई । पांच तत्त्व बसि मोहि ठहराई ॥
थापिहिं जीव पुरुष समभाई । खंडहिं पुरुष जीव वर लाई ॥

हंस कबीर इष्ट ठहरायी । करता कहँ कबीर गुहराई ॥
कर्ता काल जीवन दुखदाई । तेहि सरीख मोहि कह यमराई ॥
कर्मी जीवहिं पुरुष ठहराई । पुरुष गोइहिं आपु प्रगटाई ॥
जो यह जीव आपुहिं होई । नाना दुख कस भुगुते सोई ॥
पांच तत्त्ववसि जीव दुखजावे । जीव पुरुष कहँ सम ठहरावे ॥
अजर अमर पुरुषकी काया । कला अनेक रूप नहिं छाया ॥
अस यमदूत खंड देइ ताही । थापे जीव पुरुष यह आही ॥
तिल सागर झाई निज देखी । धोखा गहै निअच्छर लेखी ॥
बिनु दर्पण दरशे निज रूपा । धर्मनि यह गुरु गम्य अनूपा ॥

छंद ।

यहिविधिरम्भअपरबल सुनिधर्मिनि, करइछलमत आइके ॥
बहु जीवहिफांस फँसविहिजग, नामकबीरहिगाइके ॥
अंश वंसहि चेताइहौं तुम, शब्दके सहिदानते ॥
परखिममशब्दहियमाहिचीन्हें, रहेगुरुगमज्ञानते ८८

सो०—चित चेतो धर्मदास, यमराजा अस छलकरे ॥
गही शब्द विश्वास, हंसन शब्दचिताइहौं ॥८९॥

२ कुरम्भ दूतका वर्णन ।

रम्भकथा तोहि कहि समुझावा । अब कुरम्भके बरनूँ भावा ॥
मगध देशमें परगटि हैं जाई । धनीदास वहि नाम धराई ॥
ज्ञानी जीवन कहँ भटकावे । कुरम्भ दूत बहुजाल खिडावे ॥
पुष्ट ज्ञानगुरु दाया जाही । कुरम्भ दूत नहिं पावै ताही ॥
जाको छुद्र ज्ञान घट होई । धोखा दे यम ताहि बिगोई ॥

धर्मरायवचन ।

हे साहब मोहि कहौ बुझाई । कौन ज्ञान वह कथि है आई ॥

कबीरवचन।

धर्मनि सुनो कुरम्भकी बाजी। कथी टकसार फन्द दृढसाजी ॥
चन्द सूर तत लगन पसारा। राहु केतु कथि हैं असरारा ॥
पांच तत्त्व मति सार बखानी। जीव अचेत भ्रम नहिं जानी ॥
ज्योतिष मत टकसारपसारे हैं। ग्रह गोचर वश प्रभु बिसरै हैं ॥
नीर पवन कहँ कथि हैं ज्ञाना। पवन पवनके नाम बखाना ॥
आरति चौका बहु अरथै हैं। धोखा दे जीवन भर मैं हैं ॥
शिषजबकरिहैकरिहहिंविशेषा। अंग अंगकी निरखे रेखा ॥
नखसिख सकल निरखिहै भाई। करम जाद जीवन भरमाई ॥
निरखि परखि जिव सूरचढाई। सूर चढाय जीव धरि खाई ॥
कनक कामिनिदछिनाअरपाई। यहि विधि जीव ठगौरी लाई ॥
गांठ बांधि फेरिहिं तब फेरा। करम लगाय करिहि यम चेरा ॥
पवन पचासी कालको आहीं। पवन नाम लिखि पान खवाहीं ॥
नीर पवन कथि करै पसारा। पवन नाम गहि आरतिबारा ॥
पचासी पवन करि अनुहारी। आरति चौका करै विचारी ॥
क्या नारी क्या पुरुष दे भाई। तिल मासा निरखे सबठाई ॥
शंख चक्र औ सीपकर देखि हैं। नख सिख रेखा सबै परिखि हैं ॥
ऐसो काल दुष्ट मति भाई। जीवन कहँ संशय उपजाई ॥
संशय लगाय गरसि है काला। करहिं जीवको बहुत बिहाला ॥
औरहु सुनहु काल व्यवहारा। जस कछु कथिहैं काललबारा ॥
साठ समैं बाहर चौपाई। देहि उठाय भरम उपजाई ॥
पंच अमी एकोत्तर नामा। सुमिरन सार शब्द गुण धामा ॥
जीव काज बदि जो कछु राखा। तामें काल धोख अभिलाखा ॥
पांच तत्व कर उपचारा। कथि हैं यही मता है सारा ॥
पांचों तत्व परकीर्ति पचीसा। तीनों गुण चौदह यम ईशा ॥

यहि फन्दे जिव फन्दैं भाई। पाँच तत्त्व यम जाल बनाई॥
तृन धरि सुरति तत्त्वमो लावे। तन छूटे कहुँ कहां समावे॥
जहँ आसा तहँ बासा पावे। तत्त्व मतो गहि तत्त्व समावे॥
नाम ध्यान सो देइ छुडाई। राखै तत्त्व फांस अरु बाई॥
धर्मनि कहँ लगि कहौं बखानी। दूत कुरम्भ करि है घमसान्नी॥
ताकी छलमति चीन्हें सोई। जो जिवमोहि लखि है समोई॥
पांचों तत्त्व कालके अंगा। ताके मते जीव होय भंगा॥

छंद।

सुनेउ धर्मनि कुरम्भ बाजी, करि बहुफन्द फँसावई॥
अनन्त जीवन गरासि लेवै, तत्त्व मता फैलावई॥
लेइ नाम कबीर जग महँ, पंथ वहि परगट करै॥
भ्रम वंशजिवे जाय तेहिढिग, कालके मुखमेंपरै॥८७

सो०—पुरुषशब्द है सार, सुमिरनअमी अमोलगुण॥
सो हंसहो भवपार, मन वचकर्म जो दृढ गहे॥९०॥

३ जयदूतका वर्णन।

रंभकुरम्भ यह कह्यो बखानी। अब परखहु तुम जयकी बानी॥
यह जमदूत कठिन विकरारा। मूल मूल वह कथिहि लबारा॥
ग्राम कुरकुट प्रगटे आई। गढ बाँधोंके निकट रहाई॥
कुल चमारके प्रगटे सोई। ऊँचे कुलकी जात बिगोई॥
साहब दास कहावै दूता। गणपत होइ हैं ताकर पूता॥
दोई काल प्रबल दुखदाई। तुम्हरे बंसको घेरिहिं आई॥
कथई मूल हमारे पासा। तुम्है उठाय दई धर्मदासा॥
अनुभव कहिहैं ग्रंथ बहुभाई। ज्ञानी पुरुष सम्बाद बनाई॥
कथि हैं मूल पुरुष मोहि दीना। धर्मदास निज मूल न चीन्हा॥
अस वहि काल जोरावर होई। छेई भरम वंशको सोई॥

वंशहिं निज मत देई दिढाई । पारस थाका मूल चलाई ॥
मूल छापले बंश बिगोई । पारस देहिं काल मति सोई ॥
झंग शब्द वह कथि है भाई । कच्चे जीवन देइ भुलाई ॥
जाहि नीरते काया होई । थापिहिता कहँ निज मत सोई ॥
काया मूल बीज है कामा । राखिहि ता कहँ गुप्तहिं नामा ॥
प्रथमहिं थाका गुप्तहिं राखी । सिषहिं साधि संधि तब भाखी ॥
प्रथमहि ज्ञानग्रन्थ समुझायी । तेहि पीछे फिर काल दिढाई ॥
नारि अंग कहँ पारस देहैं । आज्ञा मांगि शिष्य पहँ लइ हैं ॥
प्रथमहिं ज्ञान शब्द समुझै हैं । तेहि पीछे फिर मूल पिलै हैं ॥
नरक खानि तेहि मूल बखानी । यमबंका अस छल मतिठानी ॥
झँझरी दीप कथा अरथाई । झंग नाम लै ध्यान धराई ॥
अनहद बाजे जमको थाना । पांच तत्त्व करि हैं घमसाना ॥
पांचों तत्त्व गुफामें जाई । नाना रंग करे तहँ भाई ॥
पांचों तत्त्व करै उजियारी । उठै झंग गुफामें भारी ॥
जब सोहंगम जीव तन छांडै । तब कहौं झंग कवन विधिमांडै ॥
झंझरी दीप काल रचि राखा । झंग हंग दोउ कालकि शाखा ॥
कथि है अविहर काल अन्याई । अविहर धोख धर्मकर भाई ॥
आरति चौंका कथिहि अपारा । होइ है तैस बहुत कडिहारा ॥
काल नाम वह साजै बीरा । परखो धर्मदास मति धीरा ॥
ठाम ठाम घट कर्म करै हैं । हमर नाम लै हमहिं हँसै हैं ॥
जनि हैं जगतसबयहिसमआही । बूझहि भेद भरम तब जाही ॥
कहँ लगि कहौं काल कर लेखा । ज्ञानी होय सो करे विवेखा ॥

छंद ।

मम ज्ञानदीपकजाहिकरसो, चीन्हि है यमराजहो ॥
तजिकाल विषय जंजालहंसा, धाइहै निजकाजहो ॥

रहनि गहनी रु विवेकबानी, परखिहीकोइजौहरी ॥
गहहिं सार असार परहरि, गिराममजेहि सूधरी ८८
सोरठा-धर्मदासलेहुजान, जमबालकको छलमतो॥
हंसहिंकहु सहिदान, जाते यम रोकैं नहीं॥९१॥
धर्मदास तुव बस अज्ञाना। चिन्हिहैं नहीं काल सहिदाना॥
जबलग बंस रहौं लवलीना। तब लग काल रहै अति दीना॥
रहै काल ध्यान बकलाई। तजि हैं नाम काल प्रगटाई॥
बेधि मूल बंसमों लगि हैं। तब टकसार धोक महँ पगि है॥
छकै काल बंस कहँ आई। वस्तुके धोखे काल अरुझाई॥
हमरी चालसे बंस उठे हैं। मूल टकसारके मत अरुझै हैं॥
नाद पुत्र सो न्यारा रहिहै। मम बानी नहिं वह दृढ गहि है॥
रहै उजागर शब्द अधारा। रहनि गहनि गुन ज्ञान विचारा॥
ताहि न ग्रासे काल अन्याई। यह तुम जानहु निश्चय भाई॥

४ विजय दूतका वर्णन।

अबतुम सुनहु विजयको भाऊ। एक एक तोहि वरनि सुनाऊ॥
बुंदेल खंड यह परगटे जाई। ज्ञानी जीवहिं नाम धराई॥
सखा भावको भक्ति दिढाई। रास रची औ मुरलि बजाई॥
सखी अनेक संग लौलाई। आपहिं दूसर कृष्ण कहाई॥
धोखा देई जीवनकहँ सोई। बिन परिचे कस जाने लोई॥
चच्छु अग्र रह मनकी छाया। नासा उरध अकास बताया॥
कुहिरा परै धोखा मन केरा। स्याम सेत चित रंग चितेरा॥
छिनछिन चंचल अस्थिर नाहीं। चम दृष्टिसे देखै ताहीं॥
मनकी छाया काल दिखावै। मुक्ति मूल छाया ठहरावै॥
सत्य नामते देइ छुडाई। जाते जीव काल मुख जाई॥

धर्मनि तोहि कहा समझाई । जस चरित्र करि है जमराई ॥
चारों दूत करै घन घोरा । यहि विधि जीव चोरावै चोरा ॥

चार दूतोंका वर्णन समाप्त ।

दूतोंसे बचनेक उपाय ।

दीपक ज्ञान धरो दिढ बारी । जाते काल न करै उजारी ॥
इन्द्रमती कहँ प्रथम चितावा । रही सुचेत काल नहिं पावा ॥

भविष्य कथन अगल व्यवहार ।

जस कछु आगे होय है भाई । सो चरित्र तोहि कहों बुझाई ॥
जबलों तुम रहिहौ तन माहीं । तौलों काल परगटि है नाहीं ॥
गहो किनार ध्यान बकलाये । जब तन तजौ काल तब आये ॥
छेकहिं तोर बंसको आई । काल धोकसो बंस रिझाई ॥
बहु कडिहार बंसके नादा । पारस बंस कराहिं विषस्वादा ॥
बिन्दहि मूल और टकसारा । होइहि खमीर बंस मँझारा ॥
बंसहिं एक धोक बड होइ हैं । हंग दूत तेहिं माहि समैं हैं ॥
आप हंग अधिक है ताही । आप माहिं सो झगर कराही ॥
विन्द सुभाव आहंग नहिं छोडै । मनमत आयविन्द मन मोडै ॥
अंस हमार सुपन्थ चलैहै । ताहि देखि सो रार बढैहै ॥
ताको चीन्हि देखि नहिंसकि है । आपन वाट वंस महँ तकि है ॥
वंस तुम्हार अनुभवकथिराखि है । नादपत्रकी निन्दा भाखि है ॥
सोई पढि हैं बंस कडिहारा । ताको होइ बहुत हंकारा ॥
स्वारथ आया चीन्ह न पैहैं । अनन्त जीवन कहँ भटकै हैं ॥
ताते तोहि कहों समझाई । अपने वंसन देहु चिताई ॥
नाद पुत्र जो परगट होई । ताको मिलै प्रेमसे सोई ॥
तुमहू नाद पुत्र मम आहू । यह मन परखहु धर्मनि साहू ॥
कमाल पुत्र जो मृतक जियावा । ताके घटमें दूत समावा ॥

पिता जानि तिन आहंग कीन्हा । तब हम थाति तोहि कहँ दीन्हा ॥
हम हैं प्रेम भगतिके साथी । चाहों नहीं तुरी औ हाथी ॥
प्रेम भक्तिसे जो मोहिं गहि हैं । सो हंस मम हृदय समै हैं ॥
अहंकारते होतेऊ राजी । तौ मैं थापत पंडित काजी ॥
अधीन देखि थाति तेहि दीना । देखेउ जब तोहिं प्रेम अधीना ॥
ताते धरमनि मानु सिखाई । नाप थाती सौंपिहु भाई ॥
नाद पुत्र कहँ सौंपिहु सोई । पंथ उजागर जासों होई ॥
बंस करिहैं अहंकार बहूता । हम हैं धर्मदास कुल पूता ॥
जहाँ हंग तहवां हम नाहीं । धरमदास देखु परखि मनमाहीं ॥
जहाँ हंग तहँ काल सरूपा । नहिं पावे सत लोक अनूपा ॥

धर्मदासवचन ।

हौं प्रभु मैं तुव दास अधीना । तुव आज्ञाते होउँ न भीना ॥
नादहिं थाती सौंपब स्वामी । बंश तरै मोर अन्तरयामी ॥

कबीरवचन ।

धरमदास तुव तरि है वंसा । याहि बातको मेटो संसा ॥
नाम भक्ति जो दिढकै धरि हैं । सुनु धरमनि सो कस ना तरि हैं ॥
रहनि रहै तो सबै उबारों । बचन गहै तो ब्यालीसतारों ॥
बचन गहै सोइ बंस पियारा । विना वचन नहिं उतरे पारा ॥

धर्मदासवचन ।

बंस ब्यालिस तो तुम्हरो अंसा । ताको तारचो कौन प्रसंसा ॥
बंस अंस जो तारहु साई । तबहीं जगमें आप बडाई ॥

कबीरवचन ।

बंस ब्यालिस बिंद तुम्हारा । सो मैं एक वचनते तारा ॥
और वंश लघु जेते होई । विना छाप छूटे नाहिं कोई ॥
बिन्द मिलै तौ वंश कहावै । विना वचन नहीं घर आवै ॥
बचन बंश ब्यालिस ठेका । तिनका समरथ दीन्हों टेका ॥

वंस अंस वचन एकै सोई । दीर्घ वंस अंस लघु होई ॥
जेठो अंस वचन मोर जागे । और बंस लघु पीछे लागे ॥
चाल चलै औ पंथ चलावे । भूले जीवनको समझावै ॥
नाद बिन्द जो पंथ चलावे । चूरामणि हंसन मुकतावे ॥
धर्मदास तुव वंश अज्ञाना । चीन्है नहीं अंश सहिदाना ॥
जस कुछ आगे होइ है भाई । सो चरित्र तोहि कहौं बुझाई ॥
छठें पीढी विन्द तुव होई । भूलै वंश बिन्दु तुव सोई ॥
टकसारीको लैहैं पाना । अस तुव विन्द होय अज्ञाना ॥
चाल हमार वंस तुव झाडै । टकसारीके मत सब मांडै ॥
चौका तैसे करै बनायी । बहुत जीव चौरासी जायी ॥
आपा हंग अधिक होय ताही । नाद पुत्रसे झगर कराही ॥
होवे दुरमत बंस तुम्हारा । वचन बंस रोके बटपारा ॥

धर्मदासवचन ।

अबतो संशय भयो अधिकाई । निश्चय वचन कहहु मोहि साई ॥
प्रथमै आप वचन अस भाषा । निजरच्छा महँ बयालिसराखा ॥
अब कहहु काल वश परि हैं । दोइबात किहि विधिनिस्तारिहैं ॥

नादवंशकी बडाई । कबीरवचन । (नाद अर्थात् शब्द--शब्दसेहीबाला पुत्र अर्थात् शिष्य, साधुसंत इत्यादि) ।

धरमदास तुम चेतहु भाई । बचन बंश कहँ देहु बुझाई ॥
जब जब काल झपाटा लाई । तब तब हम होब सहाई ॥
नाद अंस तबहिं प्रगटायब । भरम तोडि जगभक्तिदिढायब ॥
नाद पुत्र सो अंश हमारा । तिनते होय पंथ उजियारा ॥
वचन वंश तो होय सचेता । बिन्द तुम्हार न माने होता ॥
वचन वंश नाद संग चेते । मेटै काल घात सब तेते ॥
बिन्द तुम्हार न मानै ताही । आया वंश न शब्द समाही ॥

शब्दकी चाल नाद कहँ होई । विन्द तुम्हार जाय विगोई ॥
विंदते होय न नाद उजागर । परखिके देखहु धर्मनि नागर ॥
चारहु युग देखहु समवादा । पन्थ उजागर कीन्हों नादा ॥
कहँ निरगुण कहँ सरगुन भाई । नाद विना नहिं चल पंथाई ॥
धर्मनि नाद पुत्र तुम मोरा । ताते दिन्ह मुक्तिका डोरा ॥
याही विधि हम ब्यालिस तारैं । जबै वह गिरै तबै उबारैं ॥
नाद वचन जो विन्द न माने । देखत जीव कालधर ताने ॥
और बंस जो नाद सम्हारै । आप तरै औ जीवहिं तारै ॥
कहां नाद कहँ बिन्दुरे भाई । नाम भक्ति विनुलोक न जाई ॥

गुरुमहिमा ।

गुरुते अधिक काहु नहिं पेखै । सबते अधिक गुरू कहँ लेखै ॥
सबते श्रेष्ठ गुरू कहँ मानै । गुरू सिखापन सतकै जानै ॥
बिन्द तुम्हार करै असरारा । बिन गुरु चहै होन भवपारा ॥
निगुरा होइ जगत समुझावे । आप बुडै औ जगत बुडावे ॥
बिना गुरू नाहीं निस्तारा । गुरुहिं गहै सो भवते पारा ॥
नाता जानि करै अधिकाई । वंसहि काल गरासै आई ॥
जब जम नात गोत अरुझावे । वचन वंस धोखा तब पावे ॥
तबहीं काल गरासै आई । नाना रूप फिरैं जग लाई ॥
तबहिं गोहार नाद मम आवै । देखत काल तुरत भगि जावै ॥
ताते धरमनि देहु चिताई । वचन वंश बहुविधि समझाई ॥
नादवंस संग प्रीति निबाहे । काल धोखते वचन जु चाहे ॥
नाद बंसकी छोडै आसा । ताते विन्द जाय यमफांसा ॥
बहु विधि दूत लगावै बाजी । देखैं जीव होय बहु राजी ॥
ते तो जाय काल मुखपरि हैं । नाद वंश जो हित नहिं धरि हैं ॥
ताते तोहि कहौं समझायी । सबहीं कहँ तुम देहु चितायी ॥

नाद बंशकहँ जो जिव जाना । वचन बंस चीन्हे सहिदाना ॥
ताकहँ यम नहिं रोके आई । सत्य शब्द जिन चीन्हा भाई ॥
धरमदास मैं कहौं बुझाई । बचन हमार गहो चितलाई ॥
जीवन कहँ तुम कहिहो जाई । वचन बंस जग तारन भाई ॥
बचन बंस वहि नाद न छांडै । सदा प्रीति नाद संग मांडै ॥
नातगोत कहँ पच्छ न करई । पच्छ करै तो दुख महँ परई ॥
बहुत विधी मैं दीन्ह चिताई । चेतकरै तो दुख नहिं पाई ॥
बिन्द तुम्हार नाद संग जावै । देखत दूत मनहिं पछतावै ॥
यही उपाय सुख होय बहूता । वचन नाद बिंद लगे न दूता ॥

धर्मदासवचन ।

धर्मदास उठि विनती लाये । अब प्रभु मोहि कहहु बुझाये ॥
नाद महातम ऐसो राखा । वचन वंश अधीन करि भाखा ॥
कारन कौन कहहु मोहिं साईं । वचन वंश काहे निरमाइ ॥
नादे वंस जगत चेतै है । बचन बंस कामें कब ऐहैं ॥

कबीरवचन ।

सुनत वचन सतगुरु विहँसाये । धर्मदास कहँयाहिविधिसमझाये ॥
गर्गिन नाद बचन नहिं मानै । ताते बिन्द हम निरनय ठानै ॥
बिंद एक नाद बहुताई । बिंद मिले सो बिंद कहाई ॥
वचन बंस हैं पुरुषके अंसा । तिनके सनद छूटे जग हंसा ॥
नाद बिन्दु युगबन्ध जब होई । तबहीं काल रहै मुख गोई ॥
प्रथमैं जस हम तुमहिं बताना । नाद बिंद कर योग दिखाना ॥
विना नाद नहिं बिंद पसारा । विना बिंद नहिं नाद उबारा ॥
कलियुग काठ कठिन है भाई । अहंरूप धरि सबको खाई ॥
नादे अहं त्याग कर होई । बिंदे अहं बिंद संजोई ॥
याते अंकुश पुरुष निरमाया । नाद बिन्द होउ रूप बनाया ॥

छाडि अहं भजि हैं सतरूपा। सो होइहैं हंस सरूपा॥
नाद विन्द कोई हो भाई। अहं भाव नहिं नीकि बताई॥
अहं करै सो भवमें डूबे। काल फांस पडिहै सो खूबे॥
अहंभाव जब वंसहिं आवे। नाद विन्द भेद पडि जावे॥
बंस विरोध चलै पुनि आगे। काल दगा सब पंथहिं लागे॥

धर्मदासवचन।

साहब विनती सुनो हमारी। तुम्हरी दया जीव निस्तारी॥
नाद विन्द कहँ रूप लखाया। तिनके तरनको भेद बताया॥
सकल जीव तुव लोक हिंजाई। दास नरायण काह कराई॥
मोर पुत्र जग माहिं कहावे। ताते चिन्त मोर मन आवे॥
भवसागरके जिव सब तरि हैं। दास नरायण काल मुख परि हैं॥
यह तो भली होइ नहिं बाता। सुनु विनती सुख सागर दाता॥
ताकी मुक्ति करो तुम स्वामी। यहि मोर विनती अन्तरयामी॥

कबीरवचन।

बार बार धर्मनि समुझावा। तुम्हरे हृदय प्रतीत न आवा॥
चौदह यम तो लोक सिधावें। जीवन फन्द कहो किन लावें॥
अब हम चीन्ह्या तुम्हरो ज्ञाना। जानि बूझि तुम भये अजाना॥
पुरुष आज्ञा मेटन लागे। विसरयो ज्ञान मोह मद जागे॥
मोह तिमिर जब हिरदे छावे। बिसर ज्ञान तब काज नसावे॥
विन परतीत भक्ति नहिं होई। विनु भक्ति जिव तरै न कोई॥
बहुरी काल फांस तोहि लागा। पुत्रमोह तव हिरदय जागा॥
प्रतच्छ देखि सबै तुम लीना। दास नरायन काल अधीना॥
ताहूपर तुम पुनि हठ कीना। मोरवचन तुम एकु न चीन्हा॥
धर्मराज जो मोसन कहिया। सोऊ ध्यान तव हृदय न रहिया
मोर परतीत तुम्हैं नहिं आवे। गुरु परतीत जगत कस लावे॥

आया छोडि मिले गुरु आई । सत सीढीपर चढे सुभाई ॥
आया पकडे मोह मद जागे । भक्ति ज्ञान सब तजे अभागे ॥
पुरुष अंश तुम जगमें आये । जीव चेतावन कार उठाये ॥
तुम्हहिं प्रतीत गुरुकर त्यागो । देखत दृष्टि मोह जगपागो ॥
और जीव कर कौन ठिकाना । यह तो अहै काल सहिदाना ॥
जस तुम करहु सुनहु धर्मदासा । तस तुव वंस करै परगासा ॥
मोह आग सदा सो जरिहैं । बंस विरोध याहिते परिहैं ॥
सुत बिन नाम नारि परिवारा । कुल अभिमान सबकाल पसारा
इनमें तब परिवार भुलै हैं । सत्य नामको राह न पैहैं ॥
देखा देखी जीव फँसाई । देखत दूत मगन ह्वै जाई ॥
तबहिं दूत प्रबल ह्वै जैहै । धरि जीवन कहँ नरक पठैहै ॥
काल फांस जब जीव फँसावे । काम मोह मद लोभ भुलावे ॥
गुरु परतीत तेहि नहिं रहई । सत्य नाम सुनत जिव दहई ॥
जाके घट सतनाम समाना । ताकर कहौं सुनो सहिदाना ॥
काल बात तेहि लागे नाहीं । काम क्रोध मद लोभ न ताहीं ॥
मोह तृष्णा दुर आश निवारै । सतगुरु वचन सदाचित धारै ॥

छन्द ।

जस भुवंगम मणि जुगावे अस शिष गुरु आज्ञा गहे ॥
सुत नारि सब बिसराय विषया हंसहोय सतपद लहे ॥
गुरु वचन अटल अमान धर्मनि सहै विरला शूरहो ॥
हंसहो सतपुर चले तेहि जीवन मुक्ति न दूरहो ॥ ८९ ॥

सोरठा—गुरु पद कीजे नेह, कर्म भर्म जञ्जाल तज ॥
निजतन जाने खेह, गुरु मुख शब्द विश्वास दृढ ९२

धर्मदासवचन ।

सुनत वचन धर्मदास सकाने । मनहीं माहिं बहुत पछताने ॥
धाइ गिरे सतगुरुके पाई । हौ अचेत प्रभु होहु सहाई ॥
चूक हमारी बकसहु स्वामी । विनती मानहु अंतरयामी ॥
हम अज्ञान शब्द तुम टारा । विनय कीन्ह हम बारंबारा ॥
अब म चरण तुम्हारे गहऊं । जो संततिकी विनती करऊं ॥
पिता जानि बालक हठलावे । गुण औगुण चित ताहि न आवे ॥
कोटिक औगुण बालक करई । माता पिता हीये नहिं धरई ॥
पतित उधारण नाम तुम्हारा । औगुण मोर न करहु विचारा ॥

कबीरवचन ।

धमदास तुम पुरुषके अंशा । त्यागहु दास नारायण वंशा ॥
हम तुम धर्मनि दूजा नाहीं । परखहु शब्द देखि हिय माहीं ॥
तुम तो जीव काज जग आऊ । भौसागर महँ पंथ चलाऊ ॥

धर्मदासवचन ।

हे प्रभु तुम सुख सागर दाता । मुझ किंकरको करचो सनाथा ॥
जबलग हम तुमहीं नहिं चीन्हा । तब लग मता काल हर लीन्हा ॥
जबते तुम आपन कर जाना । तबते मोहि भयो दृढ ज्ञाना ॥
अब नहिं दुतिया मोहि समायी । निश्चय गहों चरण तुव धाई ॥
तुम तजि मोहि आनकी आसा । तो मुहिं होय नरक महँ बासा ॥

सतगुरुवचन ।

धर्मदास धन मो कहँ चीन्हाँ । वचन हमार पुत्र तजि दीन्हाँ ॥
जब शिषहृदय मुकुरमल नाहीं । गुरु स्वरूप तब ही दरसाहीं ॥
जब सिख निजहियगुरुपद राखे । मेटे सबहिं कालकी साखे ॥
जौं लगि सात पांचकी आसा । तौ लगि गुरु नहिं निरखे दासा ॥
इक पत शिष्य गुरुपद लागे । छूटे मोह ज्ञान तब जागे ॥
दीपक ज्ञान हृदय जब आवे । मोह भर्म तब सबै नशावे ॥
उलटि आय सतगुरु कहँ हेरा । बुन्द सिन्धुका भयो निवेरा ॥

सिन्धुहि बुन्द समाना जाई । कहैं कबीर मिटी दुचिताई ॥
धर्मनि यह गुरुपद परतापा । गुरु पद गहि तज भ्रम दापा ॥
यहै गहे सब दुःख नशायी । विन गुरु शिष्य निरासे जायी ॥
अब मैं तोहीं कहौं बुझाई । सुनि संशय तब दूर पराई ॥
दास नरायन तोर मनि है । वह तो आपन मतनिज तनि है ॥
ताकर पन्थ चले संसारा । या महँ नहिं कछु सोच विचारा ॥
अंश हमार जो पंथ चलाई । ताहि देखि सो रार बढाई ॥
ताकर चढी देखि नहिं सहि हैं । आपन बढी वंश मत कहि हैं ॥
पन्थ चलाय हंग बहु आनै । आपन बडो सब छोट बखानै ॥
साधु संत सो कर अभिमाने । नाद पुत्र सौ नहिं वह माने ॥
जबलग ऐसी चाल चलावे । तबलग तो नहिं सत पथ पावे ॥
वचन वंस औ नाद कडिहारा । इनसंग मिल तो होय उबारा ॥
छोडि अहंकार मान बढाई । सत्य शब्द जब हृदय धराई ॥
वचन वंशको अंश कहै हैं । तबै धर्मनि मोर मन भैहैं ॥
जात तजै और मोह न आवै । सोई अंस वंश कहलावै ॥
कुलकी दशा जानकर खोवे । निश्चय अंश वंश वह होवे ॥
तब तेही हम लेब उबारी । निश्चय कहहुँ नहिं संत लबारी ॥
यहि विश्वास धर्मनि मन राखो । विन विसवास वचन नहिं भाखो

गुरुमहिमा ।

विन विश्वास जीव नहिं तरई । गुरु प्रतीति विनु नरकहिं वरई ॥
गुरु सम और न दानी भाई । गुरु चरनन चित राखु समाई ॥

छंद ।

दानी और न दूसरा जग, गुरु मुक्तिदानीजानिया ॥
अधम चाल छुडायके गुरु, ज्ञान अंग लखानिया ॥
हंसहि भक्ति दिढावहीं दे, अंक वीरा नाम हो ॥
दुष्ट मित्र चिन्हायके, पहुँचावहीं निज ठाम हो ॥९०

सोरठा–गुरूपुरुष नहिं आन, निश्चयकै जो मानहीं॥
ताहिं मिलैं सहिदान, मिटै कालकलेश सब॥९३॥

सर्गुण भाव पेखु धर्मदासा। कस दृढ गह प्रतीत विश्वासा॥
कर्मी जीवन देखु विचारी। कस दृढ गहे प्रतीत सम्हारी॥
आपहि लै आवै नरमाटी। करता कहँ मूरति गढ ठाटी॥
तापर अच्छत पुहुप चढावे। प्रेम प्रतीति ध्यान मन लावे॥
करता कर थापे पुनि ताही। भंग प्रतीति होय नहिं जाही॥
जस धोखहु महँ प्रेम समावे। सोइ प्रेम सजीव बन आवे॥
सो जिव होय अमोल अपारा। साहिबको है हंस पियारा॥
उन जीवनको प्रेम बखानो। कैसे दृढ होय धोख लपटानो॥
गुरू नाम हम आप कहाया। गुरू पुरुष नहिं भिन्न बताया॥
अस जिव काल वस है रहई। दृढ प्रतीत कै गुरु नाहिं गहई॥
सब मूरति परतीत न आवे। शून्य ध्यान धोखे मन लावै॥
जो निश्चय है गुरु प्रन धरहीं। मुक्ति होय टारे नहिं टरहीं॥
ऐसे करी जो विश्वास दृढावै। गुरु तजि चित्त अनत नहिं लावै॥
यहि रहनीको हंस अमोला। प्रेम रंग जो रंगे चोला॥
प्रेम जानि हैं अमृतगिरा गुरु। अँचवतहोतखानिदुरमत दुरु॥
धर्मदास हिय देखु विचारी। गुरु प्रतीत दिढ गहो सम्हारी॥

छन्द।

अस कै प्रतीत दृढाय गुरुपद, नेह इस्थिर लाइये॥
गुरु ज्ञानदीपक बारनिजउर, मोहतिमिरनशाइये॥
गुरुपद पराग प्रतापतें अघ, पुंज निश्चय जावई॥
औरमध्ययुक्तिनतरनकी, विश्वास शब्द समावई॥१

सो०–यह भव अगम अथाह, नाव प्रेमदृढके गहे॥
लेह कृपा गुरु थाह, गुरुगिरा कडिहार मिले॥९४

धर्मदासवचन । गुरुशिष्यकी रहनी ।

धर्मदास विनती अनुसारे । तुम साहब हम दास तुम्हारे ॥
चूक जो कछु पूछौं गुरुराया । सो कहिये करिकै अब दाया ॥
गुरु शिषकी रहनी है जैसी । सो समुझाय कहो गुरु तैसी ॥

गुरुमहिमा कबीरवचन ।

सतगुरु कहै गुरु व्रतधारी । अगुन सगुनबिच गुरु आधारी ॥
गुरू बिना नहिं होय अचारा । गुरू विना नहिं होय भवपारा ॥
शिष्य सीपगुरु स्वाती जानो । गुरू पारस शिष लोह समानो ॥
गुरु मलयागिर शिष्य भुजंगा । गुरू परसि शीतल होय अंगा ॥
गुरु समुद्र है शिष्य तरंगा । गुरु दीपक है शिष्य पंतगा ॥
शिष्यचकोरगुरुकोशशिजानो । गुरुपदरविकमलंशिषविकसानो ।
यहि स्नेह शिष निश्चय लहई । गुरुपद परस दरश हिय गहई ॥
जब शिषयाविधिध्यानविशेखा । सोई शिष्य गुरूसम लेखा ॥
गुरू गुरुनमें भेद विचारा । गुरु गुरु कहै सकल संसारा ॥
गुरु सोई जिन शब्द लखाया । आवागमन रहित दिखलाया ॥
गुरु सजिवन शब्द लखावे । जाके बल हंसा घर जावे ॥
ता गुरुसों कछु अन्तर नाहीं । गुरु औ शिष्य मता एक आहीं ॥

छन्द ।

मन कर्म नाना भावना यह, जगतसबलपटानहो ॥
जीवयम भ्रमजाल डारेउ, उलटनिजनहिं जान हो ॥
गुरु बहुत हैं संसारमें सब, फँदे कृत्रिम जाल हो ॥
सतगुरु विना नहिं भ्रममिटे, बडा प्रबल काल करालहो९२
सो०–सतगुरुकी बलिहार, अजर सँदेशा जो कहै ॥
ताहि मिले होयन्यार, सतपुरुष जिव भेंटई ॥ ९५

निसदिन सुरत गुरू सो लावे । साधु संतके चितहि समावे ॥
जिनपर दाया सतगुरु करै । तिनका फांस करम सब जरे ॥
करनी करै औ सुरति लगावे । ताको लोक सतगुरु पहुँचावे ॥
सेवा करि मन रखे न आसा । ताका सतगुरु काटै फांसा ॥
गुरुचरणन जो राखे ध्याना । अमर लोक वह करत पयाना ॥
योगी योग साधना करई । विना गुरू सो भव नहिं तरई ॥
शिष्य जो गुरु आज्ञा धारी । गुरुकी कृपा होय भवपारी ॥
गुरु भगता जो जिव आही । साधु गुरू नहिं अन्तर ताही ॥
सांचा गुरू ताहि कर माने । साधु गुरू नहिं अन्तर आने ॥
जो स्वारथ पागे संसारी । नहिं गुरु शिष्य न साधु अचारी
तिनको काल फन्द तुम जानो । दूत अंश काल कर मानो ॥
तिनते होय जीवकी हानी । यह तो अहे धर्म सहिदानी ॥
जोई गुरू प्रेम गति जाने । सत्य शब्दको राह पिछाने ॥
परम पुरुषकी भक्ति दिढावे । सुरति निरति करतहँ पहुँचावे ॥
तासों प्रीति करै मन लाई । छोडै दुरमति औ चतुराई ॥
तबहीं निहसंशय घर पावै । भव तरिके जग बहुरि न आवै ॥

छन्द ।

सत नाम अमीअमोल अविचल, अंकबीरा पावई ॥
तजि काग चाल मरालमतिगहि, गुरुचरणलौलावई ॥
और पंथ कुमारग सकल बहु, सो नहीं मनलावई ॥
गुरु चरण प्रीतिसुपंथधर्मनि, हंसलोकसिधावई९३ ॥
सोरठा–गुरुपद कीजे नेह, कर्म भर्म जंजालतजि ॥
निज तन जाने खेह, गुरु मुखशब्दप्रतीतिकरि ॥९६

धर्मदासवचन ।

धर्मदास हिय बिच अति हरषे । गदगद गिरानयन जल बरषे ॥

ममहियतिमिर आहि अंधियारा । मिहर पतंग कीन्ह उजियारा ॥
मुनि धीरज धरि बोलविचारी । केहिविधिकरौंप्रभुस्तुतितुम्हारी
अब गुरु विनति सुनो हमारी । जीवन निरनय कहो विचारी॥
कौन जीव कहँ देहों पाना । समरथ कहो वचन सहिदाना॥

अधिकारी जीवनके लक्षण । सद्गुरुवचन ।

धर्मदास निःसंशय रहहू । मुक्ति सँदेशा जीवन कहहू ॥
देखहु जाहि दीन लौ लीना । भक्ति मुक्ति कह बहुत अधीना॥
दया शील क्षमा चित जाही । धर्मनि नाम पान दो ताही ॥
तासन पुरुष सँदेशा कहिहो । निसदिन नाम ध्यानदृढगहिहो
दयाहीन जो शब्द नहिं माने । काल दिशा हो बाद बखाने ॥
[1]'चञ्चल दृष्टि होय पुनि जाही । सत्य शब्द न ताहि समाही ॥
चिबुक बाहर दशन लिखाये । जानहु दूत भेष धरि आये ॥'
मध्य नेत्र जिहि तिल अनुमाना । निश्चय कालरूप तिहिं जाना ॥
ओछा शीस दीर्घ जिहि काया । ताके हृदय कपट रह छाया ॥
तेहि जनि देहु पुरुष सहिदानी । यह जिव करे पंथकी हानी ॥

काया कमल विचार । धर्मदासवचन ।

हे प्रभु जन्म सुफल मम कीन्हा । यमसों छोरि अपन करलीन्हा॥
जो सहस्र रसना मुख होई । तो तुव गुण वरणे नहिं कोई ॥
हे प्रभु हम बड भागी आहीं । निज सम भाग कहों मैं काहीं ॥
सोइ जीव बड भागी होई । जासु हृदय तव नाम समोई ॥
अब इक विनती सुनो हमारी । यहि तन निर्णय कहो विचारी॥
कौन देव कहुँ कहवाँ रहई । कहवाँ रहि कारज सो करई ॥
नाडी रोम रुधिर कत अहई । कौने मारग स्वासा बहई ॥
आँत पित्त औ फेफसा झोरी । साहब कहहु विचार बहोरी ॥

---

१ यह दोनों चौपाई किसी भी पुराने ग्रन्थमें नहीं हैं ।

जाहि ठाम है जासु अस्थाना । साहब बरनि कहो सहिदाना ॥
कौन कमल केता जप परगासा । रात दिवस लग केतिक स्वासा॥
कहवाँते शब्द उठि आवे । कहो कहवाँ वह जाइ समावे ॥
कोइ जीव झिलमिल कहँ देखा । सो साहिब मोहि कहो विवेखा ॥
कौन देवके दरशन पाई । तिहि अस्थान कहो समुझाई ॥

सद्गुरुवचन ।

धर्मनि सुनहु शरीर विचारा । पुरुष नाम कायाते न्यारा ॥
प्रथमहि मूल कमल दल चारी । तहँ रहु देव गणेश पसारी ॥
विद्या गुण दायक तेहि कहिये । षटशतअजपा ध्यानसो लहिये॥
मूल कमलके उर्द्ध अखारा । षट पखुरीको कमल बिचारा ॥
ब्रह्मा सावित्री तहँ सुर राजे । षटसहस्र अजपा तहँ गाजे ॥
पदुम अष्टदल नाभि अस्थाना । हरि लक्ष्मी तहँ बसहिं प्रधाना॥
जाय जहाँ षटसहस्र परमाना । गुरुगमते लखि परइ ठिकाना॥
ता ऊपर पंकज लखु दलद्वादस । रुद्र पारवती ताहि कमलबस ॥
षट सहस्र अजपा तहँ होई । गुरुगम ज्ञान ते देखु विलोई ॥
षोडस पत्र कमल जिव रहई । सहस एक अजपा तहँ चहई ॥
भवर गुफादल दोहु परमाना । तहवाँ मन राजाको थाना ॥
सहस एक अजपा तेहि ठाई । धरमदास परखो चित लाई ॥
सुरति कमल सतगुरुके बासा । तहँवा एतिक अजपा परकासा॥
एक सहस षटशत औ बीसा । परखहु धर्मनि हंसन ईसा ॥
दोइ दल ऊर्ध्व सुन्य अस्थाना । झिलमिलज्योति निरंजनजाना॥
धर्मदास सुनु शब्द सँदेशा । घट परचेका कहुँ उपदेशा ॥
अब पुनि सुनहु शरीर विचारा । एक नाम गहि धरहु करारा ॥
सबै कुम्भ तन रुधिर सँवारा । कोट रोम तन पृथ्वी सुधारा ॥
नाडी बहत्तर है परधाना । नौ पहँ तीन प्रधान सुजाना ॥
त्रय नाडी महँ एक अनूपा । सो ले रहे गहे सतरूपा ॥

जेतिक पत्र पदुम जो आही । उठे शब्द प्रगटे गुण ताही ॥
तहँ वाते पुनि शब्द उठायी । शून्य माहिं सो जाय समायी ॥
आंत इकईस हाथ परमाना । सवा हाथ झोरी अनुमाना ॥
सवा हाथ नभ फेरी कहिये । खिरकी सात गुफामों लहिये ॥

छन्द ।

पित्त अंगुली तीन जानो पांच अंगुलदिल कही ॥
सात अंगुल फेफसा है सिंधु सात तहाँ रही ॥
पवन धार निवार तनसो साधु योगी गम लहे ॥
यहिकर्मयोगकियेरहितनाही भगति बिनु जो इनबहे१४॥
सो०—ज्ञान योगसुखराशि, नाम लहे निजघर चले॥
अरिपरबलको नाशि,जीवनमुकता होय रहे॥१७॥

धर्मनि यह मनको व्यवहारा । गुरु गमते परखो मत सारा ॥
मनुआँ शून्य ज्योति दिखलावे । नाना भर्म मनहिं उपजावे ॥
निराकार मन उपजा भाई । मनकी मांड तिहूँ पुर छाई ॥
अनेक ठाव जिवमाथ नवावे । आप न चीन्हे धोखा धावे ॥
यह सब देखु निरंजन आसा । सत्य नाम बिन मिटे न फांसा॥
जैसे नट मर्कट दुख देई । नाना नाच नचाव न लेई ॥
याहिविधि यह मन जीव नचावे । कर्म भर्म भव फंद दिढावे ॥
सत्य शब्द मन देह उछेदी । मन चीन्हे कोइ बिरले भेदी ॥
पुरुष सँदेश सुनत मन दहई । आपनि दिशा जीव ले बहई ॥
सुनु धर्मनि मनके व्यवहारा । मनको चीन्हि गहे पदसारा ॥
या तन भीतर और न कोई । मन अरु जीव रहे घर दोई ॥
पांच पचीस तीन मन झेला । ये सब आहि निरंजन चेला ॥
पुरुष अंशजिव आन समाना । सुधि भूली निजघर सहिदाना॥
इन सब मिलिके जीवहि घेरा । बिनु परिचय जिव यमकोचेरा॥

भर्म वशी जिव आप न जाना । जैसे सुवना नलनी फँदाना ॥
जिमि केहरि छाया जल देखे । निज छाया दुतिया वह लेखे ॥
धाय परे जल प्राण गँवावे । अस जिव धोखा चीन्ह न पावे॥
कांच महल जिमि भूके स्वाना । निज अकार दुतिया करजाना॥
दुतिया अवाज उठे तहँ भाई । भूकत स्वान देहु लखि धाई ॥
ऐसे यम जिव धोख लगाई । ग्रासे काल तबै पछताई ॥
सतगुरु शब्द प्रीति नहिं करई । ताते जीव नष्ट सब परई ॥
किरतम नाम निरंजन साखा । आदिनाम सतगुरु अभिलाखा॥
सतगुरु चरण प्रतीत न करई । सतगुरु मिल निजघर संचरई॥
धर्मदास जिव भये बिगाना । धोखे सुधा गरल लपटाना ॥
अस कै फन्द रच्यो धर्मराई । धोखा वासि जिव परे भुलाई ॥
और सुनो मन कर्म पसारा । चीन्हि दुष्ट जिव होय नियारा ॥

छंद ।

चीन्ह ह्वै रहे भिन्न धर्मनि, शब्द मम दीपक लहे ॥
यहभिन्न भावदिखाय तोकहँ, देख जिव यमनागहे॥
जौलों गढपति जगे नाहीं, संधि पावत तस्करा ॥
रहत गाफिल भर्मके वशि, तहाँ तस्कर संचरा९९॥
सो०–जाग्रत कला अनूप, ताहि काल पावे नहीं ॥
भर्म तिमिर अँधकूप, छल यमरा जीवनग्रसे९८॥

मनके पाप पुण्यका विचार ।

मनको अंग सुनो जन सूरा । चोर साहु परखो गुरु पूरा ॥
मनही आहि काल कराला । जीव नचावे करे बिहाला ॥
सुन्दर नारि दृष्टि जब आवे । मन उमगे तन काम सतावे ॥
भये जोर मन ले तेहि धावे । ज्ञान हीन जिव भटका खावे ॥
नारि भोग इन्द्री रस लीन्हा । ताकर पाप जीव सिर दीन्हा ॥

द्रव्य पराइ देख मन हरषा । कहे लेब अस व्यापेउ तिरषा ॥
द्रव्य पराइ आन सो आने । ताके पाप जीव लै साने ॥
कर्म कमावे या मन बोरा । शासत सहे जीव मति भोरा ॥
पर निंदा पर द्रव्य गिरासी । सो सब देखहु मनकर फांसी ॥
संत द्रोह अरु गुरुकी निन्दा । यह मन कर्म काल मति फंदा ॥
गृही होय पर नारिन जोवे । यह मन अंध कर्म विष बोवे ॥
जीव घात मन उमँग करावे । तासु पाप जिव नर्क भुगावे ॥
तीरथ व्रत अरु देवी देवा । यह मन धोख लगावे सेवा ॥
दाग द्वारका मनहिं दिवावे । दाग दिवाय मनहिं बिगरावे ॥
एक जनम राजाको होई । बहुरि नरकमें भुगते सोई ॥
बहुरि होय सांडकर औतारा । बहु गाइनको होय भरतारा ॥
कर्म योग है मनको फंदा । होय निहकर्म मिटै दुख द्वंदा ॥

छंद ।

सुनो धर्मनि मन भावना कहँलों कहों निरबारके ॥
त्रय देव तेतिस कोटि फन्दे शेष सुर रहे हारके ॥
सतगुरुविना कोइ लखनपावे पडे कृत्रिम जालहो ॥
विरलासत बिवेककरी चीन्हिछोडयोकालहो ॥९६॥
सो०–सतगुरुके विश्वास, जन्ममरण भय नाशई ॥
धर्मनि सो निज दास, सत्य नाम जो दृढ गहे ॥९९

निरञ्जन चरित्र ।

धर्म चरित्र सुनो धर्मदासा । छल बुधिकर जीवनतिनफांसा ॥
धारि औतार कथा तिन गीता । अंध जीव कोइ गम्य न कीता ॥
अर्जुन सेवक अति लौना । तासों ज्ञान कह्यो सभ भीना ॥
ज्ञान प्रवृत्ति निवृत्ति सुनावा । तज निवृत्ति परवृत्ति दृढावा ॥
दया क्षमा प्रथमैं तिन भाषा । ज्ञान विज्ञान कर्म अभिलाषा ॥
अर्जुन सत्य भक्ति लवलीना । कृष्ण देवसों बहुत अधीना ॥

प्रथम कृष्ण दीन्हीं तेहि आसा। पीछे दीन्ह नर्कमें वासा॥
ज्ञान योग तजि कर्म दृढावा। कर्मवशी अर्जुन दुख पावा॥
मीठ दिखाय दियो विष पाछे। जिव बटपार संत छवि काछे॥

छंद।

कहँलों कहों छलबुद्धि यमकेसंतकोइकोइ परखिहैं॥
ज्ञान मारग दृढ गहे तब सत्य मारग सूझिहैं॥
चीन्हि हैं यम छलमता तब चीन्हिन्यारा तो रहे॥
सतगुरुशरणयमत्रासनाशेअटलसुख आनंद लहे॥९७॥

सोरठा–हंसराजधर्मदास, तुम सतगुरु महिमालहो॥
करहु पंथपरकास, अजरसँदेशातोहि दियो॥१००

मुक्तिमारग-पन्थ सहिदानी वर्णन। धर्मदासवचन।

हे प्रभु तुम सतपुरुष दयाला। वचन तुम्हारा अमित रसाला॥
मनकी रहन जानि हम पावा। धन सतगुरु तुम आन जगावा॥
अब भाषो प्रभु आपन डोरी। केहिरहनी जम तिनका तोरी॥

सद्गुरुवचन।

धर्मदास सुनु पुरुष प्रभाऊ। पुरुषडोरि तोहि अबहिचिन्हाऊ
पुरुष शक्ति जब आय समाई। तब नहिं रोके काल कसाई॥
पुरुष सक्ति सुत षोडश आहीं। सक्ति संग जिवलोकहि जाहीं॥
बिना सक्ति नहिं पंथ चलाई। सक्तिहीन जिव भौ अरुझाई॥
ज्ञान विवेक सत्य संतोषा। प्रेम भाव धीरज निरधोषा॥
दया क्षमा रु शील निःकरमा। त्याग बैराग शांतिनिजधरमा॥
करुणा करि निज जीव उबारै। मित्रसमान सबको चित धारै॥
इन मिलि लहे लोक विश्रामा। चले पंथ निरखी जेहि धामा॥
गुरु सेवा गुरुपद परतीती। जेहि उरबसे चले जम जीती॥
आतम पूजा संत समागम। महिमा संत कहइ निगमागम॥

गुरु सम संत भक्ति औराधे । ममता मोह क्रोध गुण साधे ॥
अमृत वृक्ष पुरुष सतनामा । पुरुष सखा सत अविचल धामा
यह सब डोरी पुरुषको आही । सत्य नाम गहि सत्य पुरजाही ॥
चक्षु हीन घर जाय न प्रानी । यह सब कहेउ पंथ सहिदानी॥
पुरुप नाम चक्षु परवाना । लहै जीव तब जाय ठिकाना ॥
दिढ परतीति गहे गुरु चरना । मिटे तासु जनम औ मरना ॥

पंथकी रहनी । धर्मदासवचन ।

हे प्रभु तुम सतपुरुष दयाला । वचन तुम्हार आमान रिसाला॥
अब बरनो प्रभु पंथ निजदासा । विरक्त गिरही कहु रहनि परगासा
कौन रहनि वैराग कमावे । कौन रहनि गेही गुन गावे ॥

सद्गुरुवचन ।

धर्मदास सुन शब्द सँदेशा । जीवन कहौ मुक्ति उपदेशा ॥
वैरागी वैराग दिढै हो । गेही भाव भक्ति समझै हो ॥

वैरागी विरक्तलक्षण ।

वैरागी अस चाल बताऊ । तजे अखेज तब हंस कहाऊ ॥
प्रेम भक्ति आने उरमाहीं । द्रोह घात दिग चितवे नाहीं ॥
जीव दया राखे हिय माहीं । मन वच कर्म घात कोउ नाहीं॥
लेवे पान मुक्तिकी छापा । जाते मीटे कर्म भ्रम आपा ॥
हंस दशा धरि पंथ चलावे । श्रवणी कंठी तिलक लगावे ॥
रूखा फीका करे अहारा । निसदिन सुमिरे नाम हमारा ॥
औ पुनि लेह तुम्हारो नामा । पठवों ताहि अमरपुर धामा ॥
कर्म भर्म सब देइ बहायी । सार शब्दमें रहे समायी ॥

१ शरीरके पोषणमें जिनका काम नहीं पडता है उसे अखज अर्थात् उसको अभक्ष कहते हैं, जैसे तम्बाकू गांजा भंग शराव मांस तथा लहसुन प्याज इत्यादि तमो गुणी पदार्थ जिससे बुद्धि भ्रष्ट होजाती है । इसी लिये सद्गुरुका वचन है। "जैसा अन्न जो खाइये, तैसी उपजे बुद्धि । जाको जैसा गुरु मिला, ताको तैसी शुद्धि॥"

नारि न परसे बिन्द न खोवे । क्रोध कपट सब दिलसे धोवे ॥
नरक खान नारी कहँ त्यागे । इक चित होय शब्द गुरु लागे॥
क्रोध कपट सब देइ बहाई । क्षमा गंगामें पैठि नहाई ॥
विहँसत बदन भजनको आगर । शीतल दशा प्रेम सुख सागर॥
रहै अजांच न जांचे काहू । का परजा का राजा साहू ॥
पच्छिम लहर जगावे जानी । अजपा जाप भजन धुन ठानी॥
रहिता रहे वहै नहिं कबहीं । सो वैरागी पावै हमहीं ॥
हमहिं मिले हमहीं अस होई । दुबिधा भाव मिटावे सोई ॥
गुरु चरणनमें रहे समाई । तजि भ्रम और कपट चतुराई॥
गुरु आज्ञा जो निरखत रहई । ताकर खूट काल नहिं गहई ॥
गुरु प्रतीति दृढके चित राखे । मोहि समान गुरू कहँ भाखे ॥
गुरु सेवामें सब फल आवे । गुरू विमुख नर पार न पावे ॥
जैसे चन्द्र कुमोदिनि रीती । गहे शिष्य अस गुरु परतीती॥
ऐसी रहनि रहे वैरागी । जेहि गुरु प्रीति सोइ अनुरागी॥

गृहीलक्षण ।

गेही भक्ति सुनहु धर्मदासा । जेहि लै गेही परै न फांसा ॥
काग दशा सब देइ बहाई । जीव दया दिल रखे समाई ॥
मीन मास मद निकट न जाई । अंकुर भक्ष सो सदा कराई ॥
लेवे पान मुक्ति सहिदानी । जाते काल न रोके आनी ॥
कण्ठी तिलक साधुको बाना । गुरुमुख शब्द प्रीति उर आना॥

---

१ प्रायःलोग अंकुरजकी आड लेकर तम्बाकू गांजा भंग चरस आदि तमोगुणी नशैले पदार्थोंको भक्षण करते जाते हैं और जब कभी उन्हें समझाओतो "अंकुरज भच्छे सो मानवा" कहकर कन्नी काट जाते हैं और यह नहीं समझते कि, "फेर शरा नहीं अंगम, नहीं इन्द्रिनकी माहिं । फेर परा कछु बुझयां, सो निरुबारेउ नाहिं ॥" जो सद्गुरुने कहा है सो इन पदार्थोंके सेवनसे बुद्धि नाश होकर सत्यकी सूझ होना अत्यन्त कठिन है विशेष देखो "कबीरधर्म दर्शनमें ।"

प्रेम भाव संतनसों राखे । सेवा सत्य भक्ति चित भाखे
गुरु सेवा पर सर्वस वारे । सेवा भक्ति गुरूकी धारे ॥
सुमिरण जो गुरु देइ दृढाई । मन वच करमसों सुमरे भाई ॥

छंद ।

पुरुष डोरी सुनहु धर्मनि जाहि ते गेही तरे ॥
चक्षु बिन घर जाय नाहीं कौन विधि ताकरकरे ॥
वंश अंश है चक्षु धर्मनि जीव सब चेतावहू ॥
विश्वास कर मम वचनको तबजरामरण नशावहू ९८
सो०–शब्द गहे परतीत, पुरुषनामअहनिशिजपे ॥
चलेसो भवजलजीति,अंक नाम जिन पाइया १०१

आरतीमाहात्म्य ।

गेही भक्त आरती आने । प्रति अमावस आरती ठाने ॥
अमावस आरति नहिं होई । ताहि भवन रह काल समोई ॥
पाख दिवस नहिं होवे साजू । प्रति पूनो कर आरति काजू ॥
पूनो पान लेइ धर्मदासा । पावे शिष्य होय सुख वासा ॥
चन्द्र कला षोडश पुर आवे । ताहि समय परवाना पावे ॥
यथा शक्ति सेवा सहिदाना । हंसा पहुँचे लोक ठिकाना ॥

धर्मदासवचन ।

धर्मदास विनती अनुसारा । अस भाखो जिव होय उबारा ॥
कलऊ जीव रंक बहु होई । ताकर निर्णय भाषो सोई ॥
सकलो जीव तुम्हारे देवा । कैस कहो करें सब सेवा ॥
सब जिव आदि पुरुषके अंशा । भाषहु वचन मिटे जिव संशा॥

सद्गुरुवचन ।

धर्मनि सुनो रंक परभाऊ । छठे मास आरति लैलाऊ ॥
छठे मास नहिं आरति भेवा । वर्ष माहिं गुरु चौका सेवा ॥

सम्वत माहि चूक जो जायी। तबै संत साकट ठहरायी॥
सम्वत माहि आरती करई। ताकर जीव धोख ना परई॥
नाम कबीर जपे लौ लाई। तुम्हरो नाम कहे गुहराई॥
करत अखण्डित गुरुपद गहई। गुरुपद प्रीति दोइ निस्तरई॥
ऐसी रहनि गेहि जो धरि हैं। गुरू प्रताप दोइ निस्तरिहैं॥
ऐसो धारण गेहि जो करहैं। गुरू प्रताप लोक संचरहैं॥

छंद।

वैरागिगेहिदोउकहँ धर्मनि रहनि गहनि चितायहू॥
निज निज रहनी दोउ तरि हैं शब्द अंग सुनायहू॥
निपट अति बिकराल अगम अथाहभवसागर अहै॥
नाम नौकागहेदृढकरि छोर¹ भवनिधि तब लहै९९॥
सोरठा—केवटते कर प्रीति, जो भवपार उतारई॥
चले सो भव जलजीति, जबसतगुरुकेवट मिले१०२

असावधानीका फल।

जब लग तनमें हंस रहाई। निरखे शब्द पन्थ चले भाई॥
जैसे शूर खेत रह मांडी। जो भागे तो होवे भांडी॥
सन्त खेत गुरु शब्द अमोला। यम तेहि गहे जीव जो डोला॥
गुरू विमुख जिव कतहुँ न बाचै। अगिन कुंडमहँ जरि बरि नाचै॥
सासति होय अनेकन भाई। जनम जनम सो नर्कहि जाई॥
कोटि जन्म विषधर सो पावे। विष ज्वालासहि जन्म गमावे॥
विष्टा माहीं क्रिमि तनु धरयी। कोटि जन्मलो नर्कहिं परयी॥
कहा कहों सासति जिवकेरा। गुरुमुख शब्द गहो दिढ बेरा॥
गुरु दयाल तो पुरुष दयाला। जेहि गुरुव्रत छुए नहिं काला॥
जीव कहो परमारथ जानी। जो गुरु भक्त ताहि नहिं हानी॥

---

१ किनारा।

कोटिक योग अराधे प्रानी । सतगुरु विना जीवकी हानी ॥
सतगुरु अगम गम्य बतलावे । जाकी गम्य वेद नाहिं पावे ॥
वेद जाहि ते ताहि बखाने । सत्य पुरुषका मर्म न जाने ॥
कोई इक हंस विवेकी होवे । सत्य शब्द जो गही बिलोवे ॥
कोटि माहिं कोइ संत विवेकी । जो मम वानी गहे परेखी ॥
फंदे सबै निरञ्जन फन्दा । उलटि न निज घर चीन्हे मदा ॥

सावधानी–कोयलका दृष्टान्त ।

सुनो सुभाव कुइल सुत केरा । समुझि तासु गुण करो निवेरा॥
कोइल चित चातुर मृदुवानी । वैरी तासु काग अघखानी ॥
ताके गृह तिन अण्डा धरिया । दुष्ट मित्र इक समचित करिया॥
सखा जानि कागा तेहि पाला । जोगवे अण्ड काग बुधिकाला ॥
पुष्ट भये अण्डा विहराना । कुछ दिन गत भो चक्षु सुजाना॥
पक्ष पुष्ट पुन ताकर भयेऊ । कोयल शब्द सुनावन लयेऊ ॥
सुनत शब्द कोइल सुत जागा । निजकुल वचन ताहि प्रियलागा
काग जाय पुनि जबहिं चरावे । तब कोइल तिहि शब्द सुनावे॥
निज अंकुर कोइलसुत जहिया । वायस दिशाहिये नाहिं रहिया॥
एक दिवस वायस दिखलायी । कोइल सुत उड चला परायी॥
निज बोली बोलत चलुबाला । धाये वायस विकल विहाला ॥
धावत थकित भई नहिं पाई । बहुरि मुरछित भवन फिरिआई
कोयल सुत मिलिया परिवारा । वायस काग मुरछि झखमारा ॥

छन्द ।

निजबचनबोलतसुतचला तबधायमिलापरिवारही ॥
धाय वायस विकल है भयो थकितजबनहिंपावही॥
काग मूर्छित भवन आयो मनहि मन पछतायक ॥
कोइलसुत मिल्योतातअपने कागरह्योझखमारिके१००॥

सो०-जसकोयल सुतहोय, यहिविधिमोकहँजिवमिले॥
निज घर पहुँचे सोय, वंश इकोतर तारऊ॥ १०३
कोयल सुन जस शूरा होई। यहि विधि धाय मिलै मुहिं कोई
निज घर सुरति करै जो हंसा। तारों ताहि एकोत्तर बंसा॥

हंस लक्षण।

काग गवन बुधि छाँडहु भाई। हंस दशा धरि लोकहि जाई॥
बोले काग न काहू भावे। कोइल वचन सबै सुख पावे॥
अस हंसा बोले बिलछानी। प्रेम सुधा सम गहु गुरुबानी॥
काहू कुटिल वचननहिं कहिये। शीतल दशा आप गहि रहिये॥
जो कोइक्रोध अनल समआवे। आप अम्बु ह्वै तपन बुझावे॥
ज्ञान अज्ञानकी यहि सहिदानी। कुटिल कठोर कुमति अज्ञानी॥
प्रेम भाव शीतल गुरु ज्ञानी। सत्य विवेक सन्तोप समानी॥

ज्ञानीका लक्षण।

ज्ञानी सोइ जो कुबुद्धि नशावे। मनका अंग चीन्ह बिसरावे॥
ज्ञानी होय कहै कटु बानी। सो ज्ञानी अज्ञान बखानी॥
शूर काछ काछे जो प्रानी। सन्मुख मरे सुयश तब जानी॥
तेहिविधिज्ञान विचारमनआनी। ता कहँ कहू ज्ञान सहिदानी॥
मूरख हिये कर्म नहिं सूझे। सार शब्द नहि गुरु कहँ बूझे॥
चक्षु हीन पग विष्टा परई। हांसी तासु कोइ नहिं करई॥
दृगन अछत पग परै कुठांई। ता कहँ दोष देइ नर आई॥
धर्मदास अस ज्ञान अज्ञाना। परखे सत्य शब्द गुरु ध्याना॥
सर्व महँ है आप निवासा। कहीं गुप्त कहीं प्रगट प्रगासा॥
सबसे नमन अंश निजजानी। गही रहै गुरुभक्ति निशानी॥

छंद।

रंग काचा कारणें प्रहलाद, कस दृढ है रह्यो॥

यद्यपि तेहि बहुकष्ट दीन्हों, अडिग हो हरिगुणगह्यो ॥
अस धरन धरि सतगुरु गहे, तब हंस होय अमोलहो ॥
अमरलोक निवासपावे, अटलहोयअडोलहो १०१ ॥

परमार्थवर्णन ।

सोरठा–भर्म तजे यम जाल, सत्त नाम लौलावई ॥
चले सत्तको चाल, परमारथ चित द गहे १०४

परम परमार्थी गऊका दृष्टान्त ।

गऊको जानु परमारथ खानी । गऊ चाल गुण परखहु ज्ञानी ॥
आपन चरे तृण उद्याना । अँचवे जल दे क्षीर निदाना ॥
तासु क्षीर घृत देव अघाहीं । गौ सुत परके पोषक आहीं ॥
विष्ठा तासु काज नर आवे । नर अघ कर्मी जन्म गमावे ॥
ठीका पुरे तब गौ तन नासा । नर राक्षस तनले तेहि ग्रासा ॥
चाम तासु तन अति सुख दाई । एतिक गुण इक गो तन भाई ॥

परमार्थी सन्त लक्षण ।

गौ सम सन्त गहे यह बानी । तो नहिं काल करे जिव हानी ॥
नरतन लहि अस बुद्धी होई । सतगुरु मिले अमर है सोई ॥
सुन धर्मनि परमारथ बाना । परमारथते होय न हानी ॥
पद परमारथ सन्त अधारा । गुरुगम लेइ सो उतरे पारा ॥
सत्य शब्दको परिचय पावे । परमारथ पद लोक सिधावे ॥
सेवा करे बिसारे आपा । आपा थाप अधिक संतापा ॥
यह नर अस चातुर बुधि माना । गुन शुभ कम कहे हम ठाना ॥
ऊँच क्रिया आपन सिर लीन्हा । औगुण करे कहे हरि कीन्हा ॥
ताते होय शुभकर्म विनाशा । धर्मदास पद गहो निराशा ॥
आशा एक नामकी राखे । निज शुभ कर्म प्रगट नहिं भाखे

गुरुपद रहे सदा लौ लीना । जैसे जलहि न बिसरत मीना ॥
गुरुके शब्द सदा लौ लावे । सत्य नाम निसदिन गुण गावे ॥
जैसे जलहि बिसरे मीना । ऐसे शब्द गहे परवीना ॥
पुरुष नामको अस परभाऊ । हंसा बहुरि न जगमहँ आऊ ॥
निश्चय जाय पुरुषके पासा । कूर्म कला परखहु धर्मदासा ॥

छन्द ।

जिमिकमठबालस्वभायतिमि, मम हंस निजघरधावई ॥
यमदूत हो बलहीन देखत, हंस निकट न आवई ॥
हंस निर्भय निडर गाजइ, सत्य नाम उच्चारई ॥
हंस मिलपरिवार निज,यमदूत सब झख मारई १०२

सो०–आनंदधाम अमोल, हँसतहांसुखविलसहीं ॥
हंसहिंहंस कलोल, पुरुष कान्ति छबि निरखहीं १०५

ग्रन्थकी समाप्ति । छन्द ।

अनुरागसागरग्रन्थकथितोहि, अगमगम्यलखाइया
पुरुषलीला कालको छल, सब बरणि सुनाइया ॥
रहनि गहनि विवेक बानी, जौहरी जन बूझि हैं ॥
परखि वानी जो गहे, तेहि अगममारगसूझि हैं १०३

ग्रन्थका सार निवाड ।

सो०–सतगुरुपद परतीति, निश्चल नामसु भक्तिदृढ ॥
संतसतीकी रीति, पिय कारणनिजतन दहै ॥ १०६ ॥
सतगुरु पीय अमान, अजर अमर विनशै नहीं ॥
कह्योशब्द परमान, गहे अमर सो अमर हो १०७ ॥

संत धरे तिहि आस, गहे जीव अमरहिं तहाँ ॥
चितचेतो धर्मदास, सतगुरु चरणनलीनरहु॥ १०८॥
मन अलि कमल बसाव, सतगुरु पदपंकज रुचिर॥
गुरु चरणन चितलाव, इस्थिरघर तबहींमिलै १०९ ॥
शब्द सुरतिका करु मेल, शब्द मिले सतपुरचले ॥
बुन्द सिन्धुका खेल, मिले तो दूजा को कहे ॥ ११०
शब्द सुरतिका खेल, सतगुरु मिलै लखावई ॥
सिन्धु बुन्दको मेल, मिलै तो दूजा को कहै १११॥
मनकी दशा बिहाय, गुरु मारग निरखत चले ॥
हंस लोक कहँ जाय, सुखसागर सुखसो लहै॥ ११२
बुंद जीव अनुमान, सिंधु नाम सतगुरु सही ॥
कहे कबीर प्रमान, धरमदास तुम बूझहू ॥ ११३ ॥

इतिश्री भूतपूर्व कबीर नगरास्थित-रसीदपुर शिवहरवाले वंशप्रतापी महंत स्वामी श्रीयुगलानन्द विहारी हाल कबीराश्रम (खरसिया) निवासी कबीराश्रमाचार्य परमार्थी वैद्य आत्मनिष्ठ भारत पथिक कबीरपंथी ग्रन्थोंके एकमात्र जीर्णोद्धारक स्वामी श्रीयुगलानन्द विहारी द्वारा संगृहीत अनुरागसागर समाप्त

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस,
कल्याण-बम्बई.

खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस,
खेतवाडी-बम्बई.